हिन्दी साहित्य का इतिहास 1942 के बाद

Bachelor of Arts Hindi Language and Literature

B21HD03DC

Self
Learning
Material

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

The State University for Education, Training and Research in Blended Format, Kerala

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Vision

To increase access of potential learners of all categories to higher education, research and training, and ensure equity through delivery of high quality processes and outcomes fostering inclusive educational empowerment for social advancement.

Mission

To be benchmarked as a model for conservation and dissemination of knowledge and skill on blended and virtual mode in education, training and research for normal, continuing, and adult learners.

Pathway

Access and Quality define Equity.

हिन्दी साहित्य का इतिहास 1942 के बाद

Course Code: B21HD03DC

Semester -III

Bachelor of Arts
Hindi Language and Literature
Self Learning Material

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

The State University for Education, Training and Research in Blended Format, Kerala

Course Code: B21HD03DC
हिन्दी साहित्य का इतिहास 1942 के बाद
Semester -III

SREENARAYANAGURU
OPEN UNIVERSITY

All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from Sreenarayanaguru Open University. Printed and published on behalf of Sreenarayanaguru Open University by Registrar, SGOU, Kollam.

www.sgou.ac.in

DOCUMENTATION

Academic Committee

Dr. C. Balasubramanian (Chairman),
Dr. Abdul Jabbar M.
Dr. Anish Cyriac
Dr. Antony Oliver
Dr. N. Shaji
Dr. Rajan T.K.
Dr. Roshni R.
Dr. Sreedevi
Dr. Suma S.
Dr. Sumith P.V.
John Panicker

Development of the content

Dr. Lembodharan Pillai B.

Review

Content : Dr. Shaji N.
Format : Dr. I.G. Shibi
Linguistics : Dr. Jesna Rehim

Edit

Dr. Shaji N.

Scrutiny

Dr. Sophiya Rajan, Dr. Karthika M.S., Dr. Indu G. Das, Dr. Sudha T., Krishnapreethi A.R.

Co-ordination

Dr. N.E. Rajeev, Dr. I.G. Shibi and Team SLM

Design Control

Azeem Babu T.A.

Production

August 2023

Copyright

© Sreenarayanaguru Open University 2023

YouTube

MESSAGE FROM VICE CHANCELLOR

Dear

I greet all of you with deep delight and great excitement. I welcome you to the Sreenarayanaguru Open University.

Sreenarayanaguru Open University was established in September 2020 as a state initiative for fostering higher education in open and distance mode. We shaped our dreams through a pathway defined by a dictum 'access and quality define equity'. It provides all reasons to us for the celebration of quality in the process of education. I am overwhelmed to let you know that we have resolved not to become ourselves a reason or cause a reason for the dissemination of inferior education. It sets the pace as well as the destination. The name of the University centres around the aura of Sreenarayanaguru, the great renaissance thinker of modern India. His name is a reminder for us to ensure quality in the delivery of all academic endeavours.

Sreenarayanaguru Open University rests on the practical framework of the popularly known "blended format". Learner on distance mode obviously has limitations in getting exposed to the full potential of classroom learning experience. Our pedagogical basket has three entities viz Self Learning Material, Classroom Counselling and Virtual modes. This combination is expected to provide high voltage in learning as well as teaching experiences. Care has been taken to ensure quality endeavours across all the entities.

The University is committed to provide you stimulating learning experience. The UG programme in Hindi Language and Literature is framed on the format generally deployed by the quality universities in the country. Being a grammar spoken across the country, the pedagogy calls for special attention to the language and comprehension. The University addressed this through an integrated curriculum mapping between the linguistic and literary. The proportion gets endorsed on the basis of the priorities of the learner. The SLM and the virtual modules cater to these requirements. We assure you that the university student support services will closely stay with you for the redressal of your grievances during your studentship.

Feel free to write to us about anything that you feel relevant regarding the academic programme.

Wish you the best.

Regards,
Dr. P.M. Mubarak Pasha 01.08.2023

Contents

BLOCK - 01 **प्रयोगवाद और नयी कविता** 01

इकाई 1 प्रयोगवादी काव्य का उदय-कारण, परिस्थितियाँ, प्रमुख प्रवृत्तियाँ 02

इकाई 2 तारसप्तक का प्रकाशन और प्रमुख कवि 06

इकाई 3 नयी कविता, उद्‌भव और विकास 10

इकाई 4 नयी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ 20

इकाई 5 नयी कविता के प्रमुख कवि- अज्ञेय, मुक्तिबोध, केदारनाथ अग्रवाल, शिव मंगल सिंह सुमन, केदारनाथ सिंह, शमशेर बहादुर सिंह, कीर्ति चौधरी, धर्मवीर भारती, नरेश मेहत्ता, भवानी प्रसाद मिश्र, कुन्वर नारायण आदि- सामान्य परिचय 25

BLOCK - 02 **साठोत्तरी और समकालीन कविता** 33

इकाई 1 साठोत्तरी कविता- उदय के कारण, परिस्थितियाँ और प्रमुख प्रवृत्तियाँ 34

इकाई 2 प्रमुख साठोत्तरी कवि- धूमिल, नागार्जुन, दूधनाथ सिंह, श्रीकांत वर्मा आदि- सामान्य परिचय 40

इकाई 3 समकालीन कविता, परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ, प्रमुख कविता आन्दोलन- अकविता, हाईकू आदि 52

इकाई 4 समकालीन कविता के प्रमुख कवि- अरुण कमल, अशोक वाजपेयी, राजकमल चौधरी, अनामिका, लीलाधर जगूडी, उदय प्रकाश, आलोक धन्वा, कुमार अम्बुज, ज्ञानेन्द्रपति (सामान्य परिचय) 57

BLOCK - 03 **हिन्दी गद्य साहित्य (1942 के बाद)** 68

इकाई 1 **1942** के बाद हिन्दी गद्य का विकास, परिस्थितियाँ एवं प्रवृत्तियाँ 69

इकाई 2 **1942** के बाद के प्रमुख गद्यकार 73

BLOCK - 04 **हिन्दी कथा साहित्य, (1942 के बाद)** 79

इकाई 1 **1942** के बाद का हिन्दी उपन्यास साहित्य और उसका विकास 80

इकाई 2 प्रमुख उपन्यासकारः अज्ञेय, जैनेन्द्र, यशपाल, भीष्म साहनी, फणीश्वर नाथ रेणु, इलाचंद्र जोशी, उपेन्द्र नाथ अश्क, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, उदयप्रकाश आदि 84

इकाई 3 **1942** के बाद का हिन्दी कहानी साहित्य, प्रमुख कहानी आन्दोलन, अकहानी, सचेतन कहानी, सहज कहानी, समांतर कहानी, सक्रिय कहानी, जनवादी कहानी और प्रमुख कहानीकार- अज्ञेय, जैनेन्द्र, अमरकांत, यशपाल, महीप सिंह, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव आदि (सामान्य परिचय) 90

इकाई 4 हिन्दी के महिला कथाकारः- मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, कृष्णा अग्निहोत्री, उषाप्रियंवदा, चित्रा मुद्‌गल, नासिरा शर्मा, मधु कांकरिया, अनामिका, अलका सरावगी, मृदुला गर्ग, ममता कालिया, क्षमा शर्मा, मैत्रेयी पुष्पा (सामान्य परिचय) 97

BLOCK - 05 **नाटक व एकांकी साहित्य -1942 के बाद** 102

इकाई 1 **1942 के बाद के हिन्दी नाटक का विकास** 103

इकाई 1 प्रमुख नाटककार मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, जगदीश चन्द्र माथुर, स्वदेश दीपक, प्रताप सहगल, मोहनदास नैमिशराय-(सामान्य परिचय) 107

इकाई 2 **1942 के बाद के एकांकी साहित्य का विकास** 114

इकाई 3 हिन्दी के प्रमुख एकांकीकारः रामकुमार वर्मा, उदयशंकर भट्ट, सेठ गोविन्ददास आदि-(सामान्य परिचय) 118

BLOCK - 06 **हिन्दी निबंध तथा अन्य विधाएँ (1942 के बाद)** 124

इकाई 1 **1942 के बाद के निबंध साहित्य का विकास** 125

इकाई 2 प्रमुख निबंधकार 129

इकाई 3 अन्य गद्य विधाओं का विकास (संस्मरण, रेखाचित्र, यात्रावृत्त, जीवनी, आत्मकथा, रिपोर्ताज) 136

BLOCK - 01

प्रयोगवाद और नयी कविता

इकाई 1

प्रयोगवादी काव्य का उदय-कारण, परिस्थितियाँ, प्रमुख प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- आधुनिक हिन्दी कविता के बारे में सामान्य परिचय प्राप्त होता है
- प्रयोगवाद और समकालीन कविता का परिचय प्राप्त होता है
- प्रयोगवाद की प्रवृत्तियों के बारे में समझता है
- प्रयोगवाद की परिस्थितियाँ समझता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

प्रयोगवाद का आरंभ सन् 1943 में तार सप्तक से हुई है। प्रयोगवाद के प्रवर्तक सत्यान्वेषी है। प्रयोगवाद के कवियों ने शब्द-प्रयोग द्वारा सहज संवाद पद्धति रचना में किया। प्रयोगवाद के कवियों ने सहज और यथार्थ का वर्णन किया है। प्रयोगवाद में प्रतीकों एवं बिंबों का अधिक उपयोग हुआ है।

Key Themes /मुख्य प्रसंग

- प्रयोग शब्द का सामान्य अर्थ है- नई दिशा में अन्वेषण का प्रयास।
- प्रयोगवाद अंग्रेजी के Experimentalism है।
- प्रयोगवाद के संस्थापक अज्ञेय है।
- नये बोध, संवेदनाएँ और शिल्पगत चमत्कार के कवि प्रयोगवाद कवि कहने लगे।
- प्रयोगवाद का निर्धारण सन् 1943 में प्रतीक पत्रिका से हुआ।
- प्रगतिवाद और प्रयोगवाद में अंतर है।

Discussion / चर्चा

नवीन भावों, नवीन विचारों और नवीन प्रयोगों के साथ हिन्दी काव्य-जगत में प्रस्फुटित हुई काव्य-प्रणाली को प्रयोगवाद कहते है। प्रयोग शब्द का सामान्य अर्थ होता है- नई दिशा में अन्वेषण का प्रयास। अंग्रेजी के Experimentalism का हिन्दी समानार्थी शब्द है प्रयोगवाद। छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद आदि काव्य-आदर्शों के समान हिन्दी काव्य-जगत में प्रकट हुआ एक आदर्शवाद है प्रयोगवाद। हिन्दी में प्रयोगवाद का संस्थापक और प्रमुख कवि अज्ञेय है।

1.1.1 प्रयोगवाद का आरंभ

हिन्दी में प्रयोगवाद की चर्चा सन् 1943 में अज्ञेय द्वारा संपादित तार सप्तक शीर्षक काव्य-संग्रह से माना जाता है। अज्ञेय के नेतृत्व में कुछ कवि काव्य-जगत में नये बोध, संवेदनाएँ और शिल्पगत चमत्कार पूर्ण कविता रचकर अवतरित हुए, उन्हें प्रयोगवादी कवि कहलाने लगे। अज्ञेय ने सन् 1943 में इलाहाबाद से प्रतीक नामक पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया। प्रतीक प्रयोगवाद की अच्छी प्रगति कर दी। अथवा प्रतीक नामक पत्रिका को प्रयोगवाद की शुरुआत की आधार माना जाता है।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

SGOU

प्रयोगवाद का आरंभिक समय भारत में समस्याओं और संघर्षों का काल था। भारत भर आज़ादी संग्राम चल रहे थे। तब यहाँ कई किसान-मजदूर आंदोलन भी हुए थे। तब गाँधीजी, नेताजी, नेहरु जैसे नेताएँ युवकों में नयी उमंग और उत्साह पैदा करते थे। आज़ादी संग्राम हिंसावादी और अहिंसावादी के रूपों में विभक्त हो चुके थे। इस काल में अंग्रेज़ों से शस्त्र और निःशस्त्र लड़ने को सैकड़ों-हज़ारों नौजवान आगे आये। युवकों को उत्तेजित करने में कवि भी हुए थे। बालकृष्ण शर्मा नवीन विप्लव, देशभक्ति और प्रेम की कई कविताएँ लिखी है।

राष्ट्रीय-सांस्कृतिक आदर्शवादी कवियों ने परदेशी के प्रति आक्रोश, स्वतंत्रता-संग्राम का उत्साह, अहिंसा का महत्व, अतीत का महत्व, बलिदान की अनिवार्यता, बुराईयों एवं कष्टों से मुक्ति की आशा और सबसे बढ़कर आज़ाद होने की आवश्यकता आदि पर ज़ोर दिया है। इस समय के राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कवियों ने पराधीनता के प्रति कट्टर विरोध प्रकट किया है।

1.1.1.1 प्रयोगवाद की मुख्य प्रवृत्तियाँ

पहले कह चुका था कि प्रगतिवाद की प्रतिक्रिया से प्रयोगवाद की शुरुआत हुई। सुप्रसिद्ध आलोचक डॉ.नामवर सिंह के मत में वाद के विरुद्ध विद्रोह प्रयोगवाद की पहली विशेषता है। इसकी समर्थन करते हुए अज्ञेय ने कहा है कि प्रयोग का कोई वाद नहीं है। प्रयोगवाद की दूसरी विशेषता यह है कि इसके प्रवर्तक अपने को स्वयं सत्यान्वेषी मानते हैं। तीसरा, प्रयोगवाद के कवियों ने समाज से अधिक व्यक्ति को महत्व दिया है। चौथा विशेषता यह है कि प्रयोगवाद के कवियों ने सहज और यथार्थ रूप में वर्णन किया है।

1.1.1.2 प्रयोगवादी काव्य की भाषा

छायावादी के कवियों के काव्य भाषा सरल और कोमल रहा है। प्रगतिवादी कवियों की भाषा शैली बोलचाल की रही थी। किंतु प्रयोगवाद के कवियों ने शब्द-प्रयोग पर बल दिया है। प्रयोगवाद के कवियों ने सहज और संवाद पद्धति से रचना-प्रक्रिया किया है। अज्ञेय ने आरंभ काल के कविताओं में तनिक संकीर्ण तथा दुरूह भाषा का उपयोग किया है। लेकिन वे बाद में प्रयोगवाद के अनुकूल बोलचाल की भाषा को अपनाया।

1.1.1.3 प्रयोगवाद में छंद, बिम्ब, प्रतीक आदि

अधिकांश प्रयोगवादी कविता मुक्त छंद के नहीं है, छंद सिद्ध है। प्रयोगवादी कवियों ने सवैया जैसे प्राचीन छंदों में काव्य रचना की है। ये कवियों ने प्रतीकों एवं बिंबों का अधिकाधिक उपयोग भी किया है। सर्वाधिक प्रतीकों एवं बिंबों का प्रयोग अज्ञेय ने किया। अज्ञेय की कविता में प्रकृति के विविध प्रकार के बिम्ब सबसे अधिक उपलब्ध है। उदाहरणार्थ अज्ञेय की कविता।

“अब देखिये न मेरी कारगुज़ारी
कि मैं मँगनी के घोड़े पर
सवारी पर ठाकुर साहब के लिए उन की रियाया से लगान
और सेठ साहब के लिए पंसार-हट्टे की हर दुकान
से किराया वसूल कर लाया हूँ।
थैली वाले को थैली
तोड़े वाले को तोड़ा
और घोड़े वाले को घोड़ा
सब को सब का लौटा दिया
अब मेरे पास यह घमंड है
कि सारा समाज मेरा एहसानमन्द है।

(देखिये न मेरी कारगुज़ारी - अज्ञेय)

1.1.1.4 प्रयोगवाद की अन्य विशेषताएँ

- प्रयोग नाम सभी युग में होकर भी प्रयोगवाद संज्ञा एक विशेष काल के कुछ कवियों और उनके कविताओं के लिए सीमित हो गया है।
- प्रयोगवाद व्यक्ति सत्य पर अधिष्ठित है।
- प्रयोगवाद का शिल्प रूढ़ है।
- प्रयोगवाद बौद्धिक प्रधान है।
- प्रयोगवाद के प्रवर्तकों ने वाद का विरोध किया है।
- प्रयोगवाद के कवि निरंतर प्रयोगशील रहा है।
- प्रयोगवाद के कवियों ने अनवरत नयी रास्ते का अन्वेषण करते रहे हैं।

Critical Overview / अवलोकन

नामवर सिंह के मत में प्रयोगवाद वाद के *विरुद्ध का विद्रोह* है। प्रयोगवाद के कवियों ने *सवैया* जैसे प्राचीन छंदों में काव्य रचना की है।

प्रतीकों-बिंबों का सर्वाधिक उपयोग अज्ञेय ने किया है।
प्रयोगवाद के प्रवर्तक *कला, कला के लिए मात्र* मानते हैं।
प्रयोगवाद के कवि निरंतर प्रयोगशील रहा है।

Recap / पुनरावृत्ति

- प्रगतिवाद के बाद आनेवाले युग
- प्रयोगवाद का आरंभ 1943 में तार सप्तक से हुई है
- प्रयोगवाद के प्रवर्तक सत्यान्वेषी है
- प्रयोगवाद के कवि नये रास्ते का खोज करते रहे हैं
- प्रयोगवाद के संस्थापक अज्ञेय है
- प्रयोगवाद के कवियों ने शब्द-प्रयोग द्वारा सहज संवाद पद्धति में रचना किया
- प्रयोगवाद के कवियों ने सहज और यथार्थ का वर्णन किया है
- प्रयोगवाद में प्रतीकों एवं बिंबों का अधिक उपयोग हुआ है
- मुख्य प्रवृत्तियाँ
- अन्य विशेषताएँ
- प्रयोगवाद का मुख्य उद्देश्य साम्यवाद एवं प्रगतिवाद का विरोध है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. प्रगतिवाद के बाद आनेवाले युग का नाम क्या है?
2. प्रयोगवाद किस काल के अन्तर्गत आने वाले युग है?
3. प्रयोगवाद का उदय किस वर्ष में हुई?
4. प्रयोगवाद के प्रवर्तक कौन है?
5. एक प्रयोगवादी कवि का नाम लिखिए?
6. प्रयोगवाद का मुख्य उद्देश्य क्या है?
7. छायावादी के कवियों के काव्य भाषा कैसे है?
8. अज्ञेय द्वारा प्रकाशित पत्रिका का नाम क्या है?

Answers /उत्तर

1. प्रयोगवाद।
2. आधुनिक काल।
3. 1943 ई
4. अज्ञेय।
5. अज्ञेय।
6. साम्यवाद एवं प्रगतिवाद का विरोध।
7. सरल और कोमल।
8. ‘प्रतीक’

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. प्रयोगवाद की प्रवृत्तियाँ।
2. प्रयोगवाद की परिस्थितियाँ व्यक्त कीजिए।
3. प्रयोगवादी काव्य का उदय किस प्रकार संभव होता है?
4. प्रयोगवादी काव्य की परिस्थितियाँ व्यक्त कीजिए?
5. प्रयोगवादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ क्या-क्या है?
6. प्रयोगवादी कवियों की भाषा शैली कैसे थे?

SGOU

इकाई 2

तारसप्तक का प्रकाशन और प्रमुख कवि

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- तारसप्तक कवि मण्डल के बारे में समझता है
- तारसप्तक के कवियों का परिचय प्राप्त होता है
- प्रयोगवादी कवियों का परिचय प्राप्त होता है
- प्रयोगवाद के अन्य प्रमुख कवियों के बारे में अवगत होता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

प्रयोगवाद अंग्रेजी के Experimentalism का हिन्दी समानार्थी शब्द है। छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद आदि काव्य-आदर्शों के समान हिन्दी काव्य-जगत में प्रकट हुआ एक आदर्शवाद है प्रयोगवाद। हिन्दी में प्रयोगवाद का संस्थापक और प्रमुख कवि अज्ञेय है। हिन्दी में प्रयोगवाद की चर्चा सन् 1943 में अज्ञेय द्वारा संपादित तार सप्तक शीर्षक काव्य-संग्रह से माना जाता है। अज्ञेय जी ने इलियट से प्रभावित होकर तारसप्तक सन् 1943 में शुरू की और हिन्दी कविता में प्रयोगवादी काव्य आन्दोलन का सूत्रपात किया।

Keywords / मुख्य बिन्दु

प्रयोगवाद, इलियट का प्रभाव, संपादक अज्ञेय, प्रारंभिक वर्ष 1943

Discussion / चर्चा

हिन्दी साहित्य में आधुनिक संवेदना का सूत्रपात 'तारसप्तक' के प्रकाशन से माना जाता है। सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्याय 'अज्ञेय' के सम्पादन में 4 सप्तक प्रकाशित हुए। प्रथम सप्तक- 'तारसप्तक' का प्रकाशन 1943 ई. में हुआ। जिसमें 7 कवियों की कविताएँ संकलित हैं। महत्वपूर्ण बात यह है की 'तारसप्तक' की परिकल्पना अज्ञेय की नहीं थी अपितु प्रभाव माचवे और नेमिचंद्र जैन की थी। 'तारसप्तक के प्रकाशन से ही प्रयोगवाद का प्रारंभ माना जाता है। इसीलिए 'प्रयोगवाद' के प्रवर्तन का श्रेय अज्ञेय को दिया जाता है। लेकिन 'प्रयोगवाद' का जन्म कुछ आलोचक 1947 प्रतीक के प्रकाशन मानना उचित समझते है। 'प्रयोगवाद' शब्द का प्रथम प्रयोग नददुलारे वाजपेयी ने 'प्रयोगवादी रचनाएँ' नामक अपने निबंध में किया। इसी निबंध में उन्होंने प्रयोगवाद को 'बैठे ठाते का धंधा' कहा है। प्रमुख कवियाँ निम्नलिखित है।

1. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय।
2. मुक्ति बोध।
3. गिरिजाकुमार माथुर
4. प्रभाकर माचवे।
5. भारत भूषण अग्रवाल।
6. नेमिचन्द्र जैन।
7. रामविलास शर्मा।

दूसरा तारसप्तक के संपादक अज्ञेय हैं। इसका प्रकाशन वर्ष 1951 ई. है। ध्यान रहे कि इसका नाम 'दूसरा सप्तक' है, कई लोग इसे 'दूसरा तार सप्तक' कह देते हैं जो की गलत है।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

तीसरा सप्तक के संपादक अज्ञेय है। इसका प्रकाशन वर्ष 1959 ई. है। ध्यान रहे कि इसका नाम 'तीसरा सप्तक है, कई लोग इसे तीसरा तार सप्तक' कह देते हैं जो की गलत है।

चौथा सप्तक के संपादक अज्ञेय हैं। इसका प्रकाशन वर्ष 1979 ई. है। ध्यान रहे कि इसका नाम 'चौथा सप्तक' है। कई लोग इसे 'चौधा तार सप्तक' कह देते हैं जो की गलत है।

विशेषताएँ

हिन्दी साहित्य की इतिहास में तारसप्तक एक स्वर्णिम घटना के रूप में अंकित है। सप्तक चतुष्टय न केवल प्रयोगवाद बल्कि हिन्दी साहित्य के इतिहास को एक नवीन दिशा की ओर अग्रसर करता है। हिन्दी साहित्य का इतिहास में सबसे बड़ा योगदान वाद विशेष से मुक्ति है हालांकि आलोचकों ने वाद विशेष से मुक्ति को ही एक वाद का प्रतीक माना है। वस्तुतः तार सप्तक में मार्क्सवादी, समाजवादी गांधीवादी अस्तित्ववादी, क्षणवादी जैसे सभी विचारधाराओं के कवि शामिल हुए।

तार सप्तक ने न केवल प्रयोगवाद वरन हिन्दी साहित्य की दिशा और दशा में क्रांतिकारी परिवर्तन किए थे। फिर चाहे वस्तु स्तर पर क्षण का महत्व हो, लघु मानव की स्थापना हो, निजी व्यक्ति का चित्रण हो, सत्य में मुक्त बंद का प्रयोग हो, सरल सहज भाषा का प्रयोग काव्य की असकरण से मुक्ति आदि तार सप्तक नई यहाँ का अन्वेषण था, अज्ञेय के अनुसार अभेद्य की और प्रसरण था और इन्हीं राहों से आगे बढकर प्रयोगवाद ने स्वरूप धारण किया था निश्चित रूप से यह कह सकते हैं कि तार सप्तक प्रयोगवाद का प्रस्थान बिंदु था।

प्रयोगवाद के अन्य प्रमुख कवि

- प्रयोगवाद के संस्थापक कवि सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायन अज्ञेय है।
- अज्ञेय के प्रतिनिधि कृतियाँ है- आँगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार, बावरा अहेरी।
- गिरिजाकुमार माथुर - नाश और निर्माण, मंजीर, जो बंध न सका।
- श्री नरेश मेहता - समय देवता, संशय की एक रात, मेरा समर्पित एकांत।
- गजानन माधव मुक्तिबोध - चाँद का मुंह टेढ़ा है, भूरी खाक धूल।
- शमशेर बहादुर सिंह - कुछ कविताएँ, चुका भी हूँ नहीं मैं, कुछ और कविताएँ।
- भारत भूषण अग्रवाल - ओ अप्रस्तुत मन, अनुपस्थित लोग, एक उठा हुआ हाथ।
- प्रभाकर माचवे - अनुक्षण, स्वप्न भंग, तेल की पकौड़ियाँ।
- भवानीप्रसाद मिश्र - अंधेरी कविताएँ, गीत-फरोश, त्रिकाल संध्या।
- शकुंत माथुर - सुहाग बेला, चांदनी चूनर, कूड़े से भरी गाड़ी।
- रघुवीर सहाय - आत्महत्या के विरुद्ध, सीढ़ियों पर धूप में, हंसो जल्दी।
- हरिनारायण व्यास - मृग और तृष्णा, त्रिकोण पर सूर्योदय।
- धर्मवीर भारती - अन्धा युग, कनुप्रिया, ठंडा लोहा।
- कुंवर नारायण - हम-तुम, चक्र-व्यूह, परिवेश।
- विजय देव नारायण साही - मछली-घर, साखी।
- कीर्ति चौधरी - खुले हुए आसमान के नीचे।
- मदन वात्स्यायन - अपथगा, शुक्रतारा।
- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना - एक सूनी नाव, काठ की घंटियाँ, बांध का पुल।
- केदारनाथ सिंह - जमीन पक रही है, अभी बिल्कुल अभी, यहाँ से देखो।

Critical Overview / अवलोकन

तारसप्तक के कवियों ने सहज और यथार्थ रूप में काव्य वर्णन किया है। तारसप्तक के कविताओं में नये सत्यों और नयी यथार्थताओं का जीवित बोध है।

Recap / पुनरावृत्ति

- प्रयोवाद का उदय
- प्रवर्तक अज्ञेय
- सात कवियों का मण्डल
- तारसप्तक नामकरण
- इलियट का प्रभाव
- प्रयोगवाद के अन्य कवियाँ
- प्रमुख रचनाएँ

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. तारसप्तक का वर्ष लिखिए?
2. तारसप्तक के किन्हीं दो कवियों के नाम लिखिए?
3. अज्ञेय जी का पूरा नाम क्या है?
4. मुक्ति बोध के दो रचनाओं के नाम लिखिए।
5. आंगन के पार द्वार किसकी कृति है?
6. प्रयोगवाद के संस्थापक कवि कौन है?
7. दूसरा तार सप्तक के प्रकाशन वर्ष क्या है?
8. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के दो कृतियों के नाम लिखिए।

Answers/ उत्तर

1. 1943 ई।
2. मुक्तिबोध, नेमिचन्द्र जैन।
3. सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायन अज्ञेय।
4. चांद का मुह टेढा, भूरी भुरी खाक धूल।
5. अज्ञेय।
6. अज्ञेय
7. 1951 ई. है।
8. एक सूनी नाव, काठ की घंटियाँ।

Assignments/ प्रदत्त कार्य

- हिन्दी में तारसप्तक का स्थान निर्धारित कीजिए।
- तारसप्तक क्या है?
- तारसप्तक की विशेषताएँ क्या है?
- तारसप्तक के मुख्य कवियों के नाम लिखिए?
- प्रयोगवाद के अन्य कवियाँ और उनकी प्रमुख रचनाएँ लिखिए।

SGOU

इकाई 3

नयी कविता, उद्‌भव और विकास

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- नयी कविता का परिचय प्राप्त होता है
- नयी कविता के प्रवृत्तियों के बारे में समझता है
- नयी कविता की परिस्थितियों का परिचय प्राप्त होता है
- नई कविता की विशेषताओं के बारे में समझता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

नयी कविता हिन्दी साहित्य श्रृंखला की सशक्त एवं जीवन्त प्रक्रिया है। आधुनिक काल की विविध काव्य-प्रवृत्तियों एवं काव्य शैलियों में से यह एक है। नयी कविता का दिशागमन आधुनिक हिन्दी काव्य केलिए महत्वपूर्ण रहा है।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

प्रगतिवाद और प्रयोगवाद की समन्वित भावभूमि से विकसित, समसामयिक युगबोधवाली कविता, हिन्दी काव्य क्षेत्र का एक नया काव्यान्दोलन, 'नयी कविता' नामकरण

Discussion / चर्चा

नयी कविता का आरंभ सन् 1940 के आसपास हुआ। सन् 1954 में 'नये पत्ते' के प्रकाशन के साथ यह नाम हिन्दी जगत में प्रकाशित हुआ। सन् 1954 ई में नयी कविता के नाम से कविताएँ प्रकाशित होने लगी। स्पष्टतः प्रयोग वाद नयी कविता नहीं है। नयी कविता की नामकरण कवि अज्ञेय की देन है। इसको स्वीकार करने केलिए तीन कारण है:-

1. प्रयोगवाद के बदनामी से बचने का प्रयत्न।
2. पूर्ववर्ती कवियों से विषय वस्तु और शैली की भिन्नता से द्योतक का प्रयत्न।
3. समसामयिक युगबोधवाली कविता के प्रवृत्ति विशेष के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने की इच्छा।

"अपनी कुण्डाओं की
दीवारों में बन्दि
मैं घुटता हूँ"। - धर्मवीर भारती ने अपनी कुण्ठाएँ इस प्रकार व्यक्त किये है।

प्राचीन मूल्यों का विघटन हो रहा है और नवीन मूल्यों नष्ट हो रहे हैं, नवीन मूल्यों की सम्यक व्याख्या एवं स्थापना करना नयी कविता के कवियों के दायित्व है। नयी कविता हिन्दी काव्य-क्षेत्र का एक आन्दोलन है और एक अर्थ में प्रयुक्त होता है। प्रयोगवाद के कारण हिन्दी कविता समाज से दूर जा पडी थी। नयी कविता ने हिन्दी की कविता को पुनः समाज सापेक्ष बना दिया।

प्रयोगवाद से नयी कविता के संबंध की पहचान

नयी कविता आंदोलन का 'प्रयोगवाद' से निकट का रिश्ता है किंतु नयी कविता को प्रयोगवाद का पर्याय मानना गलत है। बहुत से लोग नयी कविता की शुरुआत सन् 1943 ई. में अज्ञेय के सम्पादकत्व में निकलने वाले "तारसप्तक" से मानते हैं। ऐसे

भी विद्वान हैं जो 'नयी कविता' का आरंभ सुमित्रानन्दन पन्त और उनके 'रूपाभ' (1938) से जोड़ते हैं और कुछेक सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला" के काव्य "कुकुरमुत्ता" (1942) के नवीन काव्य-बीजों में नई कविता के बीज खोजते हैं। यह भी कहा जाता है कि- सन् 1942-43 में पन्त, नरेन्द्र, केदार, शमशेर कविता की जिस धारा के कवि हैं, "तारसप्तक" उसमें प्रवाह की एक लहर है, नदी का स्थिर द्वीप नहीं।" (डॉ. रामविलास शर्मा, नई कविता और अस्तित्ववाद, पृ.17) शायद नयी कविता पचास वर्षों में सर्वाधिक विवादास्पद और विचारोत्तेजक साबित हुई है। कविता संबंधी चिंतन के अधिकांश विवाद के केन्द्र में किसी न किसी रूप में "तारसप्तक" ही है वर्षों तक "तारसप्तक" के "प्रयोग" और "अन्वेषण" पर करारी बहसें हुई, जिसका इस्तेमाल अज्ञेय ने प्रयोगवाद और प्रगतिवाद जिस नए काव्य-आंदोलन में घुल-मिल गए 'वह नयी कविता' है। और महीन-भेद उभरने पर दो तरह की 'नयी कविता' हो गई आधुनिकतावादी नयी कविता- प्रवर्तक अज्ञेय, दूसरी साम्यवादी-जनवादी-प्रगतिशील नयी कविता प्रवर्तक गजानन माधव मुक्तिबोध।

शक और हिकारत की नज़र से देखे जाने पर भी छायावादोत्तर हिन्दी कविता में 'बौद्धिकता' की महत्त्व-प्रतिष्ठा "तारसप्तक" ने की। इन कवियों ने छायावाद के कल्पनाप्रवण, अमूर्त भाव-पद्धति-प्रधान, सूक्ष्मतावादी मनोवृत्ति, वायवीपन, रूढ़ होती पदावली को छोड़ने का जोखिम उठाया। प्रगतिवाद की स्थूल सतही एकांगी कविता पर प्रहार किया। बौद्धिकता की उठान से युक्त नई राह को खोजने की कोशिश 'प्रयोगवाद' में पूरे जोर से की गई। हालाँकि नई राहें खोजने की तैयारी करने पर भी ये कवि एक सीमा से आगे नई राहें खोज नहीं पाए यह अलग बात है। शानदार असफलता भी सफलता से कम कीमती चीज नहीं है- यह बात 'प्रयोगवाद' ने सिद्ध करके दिखा दी। "तारसप्तक" के कवियों का बौद्धिक आचरण और काव्य-स्वभाव पहले की कविता से निश्चय ही भिन्न साबित हुआ।

इसी दृश्य को समझते हुए नई कविता के आलोचक डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी को कहना पड़ा कि हिन्दी में आधुनिकता की शुरुआत होती है "तारसप्तक" से और हिन्दी के पहले आधुनिक कवि का नाम है- अज्ञेय। (हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास) "तारसप्तक" के प्रकाशन से हिन्दी साहित्य में आधुनिक संवेदना का सूत्रपात माना जाता है। स्वाधीन पश्चिम और साम्यवादी रूस दोनों की विचारधाराएँ हिन्दी साहित्य से सजग रूप में नियोजित आधुनिक काव्यांदोलन में परस्पर टकराती हैं- जिनके बीच ये सात कवि अपने निजी व्यक्तित्व की तलाश में गतिशील दिखते हैं। इस दृष्टि से "तारसप्तक" की भूमिका में उन्हें 'राहों के अन्वेषी' ठीक ही कहा गया है।

वैचारिक मतभेदों के होने पर भी 'प्रयोग' का तत्व उन्हें एकसूत्रता में बाँध लेता है। इतना ही नहीं, विचारधारा के आग्रह से मुक्त इन कवियों की रचनात्मक संवेदनशीलता दूर तक इन्हें निर्मित करती है। प्रगतिवाद-प्रयोगवाद और नयी कविता के दौर घुल-मिलकर एक नया रचना-परिदृश्य उपस्थित कर देते हैं। इसलिए यह कहना ऐतिहासिक भूल है कि प्रयोगवाद का जन्म 'प्रगतिवाद' की हत्या के लिए हुआ था।

वास्तविकता यह है कि 'प्रयोगवाद' मानव जीवन के आंतरिक यथार्थ पर बल देने के कारण फ्रायड और जुंग की खोजों या स्थापनाओं की ओर प्रवृत्त हो गया। प्रगतिवादी काव्य ने यदि शोषित एवं बुभुक्षित के आक्रोश और असंतोष को अभिव्यक्ति दी तो 'प्रयोगवाद' ने आधुनिक शिक्षा से सम्पन्न युवकों की अनास्था-यंत्रणा और संदेह की मनोदशाओं को व्यक्त किया। इसलिए प्रयोगवाद मानव-मन की निजी समस्याओं-चिंताओं का काव्य था। हिन्दी कविता के विकास के सामने जो प्रश्न उपस्थित किए थे, प्रयोगवाद उन्हीं प्रश्नों के दायित्व को लेकर सामने आया था।' (डॉ. केदारनाथ सिंह, आधुनिक हिन्दी कविता में बिंब-विधान) सच बात तो यह है कि ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र का आधार 'प्रयोग' पर टिका है, पर साहित्य के क्षेत्र में 'प्रयोग' (एक्सपेरीमेण्ट) शब्द विज्ञान के क्षेत्र से न आकर 'चित्रकला' के क्षेत्र से आया। यही स्थिति 'अन्वेषण' शब्द की है। ये दोनों शब्द यूरोपीय चित्रकला में प्रसिद्ध होने के बाद साहित्य में आए।

आधुनिक कला के प्रवर्तक कलाकार सेजाँ ने 'रिसर्च' शब्द का प्रयोग किया और वह चल निकला। सम्प्रेषणीयता की समस्या चित्रकला में भी थी और साहित्य में भी। इस दृष्टि से भी 'अन्वेषण' प्रयोगवाद की मनोभूमिका में प्रवेश करता गया। आधुनिक अंग्रेजी कविता में टी.एस. इलियट और एजरा पाउण्ड 'एण्टी-रोमांटिक' उठान लेकर आए। यहाँ तक कि पूरा 'न्यू क्रिटिसिज्म' या नयी समीक्षा का आंदोलन रोमाण्टिक काव्य-मूल्यों के निषेध की पुकार लगाता आया। कुछ-कुछ ऐसी ही स्थिति हिन्दी काव्य में भी दिखाई देती है- पूरा प्रयोगवाद और नयी कविता आंदोलन रोमाण्टिक मूल्यों के निषेध पर बल देता है। "तारसप्तक" के वक्तव्य अपनी गहराई में बिंबवादी ह्यूम, एजरा पाउण्ड और टी.एस. इलियट के काव्य-सिद्धान्तों

की ध्वनियाँ लिये हुए दिखाई देते हैं।

नयी कविता के नामकरण के नए अर्थ वृत्त

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर यह तथ्य साफ उभर कर सामने आ जाता है कि सन् 1950 तक प्रयोग की एकान्तिक वृत्ति के प्रति आकर्षण कम हो गया। कविता अब चमत्कारवादी-रूपवादी रूढ़ियों के बंधनों को तोड़कर पूरे जीवन को सामने लाने का संघर्ष करने लगी तो उसके लिए एक नए नाम की जरूरत महसूस की गई। सर्वप्रथम अज्ञेय जी ने इस काव्य-प्रवृति को 'नयी कविता' नाम (आज का भारतीय साहित्य, पृ.403) देने का प्रस्ताव किया। संयोगवश यह नाम चल निकला और नई प्रवृत्तियों के लिए रूढ़ हो गया।

इलाहाबाद से सन् 1954 में 'नयी कविता' पत्रिका आरंभ हुई। 'नयी कविता' के प्रकाशन से यह नाम चर्चित होकर पूरे प्रवाह में आ गया। इलाहाबाद के नए रचनाकार और आलोचक धर्मवीर भारती, रघुवंश तथा विजयदेव नारायण साही 'आलोचना' त्रैमासिक के सम्पादकत्व मण्डल में थे- एक विचार-गोष्ठी में इन सभी ने नई सर्जनात्मक संवेदना पर पाठकों का ध्यान केंद्रित करने के लिए 'नयी कविता' पत्रिका। निकालने का निर्णय लिया। सम्पादन का दायित्व जगदीश गुप्त (नयी कविता आंदोलन के कवि आलोचक) तथा डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी (नए साहित्य-नव लेखन के प्रख्यात आलोचक) को सौंपा गया। इलाहाबाद में 'नयी कविता' पर गरमागरम बहसें हो रही थीं। अतः एक काव्य-आंदोलन के रूप में 'नयी कविता' का प्रकाशन स्वाभाविक ही था। 'नयी कविता' के सन् 1954 से 1967 तक आठ अंक प्रकाशित हुए जिनमें लक्ष्मीकांत वर्मा, सर्वेश्वर, कुँवर नारायण, विपिन कुमार अग्रवाल, श्रीराम वर्मा आदि की कविताएँ तथा अज्ञेय, रघुवंश, विजयदेवनारायण साही, जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी जैसे काव्य-मर्मज्ञों की टिप्पणियाँ और लेख प्रकाशित हुए।

'नयी कविता' आंदोलन को प्रतिष्ठित करने में अज्ञेय की भूमिका अविस्मरणीय है। सन् 1951 में सच्चिदानंद हीरानंद वात्यायन अज्ञेय ने 'दूसरा सप्तक' निकाला। 'दूसरा सप्तक' नयी कविता का बेजोड़ दस्तावेज है। इसमें भवानी प्रसाद मिश्र, शकुन्त माथुर, हरिनारायण व्यास, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय तथा धर्मवीर भारती मौजूद हैं। 'तीसरा सप्तक' (1959) इसी नयी कविता चेतना का विस्तार कहा जा सकता है जिसमें प्रयाग नारायण त्रिपाठी, कीर्ति चौधरी, मदन वात्स्यायन, केदारनाथ सिंह, कुँवर नारायण, विजयदेवनारायण साही, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना को स्थान मिला है।

"तीसरा सप्तक" के अन्तिम चार कवियों ने नयी कविता को हर दृष्टि से सम्पन्न बनाया लेकिन आरंभ के तीन कवि अपने कृतित्व में निरंतर पिछड़ते गए और नाममात्र शेष रह गए। लेकिन नयी कविता आंदोलन सप्तकों तक सीमित नहीं रहा- इसमें अनेक उल्लेखनीय कवि स्वतंत्र रूप से आए। यहाँ इन सभी कवियों की सूची प्रस्तुत करना न तो संभव है और न उचित ही। कुछ उल्लेखनीय कवियों के नाम इस प्रकार हैं- लक्ष्मीकांत वर्मा, जगदीश गुप्त, वीरेन्द्र कुमार जैन, श्रीकांत वर्मा, विपिन कुमार अग्रवाल, अजित कुमार, रामदरश मिश्र, श्रीराम वर्मा, बालकृष्ण राव, दुष्यंत कुमार, कैलाश वाजपेयी, शिवचन्द्र शर्मा, अशोक वाजपेयी आदि। ऐसा भी नहीं है कि नयी कविता आंदोलन केवल छोटी और लम्बी कविताओं के भीतर ही पनपता रहा है- उसने प्रबंध काव्य के क्षेत्र में भी पहल की। नयी प्रबंध-चेतना की दृष्टि से 'चिन्ता' (अज्ञेय), 'अंधायुग', 'कनुप्रिया' (धर्मवीर भारती), 'आत्मजयी' (कुँवर नारायण) 'एक कंठ विषपायी' (दुष्यंत कुमार), 'चित्रकूट चरित' (लक्ष्मीकांत वर्मा) उल्लेखनीय हैं। नयी कविता युग में पनपने वाली मूल्यांधता, मोहभंग की स्थिति को इस प्रबंध चेतना ने विस्तार से प्रस्तुत किया और इस युग की पूरी मनोभूमिका (यंत्रणा-संत्रास-अनास्था) को नए बिंबों-प्रतीकों में अभिव्यक्ति दी।

नयी कविता आंदोलन की विशिष्टताओं, विविध रूपों, विचारों तथा प्रवृत्तियों का विस्तार से विवेचन-विश्लेषण करने वाली पत्रिकाओं पर भी हमारा ध्यान जाता है। उनमें 'नयी धारा', 'भारती', 'लहर', 'प्रतीक', 'नया प्रतीक', 'ज्ञानोदय', 'नया खून', 'कल्पना', 'माध्यम', 'आधार', 'उत्कर्ष', 'कृति', 'क ख ग', 'निकष', 'कृति परिचय', 'युयुत्सा', 'अर्थ', 'संज्ञा', 'आलोचना', 'धर्मयुग' आदि का स्मरण हो आना स्वाभाविक है। यहाँ तक कि लगभग प्रत्येक रेडियो केन्द्र से किसी अज्ञेय, मुक्तिबोध, गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भारती, साही, शमशेर और रघुवीर सहाय के विचार अपने युग की पूरी मनोभूमिका को नयी कविता ने नए काव्यात्मक मुहावरे में सर्वाधिक सशक्त अभिव्यक्ति दी। नयी कविता में जो तनाव-घिराव, हर्ष-विषाद, द्वन्द्व और विरोधाभास है वह अपने 'परिवेश' की सीधी आवाज की उपज है। आधुनिक संवेदना के अपार विस्तार और केन्द्र में मौजूद मानव, समस्याओं-चिंताओं-प्रश्नाकुलताओं और यंत्रणाओं के बारे में नयी कविता नए तर्क पैदा करती है।

ऐसी स्थिति के कारण 'नयी कविता' को न तो शास्त्रीय ढंग से परिभाषित किया जा सकता है न विश्लेषित। हालाँकि नयी कविता का शास्त्र लक्ष्मीकांत वर्मा ने 'नयी कविता के प्रतिमान', 'नए प्रतिमान पुराने निकष', डॉ. नामवर सिंह ने 'कविता के नए प्रतिमान', गिरिजा कुमार माथुर ने 'नयी कविता : सीमाएँ और संभावनाएँ' लिखकर बनाने की कोशिश की।

प्रयोगवाद और नयी कविता- भाव-बोध

प्रयोगवाद और नयी कविता के लगभग सभी कवियों के प्रेरणा केन्द्र सूर्यकांत त्रिपाठी निराला रहे हैं। प्रयोगवाद और नयी कविता के भाव-बोध को हम इतिहास की इस प्रक्रिया में समझ सकते हैं कि आधुनिक चिंतन में निरंतर बदलता हुआ मनुष्य और समग्र मनुष्य की अवधारणा ही सारे उपक्रम का आधार है। द्वितीय विश्व युद्धोत्तर संसार की केन्द्रीय चिंता रही है- मानवीय मूल्यों का विघटन और अनास्था-यंत्रणा-पीड़ा की असहनीय स्थितियों से साक्षात्कार।

विज्ञान की प्रविधियों से गति इतनी बढ़ गयी है कि सभी मानवीय संबंध डगमगा गए हैं और प्रेम, सेक्स, धर्म, आचरण सभी मर्यादाएँ नष्ट हो गई हैं। धर्मवीर भारती ने 'अंधायुग' में इसी टूटन की पीड़ा को बृहत्तर मानवीय संदर्भो में अभिव्यक्ति दी है। इतिहास और यंत्र के बीच जो रिश्ता बना है, अवमानवीकरण अपराधीकरण, अप-संस्कृति उसी की देन है। नए संसार की इसी कुशल समस्या से प्रयोगवाद-नयी कविता के कवि जूझते रहे हैं। गजानन माधव मुक्तिबोध के शब्दों में ज्ञानात्मक संवेदना और संवेदनात्मक ज्ञान की संश्लिष्टता से निर्मित नयी कविता मूलभूत संवेदनशक्ति में विलक्षण प्रवृत्ति अपनाती है। यह पूरी कविता कुछ अपवादों को छोड़कर परिवेश के साथ द्वन्द्व-स्थिति में है।

आधुनिक भाव-बोध क्या है? मुक्तिबोध के मत से 'मैं अपनी खुद की जिन्दगी और दोस्तों की जिन्दगी से बता सकता हूँ कि अन्याय के विरूद्ध आवाज बुलंद करना आधुनिक भाव-बोध के अंतर्गत है। आधुनिक भाव-बोध के अंतर्गत यह भी आता है कि मानवता के भविष्य निर्माण के संघर्ष में हम और भी अधिक दत्तचित्त हों, तथा हम वर्तमान परिस्थिति को सुधारें, नैतिक ह्रास को थामें- उत्पीड़ित मनुष्य के साथ एकात्म होकर उसकी मुक्ति की योजना करें। अंततः अनुभूति की ईमानदारी और प्रामाणिकता ही उसके जीवन जगत के सौंदर्यानुभूति को शक्ति देती है। सच बात यह है कि पुराने कवियों की तरह प्रयोगवादी तथा नयी कविता के कवियों के पास कोई सर्वांगीण दार्शनिक विचारधारा नहीं है, किंतु वह अपने जीवन की वास्तविकता के संपर्क में तो है।

नयी कविता का भाव-बोध एकान्त का एकालाप नहीं है, समाज से मानव से सीधा 'वार्तालाप' है, एक ऐसा वार्तालाप जिसमें भावनात्मक और बौद्धिक परिष्करण की संस्कृति को व्यापक स्वीकृति प्राप्त है। जीवन की विविधता के कारण नयी कविता में कहीं गीत का स्वर है, कहीं आलोचना का स्वर, कहीं रमणीय प्रकृति की अनुभूति का स्वर है तो कहीं आत्मालोचन का रंग। 'सच तो यह है कि नयी कविता के भीतर कई स्वर हैं, कई शैलियाँ हैं, कई शिल्प हैं और कई भाव-पद्धतियाँ।' नयी कविता एक काव्य प्रकार का नाम है।

1. **अनुभूति की सच्चाई तथा यथार्थ बोध**

अनुभूति क्षण की हो या समूचे काल की, किसी सामान्य व्यक्ति (लघुमानव)की हो या विशिष्ट पुरुष की, आशा की हो या निराशा की वह सब कविता का कथ्य है। समाज की अनुभूति कवि की अनुभूति बन कर ही कविता में व्यक्त हो सकती है। नई कविता इस वास्तविकता को स्वीकार करती है और ईमानदारी से उसकी अभिव्यक्ति करती है। इसमें मानव को उसके समस्त सुख-दुखों, विसंगतियों और विडंबनाओं को उसके परिवेश सहित स्वीकार किया गया है। इसमें न तो छायावाद की तरह समाज से पलायन है और न ही प्रयोगवाद की तरह मनोग्रंथियों का नग्न वैयक्तिक चित्रण या घोर व्यक्तिनिष्ठ अहंभावना। यह कविता ईमानदारी के साथ व्यक्ति की क्षणिक अनुभूतियों को, उसके दर्द को संवेदनापूर्ण ढंग से अभिव्यक्त करती है -

"आज फिर शुरु हुआ जीवन
आज मैंने एक छोटी सी सरस सी कविता पढ़ी
आज मैंने सूरज को डूबते देर तक देखा
जी भर कर शीतल जल से स्नान किया
आज एक छोटी सी बच्ची आयी
किलक मेरे कंधे पर चढ़ी
आज आदि से अंत तक एक पूरा गान किया
आज जीवन फिर शुरु हुआ"

(रघुवीर सहाय)

2. **कथ्य की व्यापकता और दृष्टि की उन्मुक्तता**

नई कविता में जीवन के प्रति आस्था है। जीवन को इसके पूर्ण रूप में स्वीकार करके उसे भोगने की लालसा है। नई

कविता ने जीवन को जीवन के रूप में देखा, इसमें कोई सीमा रेखा निर्धारित नहीं की। नई कविता किसी वाद में बंध कर नहीं चलती। इसलिए अपने कथ्य और दृष्टि में विस्तार पाती है। नई कविता का धरातल पूर्ववर्ती काव्य-धाराओं से व्यापक है, इसलिए उसमें विषयों की विविधता है। एक अर्थ में वह पुराने मूल्यों और प्रतिमानों के प्रति विद्रोही प्रतीत होती है और इनसे बाहर निकलने के लिए व्याकुल रहती है। नई कविता ने धर्म, दर्शन, नीति, आचार सभी प्रकार के मूल्यों को चुनौती दी है, यदि ये मात्र फारमुलें हैं, मात्र ओढ़े हुए हैं और जीवन की नवीन अनुभूति, नवीन चिंतन, नवीन गति के मार्ग में आते हैं। इन मान्य फारमूलों को, मूल्यों की विघातक असंगतियों को अनावृत करना सर्जनात्मकता से असंबद्ध नहीं है, वरन् सर्जन की आकुलता ही है। नई कविता के कवियों में से अधिकांश प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के खेमों में रह चुके थे। प्रगतिवाद और प्रयोगवाद की अपेक्षा अधिक व्यापक मानवीय संदर्भ, उसकी समस्याएं और विज्ञान के नए आयाम से जुड़ कर नई कविता ने अपना विषय विस्तार किया। आम आदमी जिस पीड़ा को झेलता है, औसत आदमी(मध्य-वर्गीय) जिस जीवन को जीता है, वही लघु मानव इस कविता का नायक बनता है। उसे इतिहास ने अब तक अपने से अलग ही रखा है। इसलिए नई कविता उसकी पीड़ा, अभाव और तनाव झेलती है-

"तुम हमारा जिक्र इतिहासों में नहीं पाओगे
और न उस कराह का
जो तुम ने उस रात सुनी
क्योंकि हमने अपने को इतिहास के विरुद्ध दे दिया है"

(विजयदेव नारायण साही)

मनुष्य के भीतर मानवता का अंश शहर-दंश से कैसे नष्ट हो जाता है और वह स्वार्थ के संकीर्ण संसार में जीवित रहने के लिए कैसे विवश कर दिया जाता है; अज्ञेय ने इसी पीड़ा को कविता में व्यक्त किया है-

"बड़े शहर के ढंग और हैं, हम गोटें हैं यहां
दाँव गहरे हैं उस चोपड़ के"

3. मानवतावाद की नई परिभाषा

नई कविता मानवतावादी है, पर इसका मानवतावाद मिथ्या आदर्श की परिकल्पनाओं पर आधारित नहीं है। उसकी यथार्थ दृष्टि मनुष्य को उसके पूरे परिवेश में समझने का बौद्धिक प्रयास करती है। उसकी उलझी हुई संवेदना चेतना के विभिन्न स्तरों तक अनुभूत परिवेश की व्याख्या करने की कोशिश करती है। नई कविता मनुष्य को किसी कल्पित सुंदरता और मूल्यों के आधार पर नहीं, बल्कि उसके तड़पते दर्दों और संवेदनाओं के आधार पर बड़ा सिद्ध करती है। यही उसकी लोक संपृक्ति है। अज्ञेय की एक कविता-

"अच्छा
खंडित सत्य
सुघर नीरन्ध्र मृषा से
अच्छा
पीड़ित प्यार
अकंपित निर्ममता से
अच्छी कुंठा रहित इकाई
सांचे ढले समाज से
अच्छा
अपना ठाठ फकीरी
मंगनी के सुख साज से
अच्छा सार्थक मौन
व्यर्थ के श्रवण मधुर छंद से
अच्छा
निर्धन दानी का उघड़ा उर्वर दुःख
धनी सूम के बंजर धुआं घुटे आनंद से
अच्छे
अनुभव की भट्ठी में तपे हुए कण, दो कण
अंतर्दृष्टि के
झूठे नुस्खे रूढ़ि उपलब्धि परायी के प्रकाश से
रूप शिव रूप सत्य सृष्टि के"

(अरी ओ करुणा प्रभामय)

4. कुंठाओं और वर्जनाओं से मुक्ति का संदेश

नई कविता स्वयं को किसी विषय से अछूता नहीं समझती। नई कविता समाज की वर्जनाओं और व्यक्ति की कुंठाओं से निकल कर स्पष्ट और कोमल अनुभूतियों को यथार्थ की कसौटी पर कस कर अभिव्यक्ति देती है। उसमें यदि आदर्श के प्रति लगाव नहीं है तो अनुभूति के प्रति ईमानदारी में भी कोई कपट नहीं है।

5. विवेक और विचार की कविता

नई कविता में केवल भाव-बोध की अंधी श्रद्धा नहीं है बल्कि

उसमें तर्क बुद्धि, विवेक और विचार है। डॉ. लक्ष्मीकांत वर्मा के शब्दों में- उसकी प्रकृति है प्रत्येक सत्य को विवेक से देखना, उसके परिप्रेक्ष्य में प्रयोग के माध्यम से निष्कर्ष तक पहुँचना। बाह्य स्थितियों के प्रति सतर्क और सचेत होकर कवि मानसिक विश्लेषण की ओर बढ़ता है-

"मैं खुद को कुरेद रहा था
अपने बहाने उन तमाम लोगों की असफलताओं को
सोच रहा था जो मेरे नजदीक थे
इस तरह साबुत और सीधे विचारों पर
जमी हुई काई और उगी हुई घास को
खरोंच रहा था, नोच रहा था"।

6. विसंगतियों का बोध

नई कविता मानव-नियति को लेकर उसकी विसंगतियों के प्रति जागरूक रहती है। भारतीय राजनीति में निरंतर जो विसंगतियां उभरी हैं, सामाजिक और आर्थिक धरातल पर जो विरोधाभास आया है, उसे यह कविता मोह भंग की स्थिति में उजागर करती है। यही कारण है इसमें आक्रोश, नाराजगी, घृणा और विद्रोह उभर आता है। आक्रोश के साथ निषेध के तेवर भी इसमें देखे गए हैं -

"आदमी को तोड़ती नहीं हैं
लोकतांत्रिक पद्धतियां
केवल पेट के बल
उसे झुका देती हैं धीरे-धीरे अपाहिज
धीरे-धीरे नपुंसक बना लेने के लिए
उसे शिष्ट राजभक्त देश-प्रेमी नागरिक
बना लेती हैं।"

7. द्वंद्व और संघर्ष

नई कविता का आत्मसंघर्ष काव्यात्मक बनावट में सामाजिक बुनियादी मुद्दों को उठाता है। आज की व्यवस्था में और उस व्यवस्था से जुड़े हुए प्रश्नों में कविता संघर्ष का मार्ग ढूंढ़ती है। उसका धरातल भी व्यापक है। यह संघर्ष आत्मीय प्रसंगों में भी उभरता है। उसमें सामाजिक और मानवीय व्यापार, संदर्भ उभरते हैं। ये कविताएँ विषमता से जूझती हैं और नया रास्ता सुझाने का प्रयास करती हैं। परिस्थितियों को बदलने और उनसे बाहर निकलने की छटपटाहट इनमें देखी जाती है। वह समस्याओं को पहचानती है-

"जब भी मैंने उनसे कहा है कि देश शासन और
राशन....उन्होंने मुझे रोक दिया है
वे मुझे अपराध के असली मुकाम पर
उंगली रखने से मना करते हैं।"

8. परिवेश संबंधी सत्यों का प्रकटन

नई कविता ने समग्र जीवन की प्रामाणिक अनुभूतियों को उनके जीवंत परिवेश में व्यक्त किया, विषय या अनुभूति के आभिजात्य और भिन्न-भिन्न दृष्टियों या वादों से बने हुए उनके घेरों को तोड़कर व्यक्ति द्वारा भोगे हुए जीवन के हर छोटे-बड़े सत्य को प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से उभारने में ही कविता की सार्थकता समझी। बदलते हुए संदर्भो में परिवेशगत परिवर्तन केवल नगर के जीवन में ही नहीं आए, बल्कि इस नगरीय यांत्रिकता का दबाव गांव के जीवन पर भी पड़ा। उस ओर भी मूल्यों का विखंडन हुआ और जिंदगी में तनाव बढ़ा। परिवेश के परायेपन से उपजी पीड़ा नास्टेलजिया के रूप में प्रकट हुई। नई सभ्यता ने केवल शहर के आदमी को ही नहीं तोड़ा, बल्कि गांव के आदमी को भी गांव से बेगाना कर दिया-

"याद आते घर
गली चौपाल, कुत्ते, मेमने, मुर्गे, कबूतर
नीम तरु पर
सूख कर लटकी हुई कड़वी तुरई की बेल
टूटा चौंतरा
उखड़े ईंट पत्थर
बेधुली पोशाक पहने गांव के भगवान मंदिर।"

नई कविता में आज की शहरी रोजमर्रा ज़िंदगी की अनुभूतियों को बड़ी सहजता से अभिव्यक्ति मिली है। यह पल-पल के अंतर्विरोधों की उपज हैं। ऊपर से रंगीन दिखाई देने वाली शहरी जिंदगी व्यक्ति को कितना विदेह कर देती है और विदेह होकर भी आज का आदमी दर्द से छुटकारा नहीं पाता है।

9. यथार्थ पीड़ा का चित्रण

नई कविता वास्तव में व्यक्ति की पीड़ा की कविता है। प्रयोगवादी कविता में जहाँ व्यक्ति के आंतरिक तनाव और द्वंद्वों को उकेरा गया है वहीं नई कविता में वह व्यापक सामाजिक यथार्थ से जुड़ता है। जिंदगी की मारक स्थितियों को, उसकी ठोस सच्चाइयों को और राजनीतिक सरोकारों को यह कविता भुलाती नहीं है; पर यह न तो उत्तेजना बढ़ाती है और न ही कवि भावुकता का शिकार होता है। अपने अनुभव के सत्य

को कवि बाहर के संसार के सत्य से भी जोड़ता है। इससे नई कविता का काव्यानुभव पुरानी कविता के काव्यानुभव से अलग तरह का हो जाता है-

"एकाएक मुझे भान होता है जग का
अखबारी दुनिया का फैलाव
फंसाव, घिराव, तनाव है सब ओर
पत्ते न खड़के
सेना ने घेर ली हैं सड़कें।"- 'अंधेरे में' (गजानन माधव मुक्तिबोध)

10. **व्यंग्य के तेवर**

नई कविता ने व्यंग्य के तेवर को अधिक पैना और धारदार बनाया। समस्याओं को समझकर उसने उस पर व्याख्यान करने की अपेक्षा उसे कसे हुए सीधे शब्दों में प्रकट किया। यह व्यंग्य भी विभिन्न रूपों में अभिव्यक्ति पाता है और इसका क्षेत्र भी व्यापक हो जाता है। किसी भी क्षेत्र में हो रहे शोषण फिर चाहे वह राजनीतिक हो या धार्मिक व्यक्ति, अथवा समाज, आदर्श हो या यथार्थ सब पर व्यंग्य की पैनी धार चली है-

"बड़े-बड़े आदर्श वाक्यों को
स्वर्णाक्षरों में लिखवाकर
अपने ड्राइंगरूम में सजा दो
उन्हें अपनी
आस्था, श्रद्धा एवं निष्ठा का
अर्घ्य दो।"

11. **नई कविता वादमुक्त कविता**

नई कविता किसी वाद से बंधी नहीं है। यह इस कविता की बहुत बड़ी विशेषता है। शायद यही कारण है कि प्रगतिवादियों ने भी नई कविता की धुन में कविता लिखनी शुरु कर दी। रांगेय राघव जैसा प्रगतिशील कवि नई कविता के युग में अपनी काव्य धारा को अक्षुण्ण रखते हुए नई कविता की शब्द योजना में कविता लिखता है-

"ठहर जा जालिम महाजन
तनिक तो तू खोल वह मदिरा विघूर्णित आँख अपनी
देख, कहाँ सौ लाया बता सम्पत्ति
कहां से लाया बता साम्राज्य।" (केदारनाथ सिंह)

12. **नारी के प्रति दृष्टिकोण**

नारी के प्रति छायावादी कवियों की दृष्टि सम्मानपूर्ण, स्नेह-वात्सल्यपूर्ण एवं श्रद्धापूर्ण थी। प्रसाद, निराला और पंत ने नारी को अत्यधिक आदर और गौरव के साथ स्मरण किया है- 'नारी तुम केवल श्रद्धा हो विश्वास रजत पग नख तल में'- आदि पंक्तियों में प्रसाद ने नारी को जो उच्च स्थान दिया, वह इस युग के कवियों ने नहीं दिया। नर नारी के बीच सृष्टि के आरम्भ से चले आ रहे संबंधों पर रघुवीर सहाय की टिप्पणी-

"नारी बिचारी है, पुरुष की मारी है
तन से क्षुधित है, मन से मुदित है
लपक झपककर अंत में चित्त है।"

13. **सौंदर्यबोध**

नई कविता का सौंदर्य-शास्त्र और उसका सौंदर्य-बोध निश्चय ही अनेक संदर्भो में व्यापक हुआ है। उसमें सच्चाई, टकराव और मोहभंग की स्थिति नई चेतना के रूप में आई है। यह कविता आध्यात्मिक और दार्शनिक विषयों से भी अब परहेज नहीं करती। इसमें फिर से पेड़, पौधे, पक्षी, बच्चे, माँ, गाँव, शहर, वतन, रोमांस, प्रेम, प्रकृति-चित्रण आदि का समावेश हुआ। इससे अनुभूति को नए पंख लगे और उसने काव्य में नए रूप धरे।

14. **भाषा**

नई कविता भाषा के क्षेत्र में भी आधुनिक-बोध के साथ बढ़ती है और नई होती है। नया कवि पुरानी भाषा में नई संवेदना की अभिव्यक्ति के लिए समर्थ नहीं पाता, इसलिए वह भाषा के नए रूप को गढ़ने के लिए तत्पर रहता है-

"शब्द अब भी चाहता हूँ
पर वह कि जो जाए वहाँ जहाँ होता हुआ
तुम तक पहुँचे
चीज़ों के आर-पार दो अर्थ मिलाकर सिर्फ एक
स्वच्छंद अर्थ दे।"

नई कविता की इस नई भाषा में गद्यात्मकता के प्रति विशेष लगाव बन गया है। कहीं-कहीं तो कविता गद्य का प्रतिरूप लगती है। अलंकृत भाषा को नई कविता में बहिष्कृत किया गया है। सपाट शब्दों में अभिव्यक्ति से इसमें सपाटबयानी आ गई है तो कहीं खुरदरी हो गई है। कहीं-कहीं तो कविता सिर्फ ब्यौरा बन कर रह गई है। नई कविता के कुछ कवियों ने स्वयं को मौलिक और उत्साही साबित करने के लिए स्थापित मूल्यों को भी अस्वीकार करने में अभिधा शैली से अभिव्यक्ति का दंभ भरा है। अशोक वाजपेयी ने ऐसे कवियों की सतही मुद्रा, फिकरेबाजी, चालू मुहावरेदानी और पैगम्बराना अंदाज

को समर्थ कविता के लिए घातक बताया है; उन्ही के शब्दों में- रचनात्मक स्तर पर भाषा के संस्कार के प्रति, उसकी सांस्कृतिक जड़ों के प्रति, उदासीनता आयी है और पारम्परिक अनुगूंजों और आसंगों से कवियों के अज्ञान और अरुचि के कारण, कट जाने से काव्य भाषा में ज्यादातर युवा कवियों की भाषा में सपाटता, सतहीपन और मानवीय दरिद्रता आयी है।

यद्यपि नई कविता का शब्द संसार बहुत व्यापक है। इसमें संस्कृत, हिन्दी, उर्दू तथा प्रांतीय भाषाओं और बोलियों के साथ-साथ अंग्रेज़ी के शब्दों का प्रयोग सामान्य हो गया है। कई जगह नए विशेषणों तथा क्रियापदों का निर्माण किया गया है; जैसे- रंगिम, चंदीले, लम्बायित, उकसती, बिलमान, हरयावल आदि। विज्ञान, धर्म, दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्र आदि सभी क्षेत्रों से उसने शब्दों का चयन किया है। आम आदमी के स्वर, चिर-परिचित शब्द आज की कविता में देखे जा सकते हैं। जन भाषा में सूक्तियों, लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग कभी व्यंग्य प्रदर्शन के लिए तो कभी आम आदमी का आक्रोश व्यक्त करने के लिए। लोकगीतों व लोकधुनों के आधार पर भी कविता की रचना की गई। फिर भी इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि नई कविता ने भाषा को अपनी सुविधा के अनुरूप तोड़ा-मरोड़ा है, यह भाषा के साथ खिलवाड़ है।

15. **प्रतीक**

नई कविता ने नवीन और प्राचीन दोनों तरह के प्रतीक चुनें हैं। परम्परागत प्रतीक नए परिवेश में नए अर्थ के साथ प्रयुक्त हुए हैं। नए प्रतीकों में भेड़, भेड़िया, अजगर जैसे शब्दों को जनता, सत्ताधारी वर्ग, व्यवस्था आदि के प्रतीक रूप में प्रयोग किया गया है। पृथ्वी, पहाड़, सूरज, चांद, किरण, सायं, कमल आदि परम्परागत अर्थ से हट कर नए अर्थों में प्रयुक्त हुए हैं। मुक्तिबोध के प्रतीक वैज्ञानिक जीवन से लेकर आध्यात्मिक क्षेत्र तक फैलें हैं। ओरांग-उटांग तथा ब्रह्मराक्षस जैसे प्रतीक बहुत ही सटीक और समर्थ हैं। पीपल का वृक्ष भी उनका विशेष प्रिय प्रतीक रहा। मौसम शब्द भी प्रतीक बन कर वर्तमान परिवेश को अर्थ देता है-

"छिनाल मौसम की मुर्दार गुटरगूं।"

16. **बिंब**

नई कविता में बिंब कविता की मूल छवि बन गए हैं, अपनी अंतर्लयता के लिए इसमें बिंबबहुलता हो गई है। कवियों ने इन बिंबों को जीवन के बीच से चुना है। व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों तरह के बिंब इस कविता में हैं। पौराणिक और ऐसतिहासिक बिंब नए अर्थ और संदर्भ में लोक-संपृक्ति के साथ उदित हुए हैं। शहरी कवि के बिंब विशेषतया नागरिक जीवन के और ग्रामीण जीवन के संस्कारों से युक्त कवि के बिंब विशेषतया गाँव के होते हैं। जीवन के नए संदर्भों में उभरने वाले वाली अनुभूतियों, सौंदर्य-प्रतीतियों और चिंतन आयामों से संपृक्त बिंब नई कविता ग्रहण करती है-

"शाखों पर जमे धूप के फाहे
गिरते पत्तों से पल ऊब गये
हकाँ दी खुलेपन ने फिर मुझको
लहरों के डाक कहीं डूब गये।"

(केदारनाथ सिंह)

17. **उपमान**

नई कविता में जहाँ अलंकारों का बहिष्कार हुआ, वहीं नए उपमान के प्रयोग से उसका शिल्प नव्य चेतना को यथार्थ अभिव्यक्ति देने में समर्थ हो गया है। लुकमान अली और मोचीराम जैसी लंबी कविताओं के शीर्षक ही उपमान बनकर आते हैं और आदमी की व्यथा का इतिहास प्रकट करते हैं। नई कविता में आटे की खाली कनस्तर जैसी चीजें भी उपमान बनती हैं -

"प्यार, इश्क खाते हैं ठोकर
आटे के खाली कनस्तर से।"

18. **रस**

नई कविता में रस का मूल बिम्बविधान है। नई कविता के सृजेता कवि बिंब विधान में निश्चय ही समर्थ माने जा सकते हैं और उनका यह सामर्थ्य आज बुद्धि समन्वित होकर परम्परा से कटे हुए रस भावों से संयत होकर विशिष्ट एवं यथेष्ट रसों की सृष्टि कर रहा है। कुछ आलोचकों ने इसे बुद्धि रस की सज्ञा प्रदान की है-

"पहले लोग सठिया जाते थे
अब कुर्सिया जाते हैं
दोस्त मेरे।
भारत एक कृषि प्रधान नहीं
कुर्सी प्रधान देश है।"

(डॉ. मदनलाल डागा)

19. **छंद**

छंदों के प्रति विद्रोह प्रयोगवाद से ही आरंभ हो गया था और नई कविता ने विद्रोह की इस आग को ठंडा नहीं होने दिया।

हिन्दी कविता आज मुक्तक छंद को ही अपनाती है। लेकिन इसमें तुकांत के प्रति युवा कवियों में आकर्षण बढ़ा है। छंद के प्रति आग्रह न होने के बावजूद भी नई कविता में प्रवाह और गति दिखाई पड़ती है। नाद सौंदर्य इसमें एक अंतःसंगीत उत्पन करता है, अर्थ के धरातल पर इसमें एक अंतर्लयता की गूंज उभरती है। कभी-कभी इन कविताओं में मात्राओं का मेल दिखाई पड़ता है लेकिन इससे इन्हें छंदोबद्ध नहीं माना जा सकता। वस्तुतः नई कविता मुक्तक छंद में नई संवेदना और नए विचार की सटीक अभिव्यंजना की एक कोशिश है।

Critical Overview / अवलोकन

प्राचीन मूल्यों का विघटन हो रहा है और नवीन मूल्य नष्ट हो रहे हैं, नवीन मूल्यों की सम्यक व्याख्या एवं स्थापना करना नयी कविता के कवियों के दायित्व है।

प्रयोगवाद और नई कविता की प्रवृत्तियों में कोई विशेष अंतर नहीं दिखाई देता। नई कविता प्रयोगवाद की नींव पर ही खड़ी है। फिर भी कथ्य की व्यापकता और दृष्टि की उन्मुक्तता, ईमानदार अनुभूति का आग्रह, सामाजिक एवं व्यक्ति पक्ष का संश्लेष, रोमांटिक भावबोध से हटकर नवीन आधुनिकता से संपन्न भाव-बोध एक नए शिल्प को गढ़ता है। वादमुक्त काव्य, स्वाधीन चिंतन की व्यापक स्तर पर प्रतिष्ठा, क्षण की अनुभूतियों का चित्रण,काव्य मुक्ति, गद्य का काव्यात्मक उपयोग, नए सौंदर्यबोध की अभिव्यक्ति, अनुभूतियों में घनत्व और तीव्रता, राजनीतिक स्थितियों पर व्यंग्य, नए प्रतीकों-बिम्बों-मिथकों के माध्यम से तथा आदर्शवाद से हटकर नए मनुष्य की नई मानववादी वैचारिक भूमि की प्रतिष्ठा नई कविता की विशेषताएँ रहीं हैं।

Recap / पुनरावृत्ति

- प्रयोगवाद का उदय
- प्रवर्तक अज्ञेय
- प्रयोगवाद का समय सन् 1943 ई.
- तारसप्तक
- 1940 के बाद
- नयी कविता नामकरण
- नयी कविता का उदय

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. प्रयोगवाद के बाद की काव्य धारा क्या है?
2. नयी कविता का जन्मदाता कौन है?
3. नये पत्ते पत्रिका का प्रकाशन वर्ष कब है?
4. प्रयोगवाद का समय कब है?
5. नयी कविता काव्य धारा का एक कवि का नाम लिखिए?
6. छंदों के प्रति विद्रोह का आरंभ कहाँ से हो गया?
7. नई कविता में रस का मूल क्या है?
8. नारी के प्रति छायावादी कवियों की दृष्टि कैसी थी।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Answers / उत्तर

1. नयी कविता।
2. अज्ञेय।
3. सन् 1954 ई।
4. सन् 1943 ई।
5. धर्मवीर भारती।
6. प्रयोगवाद से।
7. बिम्बविधान
8. सम्मानपूर्ण, स्नेह-वात्सल्यपूर्ण एवं श्रद्धापूर्ण थी।

Assignments / प्रदत्त कार्य

1. नयी कविता का उदय और उत्थान- एक आलोचनात्मक अध्ययन।
2. नयी कविता का नामकरण पर अपना विचार व्यक्त कीजिए?
3. नयी कविता का उदय व्यक्त करो?
4. नयी कविता का उद्देश्य क्या है?
5. नयी कविता की विशेषता क्या है?
6. नयी कविता की भाषा कैसी थी?

इकाई 4

नयी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- नयी कविता की प्रवृत्तियों से परिचय प्राप्त करता है
- नयी कविता में व्यक्त नवीन लय से परिचय प्राप्त करता है
- नयी कविता में व्यक्त मानवता की अभिव्यक्ति समझता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

नयी कविता हिन्दी साहित्य श्रृंखला की सशक्त एवं जीवन्त प्रक्रिया है। आधुनिक काल की विविध काव्य-प्रवृत्तियों एवं काव्य शैलियों में से यह एक है। नयी कविता हिन्दी काव्य क्षेत्र का एक आन्दोलन है। प्रयोगवाद के कारण हिन्दी कविता समाज से दूर जा पडी थी। नयी कविता ने हिन्दी कविता को पुनः समाज सापेक्ष बना दिया हे।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

- नयी कविता का आगमन।
- नयी कविता और अस्तित्ववाद।
- नयी कविता और मानवतावाद।

Discussion / चर्चा

नयी कविता हिन्दी साहित्य श्रृंखला की सशक्त एवं जीवन्त प्रक्रिया है। आधुनिक काल की विविध काव्य-प्रवृत्तियों एवं काव्य शैलियों में से यह एक है। नयी कविता का दिशागमन आधुनिक हिन्दी काव्य केलिए महत्वपूर्ण रहा है। नई कविता स्वतंत्रता के बाद लिखी गई वह कविता है, जिसमें नवीन भावबोध, नए मूल्य तथा नया शिल्प विधान है। नई कविता में मानव का वह रूप जो दार्शनिक है, वादों से परे है, जो एकांत में प्रकट होता है, जो प्रत्येक स्थिति मे जीता है, प्रतिष्ठित हुआ है। नई कविता ने लघु मानव को, उसके संघर्ष को बार-बार उकेरा है।

नई कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

नाम से असंतुष्टता होने के कारण प्रयोगवादी कविता को 'नई कविता' का नाम दिया गया। डॉक्टर जगदीश गुप्त और डॉक्टर रामस्वरूप चतुर्वेदी के संपादकत्व में 'नई कविता' नामक अर्धवार्षिक काव्य-संग्रह प्रकाशित होने लगा। इस प्रकार 'नई कविता' नाम प्रचलित हो गया। अतः कहा जा सकता है कि प्रयोगवादी कविता और नई कविता दो विभिन्न धाराएँ न होकर एक काव्य धारा के दो पड़ाव हैं। 'प्रयोगवाद' पहला पड़ाव अथवा बाल्यावस्था तथा 'नई कविता' इसका दूसरा पड़ाव 'विकसित अवस्था' माना जा सकता है। 'नई कविता' नाम भी प्रयोगवाद की भांति भ्रामक ही है। प्रत्येक युग और धारा की कविता अपने से पहले युग की कविता की तुलना में नई होती है। नवीनता तो कविता का सदा से ही गुण रहा है। फिर भी नई कविता भारतीय स्वतंत्रता के बाद लिखी गई उन कविताओं का नाम है जो अपनी वस्तु-छवि और रूप-छवि दोनों में पूर्ववर्ती कविता-छायावाद, प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद से भिन्न है। नई

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

कविता के प्रायः वही कवि हैं जो प्रयोगवादी कविता के थे। किंतु उनके जीवन एवं काव्य-विषयक दृष्टिकोण में अंतर स्पष्ट दिखाई देता है। नई कविता शुद्ध साहित्यिक आंदोलन है। यह किसी वाद विशेष से प्रभावित नहीं है।

नई कविता की प्रमुख प्रवृतियाँ एवं विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

1. **घोर वैयक्तिकता**

नई कविता का प्रमुख विषय निजी मान्यताओं, विचारधाराओं एवं अनुभूतियों का प्रकाशन करना है। नई कविता अहम के भाव से जकड़ी हुई है। वह आत्म-विज्ञापन का घोर समर्थक है। उदाहरण के लिए कुछ पंक्तियाँ देखिए-

"साधारण नगर के
एक साधारण घर में
मेरा जन्म हुआ
बचपन बीता अति साधारण
साधारण खान पान।"

2. **निराशा का भाव**

नई कविता में मनुष्य की असहायता, विवशता, अकेलापन, मानवीय-मूल्यों का विघटन, सामाजिक विषमताओं तथा युद्ध के भयंकर परिणामों का चित्रण किया गया है। इसमें कवि के निराश मन का स्वर होता है। कवि अपने चारों ओर प्रश्न ही प्रश्न अनुभव करता है, किंतु उनका उत्तर उसके पास नहीं है-

"प्रश्न तो बिखरे यहाँ हर और हैं,
किंतु मेरे पास कुछ उत्तर नहीं।"

3. **नई कविता में आस्था और विश्वास**

नई कविता में निराशा, अनास्था और अविश्वास के साथ-साथ आशा और विश्वास के स्वर भी सुनाई पड़ते हैं। वस्तुतः आरंभ में इन कवियों में घोर निराशा दिखाई देती है। लेकिन बाद में यही कवि आशा और विश्वास से परिपूर्ण कविताएँ लिखते हैं। आशा का स्वर आगे चलकर स्वस्थता का प्रतीक बन गया। कविवर अज्ञेय एक स्थल पर विश्वास करते हुए कहते भी हैं-

"आस्था न काँपे,
मानव फिर मिट्टी का भी देवता हो जाता है।"

4. **नई कविता में नास्तिकता**

बौद्धिक एवं वैज्ञानिक युग से संबंधित होने के कारण नई कविता में भावनात्मक दृष्टिकोण से विरोध दिखाई पड़ता है। नए कवि का ईश्वर, भाग्य, मंदिर और अन्य देवी देवताओं में विश्वास नहीं है। वह स्वर्ग-नरक का अस्तित्व नहीं मानता। भारत भूषण अग्रवाल निम्नलिखित पंक्तियों में देवी देवताओं का उपहास उड़ाते हैं-

"रात मैंने एक सपना देखा
मैंने देखा
गणेश जी टॉफी खा रहे हैं।"

5. **नई कविता में व्यंग्य**

नई कविताएँ कवियों ने आज के युग में व्याप्त विषमताओं का व्यंग्यात्मक चित्रण किया है। व्यंग्यात्मक शैली में जीवन और सभ्यता के चित्रण में कवि को अद्‌भुत सफलता भी मिली है। श्रीकांत वर्मा ने 'नगरहीन मन' शीर्षक कविता में आज के नागरिक जीवन की स्वार्थपरता, छल-कपटपूर्ण जिंदगी आदि को स्वर दिया है। अज्ञेय की कविता 'सांप' में भी नागरिक सभ्यता का तीक्ष्ण कटाक्ष है।

"सांप। तुम सभ्य तो हुए नहीं, न होंगे।
नगर में बसना भी तुम्हें नहीं आया।
एक बात पूछूं ? उत्तर दोगे?
फिर कैसे सीखा डसना
विष कहाँ से पाया?"

(अज्ञेय)

6. **अति बौद्धिकता**

नई कविता में अनुभव करने की योग्यता कम है अर्थात उसमें क्रियात्मक रूप को प्रकट नहीं किया गया। कवियों ने बुद्धि के द्वारा उछल-कूद को व्यक्त किया है। नया कवि हृदय को प्रकट न करके केवल बुद्धि का ही अधिक आश्रय लेता है। उन्होंने अपनी बुद्धि से समस्याओं पर गंभीर चिंता व्यक्त की है और अपनी समस्याओं का समाधान भी बौधिकता के धरातल पर खोजते हैं।

7. **नई कविता में क्षण का महत्व**

नई कविता का कवि क्षण विशेष की अनुभूति को विशेष महत्व देता है। उसके लिए सुख का एक क्षण संपूर्ण जीवन से अधिक महत्वपूर्ण है। वह क्षण में ही जीवन की संपूर्णता के दर्शन करता है। देखिए-

"एक क्षणः क्षण में प्रवहमान
व्याप्त संपूर्णता।"

8. **भोगवाद और वासना**

नई कविता में क्षणवादी विचारधारा ने ही भोगवाद को जन्म

दिया। नई कविता में भोगवाद और वासना का मुख्य स्वर है। नया कवि आध्यात्मिक दृष्टिकोण के अभाव के कारण 'खाओ, पियो और मौज उड़ाओ' सिद्धांत का पक्षपाती बन गया। इस सिद्धांत के बहाव में उसने लोक-मर्यादा का उल्लंघन भी किया। वह आत्मिक सौंदर्य की उपेक्षा कर शारीरिक सौंदर्य का वरदान मांगता है। इस प्रकार नई कविता कहीं-कहीं समाज में अश्लीलता, अनैतिकता और अराजकता का वातावरण उत्पन्न करती हुई दिखाई पड़ती है। अज्ञेय की यह पंक्ति इस संदर्भ में देखने के योग्य है। देखिए-

"प्यार है अभिशप्त
तुम कहाँ हो नारी?"

9. **भाषा**

नए कवियों में खड़ी बोली के आधुनिक रूप को अनेक रूपों में प्रयुक्त किया है तथा अनेक नई विशेषताओं एवं क्रिया पदों का भी निर्माण किया है। इन्होंने भाषा के सौंदर्य में वृद्धि के लिए नवीन प्रतीक योजना, बिंब-विधान एवं उपमान योजना को भी अपनाया है। प्राकृतिक बिंब का एक नवीन उदाहरण देखिए-

"बूंद टपकी एक नभ से
किसी ने झुक कर झरोखे से
कि जैसे हंस दिया हो।"

10. **छंद**

नए कवियों ने छंद के बंधन को स्वीकार न करके मुक्त परंपरा में ही विश्वास रखा है। कहीं लोकगीतों के आधार पर अपने गीतों की रचना की है, कहीं अपने क्षेत्र में नए प्रयोग भी किए हैं। कुछ ऐसी भी कविताएँ लिखी हैं जिनमें न लय है न ही गति है बल्कि पद्य की सी शुष्कता और नीरसता है। कुछ नए कवियों ने रुबाइयों, ग़ज़लों और सॉनेट पद्धति का भी उपयोग किया है।

11. **उपमान, प्रतीक एवं बिंब विधान**

नई कविता के कवियों ने सर्वथा नवीन उपमानों, प्रतीकों और बिम्बों का प्रयोग किया है। अज्ञेय तो पुराने उपमानों से तंग आ गए हैं। अतः वे नवीन उपमानों के प्रयोग पर बल देते हैं। नया कवि वैज्ञानिक उपमानों के प्रयोग पर बल देता है। उदाहरणार्थ-

"प्यार का बल्ब फ्यूज हो गया
प्यार का नाम लेते ही
बिजली के स्टोव सी
वो एकदम सुर्ख हो जाती है।"

इन कवियों ने प्राकृतिक, वैज्ञानिक, पौराणिक तथा यौन प्रतीकों का खुलकर प्रयोग किया है। कलात्मक प्रतीक का देखें-

"ऊनी रोएंदार लाल-पीले फूलों से
सिर से पांव तक ढका हुआ
मेरी पत्नी की गोद में
छोटा सा एक गुलदस्ता है।"

नई कविता के बिंब का धरातल भी व्यापक है इन कवियों ने जीवन, समाज और उससे संबंधित समस्याओं के लिए सार्थक और सटीक बिम्बों की योजना की है। ये बिंब कवि कभी मानव जीवन से सुनता है तो कभी प्रकृति से।

नई कविता के प्रमुख कवि एवं उनकी रचनाएँ

12. **भवानी प्रसाद मिश्र**

रचनाएँ- सन्नाटा, गीत फरोश, चकित है दुःख।

13. **कुंवर नारायण**

रचनाएँ- चक्रव्यूह, आमने-सामने, कोई दूसरा नही।

14. **शमशेर बहादुर सिंह**

रचनाएँ- काल तुझ से होड़ है मेरी, इतने पास अपने, बात बोलेगी हम नहीं।

15. **जगदीश गुप्त**

रचनाएँ- नाव के पाँव, शब्द दंश, बोधि वृक्ष, शम्बूक।

16. **दुष्यंत कुमार**

रचनाएँ- सूर्य का स्वागत, आवाजों के घेरे, साये में धूप।

17. **श्रीकांत वर्मा**

रचनाएँ- दिनारम्भ, भटका मेघ, माया दर्पण, मखध।

18. **रघुवीर सहाय**

रचनाएँ- हँसो-हँसो जल्दी हँसो, आत्म हत्या के विरुद्ध।

19. **नरेश मेहता**

रचनाएँ- वनपांखी सुनों, बोलने दो चीड़ को, उत्सव।

Critical Overview / अवलोकन

किसी भी साहित्यिक धारा की तरह प्रयोगवाद में अंतर्विरोध की स्थिति उत्पन्न हुई थी। नकेनवादी उसी अंतर्विरोध का जीवित प्रमाण था। सभी प्रयोगवादी कवि इस बिंदु पर सहमत थे कि "वे राही नहीं राहों के अन्वेषी हैं।"

प्रयोगवाद के चमत्कारी रूपवाद से कविता को मुक्त करने का प्रयास होने लगा। नयी कविता उसी चमत्कारी रूपवाद से

मुक्ति का स्वप्न 'नयी कविता' का क्षेत्र प्रयोगवाद की अपेक्षा अधिक व्यापक और गहरा था। नयी कविता में कई तरह की विचारधाराओं का समन्वय हुआ। परस्पर विपरीत विचारधारा के कवि भी नयी कविता के अंतर्गत अपनी काव्य रचना करते रहे। नयी कविता के प्रतिनिधि कवि अज्ञेय और मुक्तिबोध थे। नयी कविता की स्थापनाओं को प्रतिपादित करने के लिए पर साहित्यिक संस्था और साहित्यिक पत्रिका को प्रस्तावित किया गया था।

प्रयोगवाद और नयी कविता की काव्य प्रवृति भी अलग-अलग हैं। काव्य प्रवृति में कुछ कवियों ने गैर-रोमान्टिक प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया तो कुछ कवियों ने रोमानी प्रवृत्ति को नए अंदाज में अभिव्यक्त करने का प्रयास किया। व्यक्तिवादी और समाजवादी दोनों प्रकार के चिंतन से कविता की काव्यानुभूति को निर्मित किया गया। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की विडम्बना, घुटन और विसंगति को नयी कविता में देखा जा सकता अस्तित्ववाद की धीमी लहर को भी नयी कविता में रेखांकित किया जा सकता तमाम सीमाओं के बावजूद नयी कविता ने अनुभूति की ईमानदारी को प्रामाणिक रूप से रचने का संकल्प नहीं छोड़ा। शिल्प के धरातल पर जितने प्रकार के प्रयोग नयी कविता में हुए हैं शायद ही किसी साहित्यिक आंदोलन में हुए होंगे।

Recap / पुनरावृत्ति

- प्रयोगवाद का उदय
- मुख्य प्रवर्तक अज्ञेय
- प्रयोगवाद समय 1943 ई
- तारसप्तक
- सन् 1940 के बाद
- नयी कविता नामकरण
- नयी कविता का उदय
- नयी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ
- नयी कविता में नवीन प्रतीकों एवं बिम्बों को अपनाया है
- विश्व-बन्धुत्व की भावना
- सभी प्रकार की विघटनकारी प्रवृत्तियों का जोरदार खण्डन

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. नयी कविता की भाषा किस प्रकार के है?
2. नयी कविता के पूर्व के काव्य क्षेत्र का नाम क्या है?
3. नयी कविता की एक मुख्य प्रवृत्ति लिखिए?
4. नये पत्ते पत्रिका का वर्ष?
5. नयी कविता क्षेत्र के दो कवियों का नाम लिखिए?

Answers/ उत्तर

1. नवीन लय से युक्त भाषा।
2. प्रयोगवाद।
3. नयी कविता में नवीन प्रतीकों एवं बिम्बों को अपनाया है।
4. 1954 ई.।
5. जगदीश गुप्त, रामकुमार चतुर्वेदी।

Assignments / प्रदत्त कार्य

1. नयी कविता के मुख्य प्रवृत्तियाँ।
2. नयी कविता के मुख्य प्रवर्तकों के नाम और कविता।
3. अज्ञेय और नयी कविता के बारे में लिखिए?
4. नयी कविता की उदय किसप्रकार है?
5. नयी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ क्या है?
6. "प्रयोगवाद और नयी कविता पूर्ववर्ती कविता से भिन्न" इस कथन के आलोक में काव्य प्रवृत्ति का विश्लेषण करें।
7. प्रयोगवाद पर एक टिप्पणी लिखिए।
8. प्रयोगवाद एवं नयी कविता के वैचारिक परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट करते हुए उसकी शिल्पगत विशेषताएँ बताइए।

SGOU

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

इकाई 5

नयी कविता के प्रमुख कवि- अज्ञेय, मुक्तिबोध, केदारनाथ अग्रवाल, शिव मंगल सिंह सुमन, केदारनाथ सिंह, शमशेर बहादुर सिंह, कीर्ति चौधरी, धर्मवीर भारती, नरेश मेहत्ता, भवानी प्रसाद मिश्र, कुन्वर नारायण आदि- सामान्य परिचय

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- नयी कविता के प्रमुख कवियों का परिचय प्राप्त होता है
- कवियों के काव्यगत विशेषताएँ समझता है
- नयी कविता में उपलब्ध नवीन प्रतीकों एवं बिम्बों को समझता है
- नयी कविता के जन्मदाता अज्ञेय जी का परिचय प्राप्त होता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

नयी कविता काव्य क्षेत्र में अनेक उल्लेखनीय कवियाँ होती है। नयी कविता के बहुत से कवियों की कवितायें पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती है और कुछ के काव्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। नयी कवियों के पंक्तियों में आज की उस अनास्थावादी, अभावग्रस्त, परास्त पीढ़ी की निबिड निराशा ध्वनित हुई है, जिसके लिए प्यार, ईश्वर परस्पर सहानुभूति व सहयोग जैसे शब्द नितांत अर्थहीन होकर मृगमरीचिका बन चुके है।

Keywords / मुख्य बिन्दू

काव्य की नवीनता, कल्पनाशील प्रतिभा, मानवतावाद की प्रतिष्ठा

Discussion / चर्चा

नयी कविता भारतीय स्वतंत्रता के बाद लिखी गयी उन कविताओं को कहा जाता है, जिनमें परम्परागत कविता से आगे नये भाव बोधों की अभिव्यक्ति के साथ ही नये मूल्यों और नये शिल्प विधान का अन्वेषण किया गया। अज्ञेय को 'नयी कविता का भारतेन्दु' कह सकते हैं क्योंकि जिस प्रकार भारतेन्दु ने जो लिखा सो लिखा हो, साथ ही उन्होंने समकालीनों को इस दिशा में प्रेरित किया उसी प्रकार अज्ञेय ने भी स्वयं पृथुल साहित्य सृजन किया तथा औरो को प्रेरित प्रोत्साहित किया। दूसरा सप्तक और तीसरा सप्तक के कवियों को नयी कविता के कवियों में शामिल किया जाता है।

सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय'

हिन्दी में प्रयोगवाद के प्रवर्तक के रूप में सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय', चिरस्मरणीय कवि हैं। उन्होंने हिन्दी कविता को नए विषयनया शिल्प, नए उपमान एवं नवीन भाषा प्रदान की। 'तार सप्तक' के प्रकाशन से उन्होंने हिन्दी काव्य में प्रयोगवाद का सूत्रपात किया जिसका विकास कालान्तर में नई कविता के रूप में हुआ। अज्ञेय बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार थे। उन्होंने काव्य कृतियों के साथ कहानियाँ, उपन्यास, संस्मरण, निबन्ध आदि अनेक विधाओं में

साहित्य रचना की।

अज्ञेय का जन्म मार्च सन् 1911 ई. में पंजाब के करतारपुर नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता हीरानन्द शास्त्री भारत के पुरातत्ववेत्ता थे। इनका बचपन लखनऊ, कश्मीर, बिहार और मद्रास में बीता। इन्होंने लाहौर और मद्रास में शिक्षा ग्रहण की बी.एस.सी तक शिक्षा ग्रहण करने के बाद अंग्रेजी, हिन्दी तथा संस्कृत का स्वाध्याय से अध्ययन किया। उन्होंने कुछ समय तक अमरीका में भारतीय साहित्य और संस्कृत के अध्यापक रहे। ये फिर जोधपुर विश्वविद्यालय में तुलनात्मक साहित्य तथा भाषा अनुशीलन विभाग के निदेशक रहे। अज्ञेय जी सैनिक, विशाल भारत, साप्ताहिक दिनमान, नया प्रतीक नामक पत्र-पत्रिकाओं के सम्पादन से भी सम्बद्ध रहे। बहुमुखी प्रतिभा के धनी इस साहित्यकार का निधन 4 अप्रैल 1987 ई. को हुआ। सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' जी ने गद्य और पद्य दोनों विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई।

इनकी प्रमुख काव्य रचनाएँ हैं, आँगन के पार द्वार, अरी ओ करूणा प्रभामय, हरी घास पर क्षण भर, 4 इन्द्र धनु रौंदे हुए से, बावरा अहेरी, इत्यलम्, कितनी नावों में कितनी बार चिन्ता, पूर्वा, सुनहरे शैवाल, पहले मैं सन्नाटे बुनता हूँ, आदि। अज्ञेय जी की कृति 'कितनी नावों में कितनी बार' को 1978 ई. में ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त निबन्ध, समीक्षा, नाटक, कहानी, उपन्यास, आदि विविध गद्य विधाओं में भी उन्होंने उच्चकोटि की रचनाएँ लिखी हैं। इनके लिखे प्रमुख उपन्यास है- शेखर एक जीवनी (दो भाग), अपने-अपने अजनबी, नदी के द्वीप।

उनके दो निबन्ध संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं। 'त्रिशंकु', 'आत्मनेपद', इसके अतिरिक्त 'जयदोल', 'विपथगा', 'परम्परा', 'कोठरी की बात', 'शरणार्थी' आदि उनके कहानी संग्रह हैं। यात्रा वृत्तान्त के रूप में उनके दो संग्रह प्रकाशित हुए है 1. अरे यायावर रहेगा याद 2. एक बूंद सहसा उछली। अज्ञेय जी ने कई ग्रन्थों एवं पत्र पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया। सप्तकों की श्रृंखला में उन्होंने तार सप्तक, दूसरा सप्तक तीसरा सप्तक एवं चौथा सप्तक का सम्पादन कर नए युग का सूत्रपात किया। नया प्रतीक नामक पत्र का सम्पादन भी अज्ञेय जी ने किया। आगरा से प्रकाशित होने वाले सैनिक नामक दैनिक समाचार-पत्र के सम्पादकीय विभाग में भी वे रहे थे।

गजानन माधव 'मुक्तिबोध'

गजानन माधव 'मुक्तिबोध'(1917-1964 ई.) प्रगतिशील काव्यधारा और समकालीन विचारधारा में भी अत्यंत प्रासंगिक कवियों में से एक गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म 13 नवंबर 1917 को श्योपुर, ग्वालियर में हुआ। उनके दादा जलगाँव, महाराष्ट्र के मूल निवासी थे जो ग्वालियर आकर बस गए थे। शमशेर बहादुर सिंह ने बताया है कि उनके किसी पूर्वज ने संभवतः ख़िलजी काल में मुग्धबोध नामक कोई आध्यात्मिक ग्रंथ लिखा था और उसके ही आधार पर उनके परिवार का नाम मुक्तिबोध चल पड़ा। उनके पिता पुलिस इंस्पेक्टर थे, ओहदा अच्छा था पर आय अच्छी नहीं थी। उनकी आरंभिक शिक्षा उज्जैन, विदिशा, अमझरा आदि कई स्थानों पर हुई। पिता की नौकरी और तबादले के कारण उनकी पढ़ाई का सिलसिला टूटता-जुड़ता रहा, फलतः मिडिल स्कूल की परीक्षा में असफलता मिली जिसे मुक्तिबोध अपने जीवन की पहली महत्त्वपूर्ण घटना मानते थे। बचपन से उनका स्वभाव अंतर्मुखी और आत्मकेंद्री रहा था। वे अत्यंत जिज्ञासु भी थे। चित्त-विचलन भी उनकी एक प्रमुख प्रवृत्ति थी जिसे मुक्तिबोध स्वयं 'स्थानांतरगामी प्रवृत्ति' कहते थे।

युवा जीवन में कविता और बौद्धिक गतिविधियों के प्रवेश के तुरंत बाद ही उनके जीवन में प्रेम का प्रवेश हुआ। बक़ौल शमशेर 'एक जनून गहरा और सुंदर और स्थाई।' शांताबाई से स्वेच्छापूर्ण इस विवाह के बाद उनके जीवन में उस संघर्ष और आर्थिक अभाव का प्रवेश हुआ जो अंतिम क्षण तक उनके साथ चलता रहा। नौकरी के लिए संघर्ष और सिद्धांतों से समझौता नहीं करने की उनकी धुन हमेशा आड़े आती रही। मास्टरी, रिपोर्टरी और एडिटरी के मुश्किल दिनों के बाद 1958 में राजनांदगाँव में प्रोफ़ेसरी के दिनों में जीवन कुछ आसान रहा तो 'ब्रम्हराक्षस' और 'अँधेरे में' जैसी महत्त्वपूर्ण कविताओं की रचना की। 1962 में उनके द्वारा तैयार की गई पाठ्य पुस्तक 'भारतः इतिहास और संस्कृति' को सरकार द्वारा प्रतिबंधित किए जाने से उनके मन को आघात लगा था। जीवन भर साहित्य और साहित्येतर प्रश्नों को लेकर चिंतित रहे मुक्तिबोध 1964 के आरंभ में पक्षाघात के शिकार हुए तो फिर संभल नहीं सके। 11 सितंबर 1964 को अचेतावस्था में ही उनकी मृत्यु हो गई।

चाँद का मुँह टेढ़ा है, भूरी-भूरी खाक धूल, तार सप्तक के कवि, कामायनी एक पुनर्विचार, भारतीय इतिहास और संस्कृति, नई कविता का आत्म संघर्ष और अन्य निबन्ध, नए साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र आदि उनके प्रमुख रचना है।

केदारनाथ अग्रवाल

केदारनाथ अग्रवाल जी ने समाज में मनुष्यता पर वर्षो से होने वाले अत्याचार और शोषण को अपनी कविताओं में दिखाया है। केदारनाथ अग्रवाल हिन्दी साहित्य के प्रगतिवादी कवि माने जाते है। मानवीय मूल्य के साथ देशप्रेम पर कवि ने अपने काव्य के माध्यम से अपने संवेदनाओं की अभिव्यक्ति को रेखांकित किया गया है। साथ ही साथ केदारनाथ जी ने खेतिहर किसानों और मजदूरों के जीवन की दुखभरी दास्तान का यथार्थ में चित्रण किया है। केदारनाथ जी ने अपनी कविताओं के जरिए जागरूकता उत्पन्न करा।

1930 में केदारनाथ अग्रवाल का काव्य जीवन की शुरुआत हुई थी। कविता के अलावा गद्य लेखन में भी उन्होंने रुचि दर्शाई है। मगर काव्य सर्जक के रूप में ही में ही वे सुविख्यात हुए। इनकी प्रकाशित ढाई दर्जन कृतियों में 23 कविता संग्रह, एक अनुदित कविताओं का संकलन, तीन निबंध संग्रह, एक उपन्यास, एक यात्रा वृतांत, एक साक्षात्कार संकलन और एक पत्र संकलन भी शामिल है।

'युग की गंगा', 'जमुन जल तुम', 'मार प्यार की थांपे', 'गुल मेहंदी', 'लोक तथा आलोक', 'फूल नहीं रंग बोलते हैं', 'कहे केदार खरी' आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ है।

शिवमंगल सिंह 'सुमन'

समादृत कवि-लेखक शिवमंगल सिंह 'सुमन' का जन्म 5 अगस्त 1915 को उत्तर प्रदेश के उन्नाव ज़िले के झगरपुर गाँव में हुआ था। उन्होंने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से अपना शोध कार्य पूरा किया। विक्रम विश्वविद्यालय के कुलपति, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के उपाध्यक्ष, भारतीय विश्वविद्यालय संघ के अध्यश, कालिदास अकादेमी के कार्यकारी अध्यक्ष आदि के रूप में उन्होंने अपनी सेवा दी।

प्रसिद्धनारायण चौबे के अनुसार, "अदम्य साहस, ओज और तेजस्विता एक ओर, दूसरी ओर प्रेम, करुणा और रागमयता, तीसरी ओर प्रकृति का निर्मल दृश्यावलोकन, चौथी ओर दलित वर्ग की विकृति और व्यंग्यधर्मी स्वर यानी प्रगतिशील लता की प्रवृत्ति-शिवमंगल सिंह "सुमन की कविताओं की यही मुख्य विशेषताएँ हैं।" उनका प्रधान स्वर मानवतावादी था। शिल्प की दृष्टि से उनकी कविताओं में दुरूहता नहीं है, भाव अत्यंत सरल हैं। राजनीतिक कविताओं में व्यंग्य को लक्षित किया जा सकता है। वह अच्छे वक्ता और कवि-सम्मेलनों के सफल गायक कवि रहे।

उनका पहला कविता-संग्रह 'हिल्लोल' 1939 में प्रकाशित हुआ। उसके बाद 'जीवन के गान', 'युग का मोल', 'प्रलय-सृजन', 'विश्वास बढ़ता ही गया', 'पर आँखें नहीं भरीं', 'विंध्य-हिमालय', 'मिट्टी की बारात', 'वाणी की व्यथा', 'कटे अँगूठों की बंदनवारें' संग्रह आए। इसके अतिरिक्त, उन्होंने 'प्रकृति पुरुष कालिदास' नाटक, 'महादेवी की काव्य साधना' और 'गीति काव्यः उद्यम और विकास' समीक्षा ग्रंथ भी लिखे हैं। 'सुमन समग्र' में उनकी कृतियों को संकलित किया गया है।

उन्हें 'मिट्टी की बारात' संग्रह के लिए 1974 के साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। भारत सरकार ने उन्हें 1974 में पद्मश्री और 1999 में पद्मभूषण से नवाज़ा।

केदारनाथ सिंह

समकालीन कविता के सशक्त कवि केदारनाथ सिंह का जन्म 7 जुलाई 1934 को उत्तर प्रदेश के बलिया ज़िले के चकिया गाँव में हुआ था। उनकी आरंभिक शिक्षा गाँव में हुई, फिर उच्च शिक्षा के लिए बनारस में रहे। उन्होंने अपना शोध ग्रंथ 'आधुनिक हिन्दी कविता में बिंब विधान' आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के मार्गदर्शन में पूरा किया। उन्हीं की प्रेरणा से उन्होंने बांग्ला सीखी और रवींद्रनाथ टैगोर के बांग्ला साहित्य को पढ़ने का प्रयास किया। वह तब ब्रिटिश कवि डाइलेन टामस, अमरीकी कवि वालेस स्टीवेंस और फ्रेंच कवि रेने शा के प्रशंसक भी रहे थे और उनकी कुछ कविताओं का अनुवाद किया था।

केदारनाथ सिंह की कविता यात्रा का आरंभ एक गीतकार के रूप में हुआ। वह अज्ञेय के संपादन में प्रकाशित 'तीसरा सप्तक' (1959) के सात कवियों में से एक थे। सप्तक में शामिल गीतों और कविताओं ने उन्हें साहित्यिक दुनिया से परिचित कराया। उनका पहला कविता संग्रह 'अभी, बिल्कुल अभी' 1960 में प्रकाशित हुआ। इस संग्रह की कविताओं की नवीनता और तात्कालिकता ने तुरंत ही उन्हें एक अलग पहचान दिलाई।

उनका दूसरा कविता संग्रह 'ज़मीन पक रही है' बीस वर्षों के लंबे संयम और अंतराल के बाद 1980 में आया। इस संग्रह के साथ वह कविता समकाल के समादृत कवि के रूप में स्थापित हुए। वह बिंब-विधान और शिल्प-विधान के अपूर्व कवि कहे जाते हैं जिनके पास कविता की सरल भाषा और सरस संप्रेषण

है। बिंबों की नवीनता, ठेठ देसी प्रतीकों का परिष्कृत प्रयोग, कथाओं-उपकथाओं का उपयोग, कविता में वार्तालाप और मुक्त छंद में भी एक गीतात्मक लय का प्रवाह उनकी विशिष्टता है। वह अपनी काव्य संवेदना में भारतीय नागर और पुरबिहा होने के साथ ही एक विश्व नागरिक होने की प्रतिभा दर्शाते हैं। बाद की पीढ़ियों पर उनकी कविताओं का एक संतुलित प्रभाव देखा जाता है।

केदारनाथ सिंह की कविताओं का रोमानी 'अपनापन' उन्हें वृहत कविता पाठकों से जोड़ता है। यही कारण है कि इंटरनेट के उपयोग में इज़ाफ़े और सोशल मीडिया के आगमन के साथ केदारनाथ सिंह की लोकप्रियता में और वृद्धि हुई है। वह साहित्यिक कविताओं के सबसे लोकप्रिय कवियों में से एक हैं। उनकी कुछ कविताएँ/कविता पंक्तियाँ हिन्दी कविता की सर्वाधिक उद्धृत पंक्तियों में शामिल हैं।

केदारनाथ सिंह अध्यापन के पेशे से जुड़े रहे थे। कई महाविद्यालयों में अध्यापन के बाद वह 1976 में जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केंद्र से जुड़े जहाँ बतौर आचार्य और अध्यक्ष अपनी सेवा दी। उनकी कविताओं पर विभिन्न विश्वविद्यालयों में शोध कार्य हुए हैं। उनकी कविताओं का अनुवाद सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं के साथ ही अँग्रेज़ी, जर्मन, रूसी, स्पेनिश आदि विदेशी भाषाओं में भी हुआ है।

'अभी बिल्कुल अभी' (1960), 'ज़मीन पक रही है' (1980), 'यहाँ से देखो' (1983), 'अकाल में सारस' (1988), 'उत्तर कबीर और अन्य कविताएँ' (1995), 'बाघ' (1996), 'तालस्ताय और साइकिल' (2005) और 'सृष्टि पर पहरा' (2014) उनके काव्य-संग्रह हैं। उनकी चयनित कविताओं के कुछ अन्य संग्रह भी प्रकाशित हैं। 'कल्पना और छायावाद', 'आधुनिक हिन्दी कविता में बिंब-विधान', 'मेरे समय के शब्द', 'क़ब्रिस्तान में पंचायत' के रूप में उन्होंने गद्य में योगदान किया है। इसके अतिरिक्त, ताना-बाना (आधुनिक भारतीय कविता से एक चयन), समकालीन रूसी कविताएँ, कविता दशक, साखी (अनियतकालिक पत्रिका), शब्द (अनियतकालिक पत्रिका) उनके संपादन में प्रकाशित हुआ है।

उन्हें 'अकाल में सारस' के लिए 1989 के साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उन्हें 2014 में प्रतिष्ठित ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

शमशेर बहादुर सिंह

शमशेर बहादुर सिंह हिन्दी साहित्य की नई कविता के प्रमुख कवि माने जाते हैं। इनका अज्ञेय के तार सप्तक में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनका जन्म 13 जनवरी, सन् 1911 ई. को उत्तरांचल के देहरादून जिले के एक साधारण मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। इनकी प्रारंभिक शिक्षा देहरादून के एक स्कूल में हुई। हाई स्कूल और इंटर की परीक्षा गोंडा से प्राप्त की। इन्होंने बी. ए. तथा एम. ए. पूर्वार्ध की उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय से ग्रहण की।

इनकी प्रारंभ से ही चित्रकला में अधिक रुचि थी जिसका प्रयोग इन्होंने अपनी रचनाओं में किया है। इन्होंने दो वर्ष तक 'सुमित्रानंदन पंत' के रूपाभ पत्र में कार्य किया। इसके बाद वे कहानी और नया साहित्य आदि पत्र-पत्रिकाओं के संपादक मंडल में रहे। ये दिल्ली विश्वविद्यालय के उर्दू विभाग में कोश से संबंधित कार्य भी करते रहे। तत्पश्चात् विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में 'प्रेमचंद सृजन' पीठ के अध्यक्ष पद पर कार्यरत रहे। सन् 1977 ई. में 'चुका भी हूँ नहीं मैं' काव्य-संग्रह पर इन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से अलंकृत किया गया। इन्हें साहित्य को उत्कृष्टता के लिए कबीर सम्मान सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित भी किया गया। अंततः सन् 1993 ई. में दिल्ली में आप अपना महान् साहित्य हिन्दी जगत को सौंपकर चिरनिद्रा में लीन हो गए।

कीर्ती चौधरी

'तीसरा सप्तक' में शामिल कवयित्री कीर्ति चौधरी का जन्म 1 जनवरी 1934 को उत्तर प्रदेश के उन्नाव ज़िले के एक ज़मींदार कायस्थ परिवार में हुआ था। उनका मूल नाम कीर्तिबाला सिन्हा था, कविताएँ कीर्ति चौधरी नाम से प्रकाशित कराती थीं। शिक्षा-दीक्षा उन्नाव और कानपुर से हुई। उनमें साहित्यिक संस्कार परिवार से ही पड़ा। उनकी माँ सुमित्रा कुमारी सिन्हा हिन्दी की लोकप्रिय कवयित्री सह गीतकार थीं और पिता भी साहित्यिक अभिरुचि रखते थे। उनके परिवार का प्रेमचंद, निराला जैसे साहित्यिकों से निकट संबंध रहा था। उनका विवाह ओंकारनाथ श्रीवास्तव से हुआ जो हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ रेडियो प्रसारकों में से एक थे और स्वयं भी साहित्यिक रचनाएँ करते थे। उनके भाई अजित कुमार भी हिन्दी में सुपरिचित नाम रहे हैं जिन्होंने 'बच्चन रचनावली' का संपादन किया है और कई संस्मरण लिखे हैं।

उनकी कविताओं में एक मोहक प्रगीतात्मकता पाई जाती है और उनमें गाँव-क़स्बे-शहर का संपूर्ण जीवन मौजूद है।

उन्होंने प्रतीकों और बिंबों का भी बहुतायत से प्रयोग किया है। 'तीसरा सप्तक' में उनके साथ रहे कालांतर के प्रसिद्ध कवि केदारनाथ सिंह ने कहा था- "महादेवी वर्मा के बाद हिन्दी कविता में जो एक रिक्तता आई थी, उसे कीर्ति अपने मौलिक लेखन से पाटती हैं। उनकी कविता एक नए साँचे में थी जिसकी बनावट अलग थी। उसमें एक ताज़गी थी। और अपनी रचनाओं के तल में उनके पास एक ख़ास तरह का स्त्री सुलभ संवेदना का ढाँचा था जो उनके समय में किसी और के पास नहीं था।" 13 जून 2008 को लंदन में उनका निधन हुआ।

धर्मवीर भारती

महान गद्य-लेखक एवं उच्चकोटि के पत्रकार डॉ. धर्मवीर भारती का जन्म 25 दिसम्बर, सन् 1926 को इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. और पी.एच.डी. की उपाधियाँ प्राप्त की। उन्होंने कुछ वर्षों तक वहीं से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक पत्र संगम का संपादन किया।

धर्मवीर भारती इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक भी रहे। सन् 1959 में वे मुम्बई से प्रकाशित होनेवाले हिन्दी के प्रसिद्ध साप्ताहिक पत्र धर्मयुग के सम्पादक बने। सन् 1972 में धर्मवीर भारती को भारत सरकार ने पद्मश्री की उपाधि से विभूषित किया। 4 सितम्बर, सन् 1997 में उनका निधन हो गया।

धर्मवीर भारती प्रतिभाशाली कवि कथाकार व नाटककार थे। उनकी कविताओं में रागतत्त्व की रमणीयता के साथ चौद्धिक उत्कर्ष की छटा दर्शनीय है। कहानियों और उपन्यासों में उन्होंने सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्याओं को हुए बड़े ही जीवन्त चरित्र अंकित किए हैं। भारती जी में समाज की विद्रूपता पर व्यग्य करने की विलक्ष क्षमता थी।

इनकी लेखनी में हिन्दी साहित्य की कहानी निबंध, एकाकी, उपन्यास, नाटक, आलोचना, संपादन एवं काव्य क्षेत्र में विभिन्न पुस्तकों की रचना किये! अपनी रचनाओं में भावात्मक, समीक्षात्मक, वर्णात्मक शैलियों का प्रयोग करके इन्हे और अधिक रुचिकर बना देते थे!

"अनुप्रिया", "गुनाहों का देवता", "ठण्डा लोहा", "अन्धायुग", "सात गीतवर्ष", "सूरज का सातवाँ घोड़ा", "मानस मूल्य", "साहित्य", "नदी प्यासी", "कहनी-अनकहनी", "ठेले पर हिमालय", "परयान्ति", "देशान्तर" आदि उनकी उल्लेखनीय कृतियाँ है।

नरेश मेहता

नई कविता के सर्वप्रमुख कवियों में से एक श्री नरेश मेहता का जन्म मालवा के शाजापुर क़स्बे में 15 फ़रवरी 1922 को हुआ। उनका नाम 'पूर्णशंकर' रखा गया। नरसिंहगढ़ की राजमाता ने एक काव्य सभा में उनके काव्यपाठ पर प्रसन्न हो उन्हें 'नरेश' की उपाधि दी। कालांतर में उन्होंने यही नाम रख लिया।

वह दो-ढाई वर्ष के थे तो उनकी माता की मृत्यु हो गई। इस संताप में पिता तटस्थ और एकाकी हो गए। उन्हें आश्रय चाचा शंकरलाल मेहता का मिला, जिन्होंने पहले अपने पास रख उनका लालन-पालन किया, बाद में जब उन्हें बुआ के पास रहने के लिए भेजा गया, तब भी उनका ख़र्च उठाते रहे। नरेश मेहता ने स्वीकार किया है- "मेरे व्यक्तित्व में दो व्यक्तित्व स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं, साहित्यिक असंग व्यक्तित्व मेरे पिता का है और उदार, उल्लसित और वैभवपूर्ण व्यक्तित्व मेरे चाचा का।" बुआ के यहाँ वह स्नेह से रिक्त रहे। उन दिनों के बारे में उन्होंने लिखा है- "घरों में जैसे फ़ालतू चीज़ें एक जगह डाल दी जाती है, आप भी कहीं डल जाइए।" बड़ी बहन शांति उनका स्नेहमयी संबल बनी रहीं। उनकी इस पारिवारिक पृष्ठभूमि की उनके व्यक्तित्व निर्माण में बड़ी भूमिका रही। उनका एकाकीपन उन्हें प्रकृति के निकट लेकर आया। प्रकृति के प्रति संवेदन उन्हें प्रेरित करता रहा, प्रकृति उनके स्नेह का मूल आधार है।

श्री नरेश मेहता हिन्दी कविता में भारतीय आभिजात्य एवं सांस्कृतिक परंपरा के कवि कहे जाते हैं। नई कविता की अतिबौद्धिकता के प्रतिरोध में वह परंपरा के सांस्कृतिक-राग की ओर उन्मुख हुए। वेद-उपनिषद और रामायण-महाभारत महाकाव्यों की मिथकीय चेतना का उनके काव्य में प्रवेश हुआ। इस कारण उन्हें 'वैष्णव परंपरा का कवि' भी कहा गया है।

उनका काव्य-लेखन 1935-36 से आरंभ हुआ। मुक्तिबोध, प्रभाकर माचवे, नेमीचंद्र जैन, सोहनलाल द्विवेदी, सुभद्राकुमारी चौहान सरीखे कवियों से प्रशंसा पाकर वह उज्जैन में विद्यार्थी जीवन से ही कवि के रूप में प्रसिद्ध होने लगे थे। कालांतर में वह पढ़ाई के लिए काशी गए। वहीं पंडित केशवप्रसाद मिश्र की प्रेरणा से वेदों की ओर उन्मुख हुए। वह 'दूसरा सप्तक' में शामिल प्रमुख कवियों में से एक हैं।

कविताओं के अलावे उन्होंने उपन्यास, कहानी, नाटक, संस्मरण, आलोचना, अनुवाद आदि विधाओं में भी रचनात्मक योगदान किया है।

उनके साहित्यिक जीवन के निर्माण में उनकी पत्नी महिमा मेहता का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। उन्होंने न केवल उनके पारिवारिक आर्थिक भार को कम किया बल्कि उन्हें साहित्य सृजन के लिए लगातार प्रेरित करती रहीं। दिल्ली, इलाहाबाद, उज्जैन आदि कई शहरों में अपना जीवन गुज़ारते हुए जीवन के उत्तरकाल में वह भोपाल आकर बस गए। यहीं 22 नवंबर 2000 को उनका देहावसान हुआ।

उन्हें 1988 में साहित्य अकादेमी पुरस्कार और 1992 में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

नरेश मेहता जी की प्रमुख रचनायें इस प्रकार हैं- बोलने दो चीड़ को, अरण्या, उत्तर कथा, एक समर्पित महिला, कितना अकेला आकाश चैत्या, दो एकान्त, धूमकेतुः एक श्रुति, पुरुष, प्रति श्रुति, प्रवाद पर्व, यह पथ बन्धु था।

कुंवर नारायण

हिन्दी साहित्य के प्रमुख कवि तथा कला की अनेक विधाओं में गहरी रूचि रखने वाले कवि कुंवर नारायण जी का जन्म 19 सितम्बर सन् 1927 को उत्तर-प्रदेश के फैजाबाद जिले में हुआ था। कुंवर जी ने विज्ञान वर्ग से इंटर तक की शिक्षा एक अभ्यर्थी के रूप में पूर्ण की थी और इन्होने लखनऊ विश्विद्यालय से अंग्रेजी में सन् 1951 में एम.ए.भी किया था। अध्यन के दौरान ही वे हिन्दी साहित्य का ज्ञान भी प्राप्त करने लगे थे।

कवि नारायण जी की काव्य यात्रा चक्रव्यूह महाकाव्य से शुरु हुई। अतः इन्होंने सिनेमा, कहानी, रंगमंच तथा अन्य कलाओं पर लेख भी लिखे। बचपन से ही इनकी रूचि साहित्य में थी जिसके कारण वे हिन्दी साहित्य के जाने माने कवि कहलाये। इन्होने 1973 से 1979 तक संगीत नाटक अकादमी के उपाध्यक्ष के रूप में भी कार्य किया। इनके काव्य संग्रह 'परिवेश हम तुम' के माध्यम से इन्होने मानवीय संबंधों के जीवन के बारे में बताया।

Critical Overview / अवलोकन

प्रयोगवादी कवियों ने आगे चलकर नई कविताओं का रूप ले लिया। नवीन कविताओं के प्रमुख विषय चमत्कार और जीवन यथार्थ थे। नई कविताएँ परिस्थितियों की उपज हैं। इनका लेखन स्वतंत्रता के बाद किया गया था। नवीन भावबोध, नए मूल्य, शिल्प विधान आदि नई कविताओं की प्रमुख विशेषताएँ हैं। प्रथम विश्व युद्ध के बाद पहली बार मनुष्य की असहायता, विवशता और निरूपायता सामने आई। साथ ही मनुष्य ने अपने अस्तित्व का संकट भी अनुभव किया। हिन्दी के ऐतिहासिक युग नई कविता में मानव का दार्शनिक रूप वादों से परे है और एकांत में प्रगट होता है। नई कविता युग एक प्रतिष्ठित युग है। साथ ही यह प्रत्येक परिस्थिति में अपने अस्तित्व को बनाए रखने वाला युग है। नई कविताओं में लघु मानव और उसके संघर्ष का अनूठा वर्णन किया गया है।

नई कविता के कवि दो परिवेशों को लेकर लिखने वाले कवि हैं। ग्रामीण और शहरी दोनों परिवेशों का नई कविताओं में वर्णन किया गया है। इसके अलावा कुंठ, असमानता, घुटन और कुरूपता का वर्णन किया गया है। गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भारती, शमशेर बहादुर सिंह आदि शहरी परिवेश के कवि हैं। इनके अलावा भवानीप्रसाद मिश्र, केदारनाथ सिंह, नागार्जुन आदि ग्रामीण परिवेश के कवि हैं। नई कविता को वस्तु की तुलना में शिल्प की नवीनता ने ज्यादा गंभीर चुनौती दी है। नए शिल्प अपनाना तथा परंपरागत शिल्प को तोड़ना कठिन कार्य था। इसलिए नई कविता युग में छोटी-छोटी कविताओं की प्रचुरता रही। प्रभावशीलता की दृष्टि से ये छोटी-छोटी रचनाएँ भी बड़े-बड़े वृत्तांतों को सफलता के साथ वर्णित करती हैं। नई कविता में व्यंग्यों की प्रधानता रही है। इसका कारण तत्कालीन समाज में घुटन, आक्रोश और नैराश्य के भावों का स्वाभाविक रूप से उपस्थित रहना है।

नयी कविता के काव्य धारा अभिव्यंजना शैली में पर्याप्त परिष्कृति की अपेक्षा है। उन्होंने काव्य में नवीन संभावनाओं का दर्शन किया है।

नई कविता स्वतंत्रता के बाद लिखी गई वह कविता है जिसमें नवीन भावबोध, नए मूल्य तथा नया शिल्प विधान है। नई कविता में मानव का वह रूप जो दार्शनिक है, वादों से परे है, जो एकांत मे प्रकट होता है, जो प्रत्येक स्थिति मे जीता है, प्रतिष्ठित हुआ है। उसने लघु मानव को, उसके संघर्ष को बार-बार वर्ण्य बनाया है। नई कविता मे दोनों परिवेशों को लेकर लिखने वाले कवि है। एक ओर ग्रामीण परिवेश, दूसरी ओर शहरी जिसमे कुंठा, घुटन, असमानता, कुरूपता आदि का वर्णन हुआ है।

नई कविता को वस्तु की उपेक्षा शिल्प की नवीनता ने अधिक गंभीर चुनौती दी है। नए शिल्प अपनाना और परम्परागत शिल्प को तोड़ना दुष्कर कार्य था। अतएव कुछ कवितायों को छोड़कर छोटी-मोटी कविताओं की प्रचुरता रही।

और प्रभावशीलता की दृष्टि से ये छोटी-छोटी रचनाएँ भी बड़े-   बड़े वृत्तान्तों से कही अधिक सफल बन पड़ी हैं।

Recap / पुनरावृत्ति

- नयी कविता क्षेत्र का उदय
- अज्ञेय जन्मदाता
- सन् 1954 ई नये पत्ते पत्रिका
- नयी कविता के काव्यगत विशेषताएँ
- प्रमुख प्रवृत्तियाँ
- प्रमुख कवि
- प्रमुख कवियों के योगदान
- नयी कविता क्षेत्र के महत्व

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 'ज़मीन पक रही है' किसकी कृति है?
2. 'अपथगा' के रचयिता कौन है?
3. धर्मवीर भारती के दो रचनाओं के नाम लिखिए?
4. अज्ञेय जी को किस रचना केलिए ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला?
5. अज्ञेय जी द्वारा संपादित पत्रिका का नाम लिखिए?
6. अज्ञेय जी को भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त रचना क्या है?
7. अज्ञेय का निधन कब हुआ?
8. अज्ञेय का पूरा नाम क्या है?

Answers/ उत्तर

1. केदारनाथ सिंह।
2. मथन वात्स्यायन।
3. कनुप्रिया, ठंडा लोहा।
4. कितनी नावों में कितनी बार (काव्य)
5. प्रतिमान।
6. कितनी नावों में कितनी बार - 1978
7. 4 अप्रैल 1987 को हुआ।
8. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय।

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. नयी कविता के प्रमुख कवियों का परिचय दीजिए।
2. नयी कविता के जन्मदाता अज्ञेय जी के बारे में टिपण्णी लिखिए।
3. नरेश मेहता का जीवन परिचय दीजिए।
4. अज्ञेय के प्रमुख रचनाओं का परिचय दीजिए।
5. कीर्ति चौधरी के बारे में आपको क्या जानता है? व्यक्त कीजिए।
6. नयी कविता के बारे में टिपण्णी लिखिए।

Reference/ सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. अज्ञेय - विद्या निवास मिश्र।
2. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी।
3. अज्ञेय रचनावली - अज्ञेय।
4. अज्ञेय ग्रंथावली - कृष्णदत्त पालिवाल।
5. अज्ञेय कवि और काव्य - डॉ. रतन कुमार पाण्डेय।
6. अज्ञेय कवि - ओमप्रकाश अवस्थी।
7. अज्ञेय की कविताः एक मूल्यांकन - डॉ. चन्द्रकांत।
8. आज के प्रतिनिधि कवि अज्ञेय - डॉ. विद्यानिवास मिश्र।
9. अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या - डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी।
10. अज्ञेय की नयी कविता - डॉ. चन्द्रकांत त्रिपाठी।
11. शिविर से सागर तक - रामकमल राय।
12. समकालीन हिन्दी कविता - डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी।
13. अज्ञेय - डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी।
14. अज्ञेयः सर्जना के विविध आयाम - डॉ. सदानंद प्रसाद गुप्त।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

BLOCK - 02

साठोत्तरी और समकालीन कविता

इकाई 1

साठोत्तरी कविता- उदय के कारण, परिस्थितियाँ और प्रमुख प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- सठोत्तरी कविता के बारे में जानकारी प्राप्त करता है
- 1960 के बाद का काव्यान्दोलनों से परिचय प्राप्त करता है
- अकविता की जानकारी प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

नयी कविता में आज़ादी के बाद की स्थितियों का जैसे बेरोज़गारी, लाचारी, राजनैतिक भ्रष्ट्राचार, नेताओं का भ्रष्टाचार, महंगाई, अनैतिकता आदि का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया गया है। नयी कविता का दौर धीमे-धीमें बदलता रहा, जैसे युग में बदल होता रहा। वैसे कवियों ने उसे प्रस्तुत किया। नई कविता का एक दौर ऐसे आया कि राजनीति को अधिक महत्व दिया जाने लगा राजनीतिक सरोकारों को ज्यादा अहमियत दी गई। अज्ञेय, धर्मवीर भारती, जैसे कवि निराकार और आध्यात्मिक चिन्तन में एकग्र हो गए जिसके कारण नई कविता में परिवर्तन आने लगा। नये कवियों में नई कविता पर बहस होने लगी। नई कविता की यथार्थवादिता तथा बौद्धिकता का तथा कविता की अप्रासंगिकता के कारण नई कविता में बदलाव आना जरूरी हो गया। नई कविता के बाद साहित्य में कविता के क्षेत्र में और एक नई कविता ने प्रवेश किया जिसे अकविता कहा जाता है। अकवितावादी, दौर में अनेक युवा कवि शामिल हुए जो अपने आप को कवि नहीं बल्कि अकवि, कहना उचित समझते थे। अकविता, का दौर कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण माना जाता है। डॉ. श्याम परमार का नाम विशेष रूप से उभरकर आता है। अतुल विमल, श्याम परमार, जगदीश चतुर्वेदी, राजकमल चौधरी, भारत भूषण आदि कवि अकविता के रहे हैं। श्रीकान्त वर्मा, चन्द्रकांत देवताले, जगदीश चतुर्वेदी, केदारनाथ सिंह, शमशेर, परमानन्द श्रीवास्तव, सौमित्र मोहन, त्रिलोचन आदि कवियों के नाम अकविता सम्प्रदाय, में शामिल किये गए। लेकिन बाद में ये कवि समकालीन कविता के मुख्य हस्ताक्षर बने।

अकविता का दौर भी अधिक समय तक रह न पाया। यानी अकविता का धीमे-धीमें ह्रास होने लगा, और फिर एक नया दौर आया सन् 1960 के बाद साहित्य में काफी परिवर्तन हुआ, एक नई कविता का आन्दोलन शुरु हुआ, जिसे साठोत्तरी कविता या समकालीन कविता कहते हैं।

Key Themes /मुख्य प्रसंग

- साठोत्तरी कविता का नाम, तथा उसका दौर, आन्दोलन आदि की चर्चा की गई है।
- साठोत्तरी कविता की विशेषताएँ पर चर्चा की गई है।
- तत्कालीन समाज का परिचय प्राप्त करता है।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Discussion / चर्चा

साठोत्तरी हिन्दी साहित्य का पहला दशक (1960-70) आधुनिकतावाद से विशेष प्रभावित है। हिन्दी साहित्य के इतिहास के अन्तर्गत सन् 1960 ई. के बाद मुख्यतः नवलेखन (नयी कविता, नयी कहानी आदि) युग से काफी हद तक भिन्नता की प्रतीति कराने वाली ऐसी पीढ़ी के द्वारा रचित साहित्य है जिनमें विद्रोह एवं अराजकता का स्वर प्रधान था। साठोत्तरी लेखन में विद्रोही चेतनायुक्त आन्दोलन प्राथमिक रूप से कविता के क्षेत्र में मुखर हुई। इसलिए इससे सम्बन्धित सारे आन्दोलन मुख्यतः कविता के आन्दोलन रहे।

साठोत्तरी काव्य आन्दोलन

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी काव्य के अन्तर्गत जहाँ प्रबन्ध एवं गीति के क्षेत्र में आर्दशमुखी सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रवृत्तियों का विकास सहज स्वभाविक रूप में हो रहा था वहाँ मुक्तक के क्षेत्र में क्रमशः यथार्थवादी, व्यक्तिवादी एवं परम्परा-विरोधी उच्छृंखल प्रवृत्तियां पनपती जा रही थीं। 'प्रयोगवाद' एवं नयी कविता' के आन्दोलन की सफलता ने न केवल हिन्दी मुक्तक के क्षेत्र में घोर व्यक्तिवाद, अति यथार्थवाद, उन्मुक्त भोगवाद, क्षणवाद एवं लघुमानवतावाद की प्रतिष्ठा को बढ़ावा दिया अपितु उसने ऐसे नुस्खों एवं फार्मूलों का भी प्रचार-प्रसार किया जिनके द्वारा व्यक्तियों का कोई भी समूह बिना काव्य-प्रतिभा एवं साधना के अपनी शुष्क, अस्पष्ट, दुरूह एवं काव्यत्व शून्य उक्तियों के आधार पर भी अपने युग के श्रेष्ठ कवियों की पंक्ति में विराजमान हो सकता है। अब यह भली-भाँति स्पष्ट हो गया था कि यदि पाँच-सात व्यक्ति मिलकर कविता का कोई नया नाम उछाल सकें, सामूहिक रूप में कोई 'कविता-संग्रह' प्रकाशित कर सकें, साथ ही कोई छोटी-बड़ी अनियतकालीन पत्रिका निकाल सकें तथा अपने बेतुके वक्तव्यों द्वारा चर्चा का विषय बनते हुए बहुचर्चित होने का गौरव प्राप्त कर सकें तो यह काव्य के क्षेत्र में प्रतिष्ठित होने के लिए पर्याप्त है। ऐसी स्थिति में भले ही सामान्य पाठक एवं आलोचक उनकी रचनाओं में काव्यत्व के अभाव का आरोप लगाते रहें किन्तु उनका मुह बन्द करने के लिए उन्होंने परम्परावादी, आधुनिक बोध-शून्य रूढ़िवादी या पोंगापंथी घोषित किया जा सकता है। इसका परिणाम यह हुआ कि सन् 1960 के बाद एक ओर तो लघु पत्रिकाओं की बाढ़ आ गयी, जिनकी संख्या सम्भवतः कई दर्जन है तो दूसरी ओर प्रत्येक लघु-पत्रिका की छत्र-छाया में कविता का कोई न कोई नया वाद या रूप चलने लगा। थोड़े ही वर्षों में हिन्दी कविता में इतने प्रकार की कविताएँ उभर कि जिन्हें देखकर आश्चर्य होता है। डॉ. जगदीश गुप्त ने इन कविताओं के लगभग चार दर्जन नामों की सूची दी है।

सन् 1960 के बाद विभिन्न संज्ञाओं से विभूषित इन काव्यान्दोलनों में से अधिकांश तो ऐसे हैं जो अपने जन्म के साथ ही समाप्त हो गये, आगे नहीं बढ़ सके। कुछ अवश्य ऐसे हैं जो वर्ष, दो वर्ष या अधिक से अधिक पाँच-सात वर्ष की आयु प्राप्त कर सके। फिर भी जो आन्दोलन अपेक्षाकृत अधिक स्थिर एवं दृढ़ हो पाये उन्हें भी उनकी आधारभूत प्रेरणा के अनुसार गणपतिचन्द्र गुप्त ने तीन वर्गों में विभक्त किया गया है- (1) निषेध मुलक, (2) संघर्ष मूलक एवं (3) आस्था मुलक। निषेध मुलक वर्ग में उन आन्दोलनों को लिया जा सकता है जिन्होंने परम्परागत सामाजिक, नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों का निषेध करते हुए घोर व्यक्तिवाद, उच्छृंखलन यौनवाद एवं नग्न भोगवाद को आश्रय दिया जबकि संघर्ष मूलक वर्ग के आन्दोलनों में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थितियों के प्रति असन्तोष एवं रोप व्यक्त करते हुए उनके विरुद्ध संघर्ष का आह्वान किया गया। आस्थामूलक वर्ग में परम्परागत मूल्यों को स्वीकार करते हुए उनकी पुनप्रतिष्ठा पर बल दिया गया।

1. **निषेध मूलक आन्दोलन**

इस युग के निषेधमूलक काव्य आन्दोलन 'विद्रोही पीढ़ी', 'अभिनव काव्य', 'बीट कविता', 'अकविता' आदि संज्ञाओं के रूप में प्रचलित हुए। सातवें दशक के आरम्भ में सात कवियों का एक काव्य-संग्रह इलाहाबाद से 'विद्रोही पोढ़ी' नाम से प्रकाशित हुआ। इसमें एक ओर तो केशनी प्रसाद चौरसिया जैसे कवियों की यौन विकृतियों से परिपूर्ण कविताएँ थी तो दूसरी ओर 'विद्रोह की दिशा' भी दिखाने की चेष्टा की गयी। वस्तुतः यह संग्रह अपने आप में अन्तविरोध का उदाहरण है।

सन् 1963 में जगदीश चतुर्वेदी के सम्पादन में चौदह कवियों का काव्य-संग्रह 'प्रारम्भ' शीर्षक से प्रकाशित हुआ जिसमें 'अभिनव काव्य' की स्थापना का दावा किया गया। यह अभिनव काव्य 'नयी कविता' से ही प्रेरित है। इन सब का लक्ष्य वास्तव में नयी कविता का विरोध करना नहीं अपितु उससे जुड़ना था किन्तु वे साथ ही यह चाहते थे कि 'नयी कविता' की अत्याधुनिक उपलब्धियों का श्रेय भी उन्हें दे दिया जाय। दूसरे शब्दों में वे अपने आपको 'नयी कविता' का पूरक बनाकर उसकी श्रेष्ठता के भी अधिकारी बन जाना चाहते थे। किन्तु यह बात स्वीकार्य नहीं हुई। जगदीश चतुर्वेदी जब नयी

कविता के साथ जुड़ने में सफल नहीं हो सके तो अगले वर्ष ही सन् 1964 में उन्होंने डॉ. इन्द्र नाथ मदान एवं रमेश कुन्तल 'मेघ' द्वारा सम्पादित 'अभिव्यक्ति' में नयी कविता के विरोध में वक्तव्य देते हुए 'अभिनव काव्य' को एक नया नाम 'एंटी पोइट्री या अकविता' दे डाला।

अकविता, एक नये तेवर, एक अलग प्रकार के अन्दाज की पहचान देती है। अकविता में युगीन परिवेश और मानसिकता को उभारकर लाया गया है। अकविता में सौन्दर्य बोध का अभाव जाहिर हैं। जगदीश चतुर्वेदी के अनुसार 'अकविता अस्वीकृति और निषेध की अनिवार्यता को सहज मानकर स्वीकार करती है। उसे किसी प्रकार के व्यामेह या अतीतोन्मुख वैभव अवता रागात्मकता से तीव्र घृणा है।'

अकविता में कवियों ने विशिष्ट मानसिकता का चित्रण किया है। कविता के कवियों की मानसिकता के लिए उसका नगर बोध अधिक जिम्मेदार है। तात्पर्य यह कि रचनाकार ने नगर बोध को उन्हीं तरह से पहचाना है अधिकांश कवि नगर तथा महानगरों में रहते है। अकेलापन, रिश्ते की टूटन तथा आपसी अजनबीपन की भावना अकविता के कवियों की मानसिकता को उद्घाटित करती है।

अकविता के कवियों ने देह के व्याकरण को उसी तरह से पढ़ा है क्यों कि यह रचनाकार मध्यवर्ग से संम्बद्ध है और मध्यवर्ग के व्यक्ति को यौनगत वर्जनाओं को अपनाया था, जिसके कारण कवियों की सेक्स अनुभूति झिझक से अलग है।

इन रचनाकारों ने सेक्स को अधिक महत्व दिया, कामुक विहवलता, व्यंग्य और विडम्बना में बदल गई। अकविता में सेक्स घिनौनी रूप में उभरकार आने लगा। अकविता के रचनाकारों ने स्त्री की योनि, जांघ, नाभि, संभोग, स्तन जैसे शब्दों का प्रयोग अपनी कविताओं में किया।

अकविता का दौर भी अधिक समय तक रह न पाया। अकविता के कवियों की मानसिकता तथा यौन भावनाओं के कारण अकविता पीछे जाने लगी। सही नाटकीयता के अभाव, बडबोलेपन, कृमहीनता, आरोपित नंगेपन से अकविता ने अपना अस्तित्व खो दिया तात्पर्य यह कि अकविता अपने नंगेपन के कारण साहित्य में अधिक समय तक न टिक पाई।

2. संघर्षमूलक कविता या वाम कविता

सातवें दशक में हिन्दी कविता के क्षेत्र में जहाँ एक ओर विदेशी प्रभाव से निषेधमूलक आन्दोलन पनप रहे थे, वहाँ दूसरी ओर अनेक ऐसे आन्दोलन भी उभर रहे थे, जिन्हें संघर्ष मूलक कहा जा सकता है। ये आन्दोलन 'अकविता' या 'निषेध-मुलक कविता' की भाँति घोर वैयक्तिकता, अतियथार्थवाद, भोगवाद एवं क्षणिक चौककवाद पर आधारित नहीं थे अपितु इनके मूल में व्यापक सामाजिक चेतना कार्य कर रही थी, इसीलिए ये समाज से दूर भागने या उसकी प्रतिकूल स्थितियों से पलायन करने की अपेक्षा उनमें प्रवृत्त होकर संघर्ष करना अधिक उचित समझते थे। कविता उनके लिए केवल आत्म-प्रदर्शन एवं आत्म विज्ञापन की साधन नहीं थी अपितु वे उसके माध्यम से अपने युग और समाज को संघर्ष एवं विद्रोह की प्रेरणा देकर क्रान्ति का आह्नान करना चाहते थे। ऐसी स्थिति में स्वाभाविक था कि उनकी कविता में सामाजिक अन्याय, शोषण, अत्याचार, भ्रष्टाचार, अव्यवस्था और असमानता के विरुद्ध गहरे संघर्ष की भावना व्यक्त हुई है, इसीलिए समग्र रूप में हम इसे 'संघर्षमूलक' या 'संघर्षशील' काव्य की संज्ञा देना समझते हैं। वैसे इस वर्ग की कविता के लिए समय-समय पर और भी कई नाम सुझाए गये है, जैसे- 'युयुत्सा-वादी कविता', 'नवप्रगतिशील कविता', 'जनवादी कविता', 'प्रतिवद्ध कविता', 'वाम कविता' आदि।

इनमें से कुछ नाम मार्क्सवादी या साम्यवादी आन्दोलन से सम्बन्धित है जिन्हें स्वीकार कर लेने से यह भ्रांति उत्पन्न हो सकती है कि इनका प्रेरणा-स्रोत मार्क्सवाद है किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। इस वर्ग के अधिकांश कवियों ने समसामायिक परिस्थितियों एवं सामाजिक परिवेश से प्रेरित होकर ही क्रांति का आह्वान किया है- माक्सवाद से उनका सीधा सम्बन्ध नहीं है। आगे चलकर अनेक मार्क्सवादी, साम्यवादी व प्रगतिवादी कवि भी इस धारा से जुड़ गए जिससे इसके लिए 'वाम कविता' नाम स्वीकार कर लिया गया किन्तु यह भी बाद की परिणति है, मूलतः यह आन्दोलन अपने परिवेश एवं वातावरण से जुड़ा हुआ एक स्वतन्त्र आन्दोलन है।

युयुत्सावादी कविता- सातवें दशक में संघर्षमूलक कविता का प्रथम उद्घोष करने का श्रेय शलभ श्री रामसिंह को है, जिन्होंने सन् 1965 में कलकत्ता से प्रकाशित पत्रिका 'युयुत्सा' के माध्यम से 'युयुत्सावादी कविता' आन्दोलन का श्रीगणेश किया।

3. आस्था मूलक काव्य आन्दोलन

सातवें दशक में हिन्दी कविता के क्षेत्र में अनेक ऐसे आन्दोलनों का भी प्रवर्तन हुआ, जिन्होंने विभिन्न काव्यान्दोलनों की अतियथार्थवादी, व्यक्तिवादी, भोगवादी एवं अनास्थावादी

प्रवृत्तियों का विरोध किया। इनमें 'सनातन सूर्योदयी नूतन कविता' एवं 'सहज कविता' के आन्दोलन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 'सनातन सूर्योदयी' आन्दोलन का प्रवर्तन वीरेन्द्र कुमार जैन ने 'भारती' पत्रिका के माध्यम से मार्च 1662 में किया। अस्तु सैद्धान्तिक रूप में 'सनातन सूर्योदयी' आन्दोलन महत्वपूर्ण होते हुए भी व्यवहारिक रूप में अधिक सफल नहीं हो पाया। वह लगभग दो-तीन वर्षो बाद ही बिखर कर समाप्त हो गया। फिर भी इस आन्दोलन ने तत्कालीन काव्य-चेतना को झकझोरने का कार्य अवश्य किया।

सन् 1967 में डॉ. रवीन्द्र भ्रमर द्वारा 'सहज कविता' आन्दोलन का प्रवर्तन हुआ- इसका लक्ष्य भी लगभग वही था जो 'सनातन सूर्योदयी' कविता का था। 'सहज-कविता' की विज्ञप्ति में कहा गया है कि सन् 1960 के बाद के काव्य-आन्दोलनों में शिल्प और शैली का फैशन ही अधिक है- 'उनके मूल में स्वस्थ अथवा व्यक्ति समूह को प्रचारित करने का कौतुक कम। कविता के इन तथाकथित सूत्रधारों ने या तो मरे हुए विदेशी आन्दोलनों का आयात किया है या फिर अनास्था और हीनतापूर्ण दलीलें दे करके नयी पीढ़ी को गुमराह करने की साजिश की है- अहंमन्यता, आत्महत्या, योनि और जंघाओं पर कविता लिखने की प्रेरणा दी है। अतएव आज एक ओर तो कुठाएँ और विकृतियाँ हैं और दूसरी ओर चमत्कार एवं अनुकरणमूलक प्रवृत्तियाँ, जिनके कुहासे में कविता गुम है। 'सहज कविता' नये सिरे से कविता की खोज करना चाहती है।

उपयुक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि 'सहज कविता' का लक्ष्य काव्य के क्षेत्र में अनास्थामूलक प्रवृत्तियों के स्थान पर आस्थामूलक प्रवृत्तियों की प्रतिष्ठा करना था।

आठवे दशक में हिन्दी कविता के क्षेत्र में 'संचेतना' पत्रिका के कविता विशेषांक (जून 1973) के मध्य से एक नये आन्दोलन का प्रवर्तन हुआ जिसे 'विचार कविता' की संज्ञा दी गयी। इस पत्रिका के सम्पादक- डॉ. महीप सिंह एवं डॉ. नरेन्द्र मोहन अतिरिक्त इस विशेषांक में कतिपय अन्य- डॉ. हरदयाल, नित्यानन्द तिवारी, राजीव सक्सेना, रामदरण मिश्र, बलदेव वंशी आदि के भी लेख प्रस्तुत किये गये हैं जिनमें 'विचार कविता' के विभिन्न पक्ष विभिन्न दृष्टियों से प्रकाश डाला गया है साथ ही इसमें विभिन्न कवियों की कविताएँ भी विचार कविता का नमूना या आदर्श प्रस्तुत करने के लिए संकलित की गयी है। इस प्रकार इस विशेषांक में 'विचार कविता' के सिद्धान्त और व्यवहार- दोनों पक्षों को समुचित रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

'विचार कविता' आन्दोलन का प्रवर्तन अत्यन्त सुनियोजित ढंग से किया गया, अतः इसे प्रतिष्ठित होने के लिए बहुत अधिक संघर्ष नहीं करना पड़ा। इसके अतिरिक्त इससे पूर्व सातवें दशक में जिस प्रकार कविता के नाम पर विभिन्न प्रकार के खिले भोंडे, तर्कहीन एवं अश्लील प्रयास किये गये थे, उनसे भी साहित्य जगत बुरी तरह त्रस्त हो चुका था। अकविता और उससे सम्बन्धित विभिन्न भूखी, नंगी, अस्वीकृत एवं श्मशान पीढ़ी के युवा कवियों की कुत्सित, विकृत एवं आत्मघाती घोषणाओं को सुनते-सुनते हिन्दी जगत ऊब चुका था। ऐसी स्थिति में 'विचार कविता' हिन्दी कविता का नवीनतम आन्दोलन ने हिन्दी काव्य को एक स्वस्थ, संतुलित एवं सशक्त आधार एवं सही दिशा प्रदान करके एतिहासिक महत्व का कार्य किया। इसलिए यह स्वाभाविक या कि उसका विरोध अधिक हुआ।

Critical Overview / अवलोकन

नयी कविता के बाद से लेकर अब तक के सभी प्रकार की कविताओं को ही सामूहिक रूप से 'समकालीन कविता' की संज्ञा दी जाती है। संकेत यह है कि छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता, अकविता के बाद के बाद समकालीन कविता की धारा प्रवाहित हुई। कविता की नई पहचान छठे दशक से ही बनने लगी मुक्तिबोध, रघुबीर सहाय, शमशेर, धूमिल ने इस नई कविता के नया आयाम दिया। वैसे अगर देखा जाए जो हर कवि और उसकी कविता समकालीन होती है। हर रचना व्यापक अर्थो में समकालीन है। प्रत्येक युग का साहित्य समकालीन होता है। समकालीन का अर्थ है अपने समय का। अगर देखा जाए तो समकालीन शब्द किसी निश्चित कालखण्ड के लिए ही सार्थक है वैसे समकालीन शब्द कालसापेक्ष है। साहित्य के क्षेत्र में समकालीन शब्द काफी विचारणीय है। जैसे सूर और तुलसी, प्रेमचन्द्र और प्रसाद समकालीन थे। उनके समय का साहित्य समकालीन था। नई कविता का विकास ही समकालीन कविता है। हर दौर के साथ काव्य प्रवृत्तियाँ बदलती रही इसलिए प्रत्येक रचना समकालीन है। आज समकालीन कविता के नाम से एक नई परम्परा विकसित हुई है। सन् 1960 के बाद समकालीन कविता का विकास हुआ। इस कविता का सम्बद्ध विशेष युग की कविता से होता है। समकालीन कविता जो हो रहा है उसका सीधा खुलासा करती है। समकालीन कविता आज की कविता का

मुख्य रूप है।

सातवें दशक के मुख्य कवियों में श्रीकान्त वर्मा, रघुवीर सहाय, राजकमल चौधरी, केदारनाथ सिंह, धूमिल, कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह, दूधनाथ सिंह, कमलेश, चन्द्रकांत देवताले, विष्णुखरे, लीलाधर जगूडी, सौमित्र मोहन, रमेश गौड, कैलाश बाजपेयी, मणि मधुकर, आदि समकालीन कवियों के नाम लिए, जाते है।

आठवे दशक से समकालीन कविता का नया दौर आरम्भ होता है। आठवें दशख की कविता में सामाजिक यथार्थ तथा मानवीय सम्बन्धों की धारा प्रवाहित हुई। इस दौर में नई पीढ़ी के कवियों में ऋतुराज, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, मलयज, आलोकधनवा, मंगलेश डबराल, वेणु गोपाल, कुमार इकल, लीलाधर मण्डलोई, अरुण कमल, ज्ञानेन्द्रपति, राजेश जोशी, विजेन्द्र आदि कवि के नाम के लिए जा सकते है।

Recap / पुनरावृत्ति

- आधुनिक काल
- छायावाद
- प्रगतिवाद
- प्रयोगवाद
- नयी कविता
- साठोत्तरी कविता
- प्रमुख परिस्थितियाँ
- प्रमुख प्रवृत्तियाँ

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. नयी कविता के बाद आनेवाले काव्य क्षेत्र क्या है?
2. समकालीन कविता का आरंभिक समय क्या है?
3. साठोत्तरी कविता क्षेत्र की एक प्रमुख प्रवृत्ति लिखिए?
4. 'भारती' पत्रिका का प्रकाशन वर्ष?
5. 'सहज कविता' आन्दोलन का प्रवर्तक कौन हैं?
6. 'सनातन सूर्योदयी' आन्दोलन का प्रवर्तन किसने किया?
7. 'अभिनव काव्य' की स्थापना किसने किया?
8. कलकत्ता से प्रकाशित पत्रिका 'युयुत्सा' का प्रकाशन वर्ष?

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Answers/ उत्तर

1. साठोत्तरी कविता / समकालीन कविता।
2. 1960 से।
3. यथार्थवादी दृष्टिकोण।
4. मार्च 1662
5. रवीन्द्र भ्रमर
6. वीरेन्द्र कुमार जैन
7. जगदीश चतुर्वेदी
8. 1965 में

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. साठोत्तरी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ लिखिए।
2. समकालीन कविता की पृष्ठभूमि पर टिप्पणी लिखिए।
3. साठोत्तरी कविता के उदय एवं विकास पर आलेख लिखिए।
4. काव्यान्दोलन पर आलेख तैयार कीजिए।
5. साठ के बाद की कविता एवं समाज पर टिप्पणी लिखिए।

SGOU

इकाई 2

प्रमुख साठोत्तरी कवि- धूमिल, नागार्जुन, दूधनाथ सिंह, श्रीकांत वर्मा आदि- सामान्य परिचय

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- प्रमुख साठोत्तरी कवियों का परिचय प्राप्त करता है
- कवि धूमिल का व्यक्तिगत-काव्यगत यात्रा समझता है
- नागार्जुन की काव्यगत विशेषताएँ समझता है
- श्रीकांत वर्मा की रचनाएँ समझता है
- दूधनाथ सिंह की काव्य का परिचय प्राप्त होता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

साठोत्तरी कविता में सामान्य जन की दीनता-हीनता, प्रजातंत्र के प्रति अविश्वास, भविष्य के प्रति निराशा-अनिश्चितता, साधारण आदमी का संकटग्रस्त, अस्तित्व, पतित राजनीतिक व्यवस्था का प्रहारात्मक भाषा शैली में विरोध किया गया है। प्रमुख कविः धूमिल, नागार्जुन, दूधनाथ सिंह, श्रीकांत वर्मा आदि है।

Keywords / मुख्य बिन्दू

काव्यगत विशेषताएँ, समसामयिक समस्याएँ, भाषा-शैली, आदर्श व सिद्धांत

Discussion / चर्चा

साठोत्तरी कविता में सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, आर्थिक सांस्कृतिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों में व्याप्त अन्याय अत्याचार के खिलाफ विद्रोह का स्वर बुलंद हैं। इसमें धूमिल का नाम अद्वितीय हैं, धूमिल अपने काव्य में शोषकों को बेनकाब कर उनके शोषण वृत्ति का विरोध किया। आम आदमी में एकता प्रस्थापित कर भ्रष्ट व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाने की प्रेरणा दी। धूमिल के काव्य में आम आदमी की दयनीय स्थिति को देख डॉ. मिश्र लिखते हैं- "प्रजातंत्रीय माहौल में आए परिवर्तन ने जैसे जिन्दगी के स्वत्व को ही निगल लिया है। जिसके अभाव में बेहतर परिवर्तन का कोई भी आह्वान विफल होता है। दरअसल धूमिल के काव्य की प्रतिबद्धता जनता को उसकी अपनी शक्ति का परिचय कराने में हैं। साथ ही वह यह भी बताता है कि कैसे प्रजातंत्र की मूल शक्ति होने के बावजूद जनता निस्सहाय एवं विवश शोषण की पीड़ा झेलती है... यथार्थ का भयावह बोध उसे निराश भी करता है, जिसके सबब प्रजातंत्र को वह षड़यंत्र एवं कारागार कहने के लिए विवश होता है।" धूमिल इसी जनतंत्र को खोखला साबित करते हुए उस पर व्यंग्य कसते हैं।

सुदामा पाण्डेय (धूमिल)

साठोत्तरी कविता के समर्थ और सफल कवियों में श्री धूमिल जी का अतीव महत्वपूर्ण स्थान है। धूमिल (जन्मः 9 नवम्बर 1936, मृत्युः 10 फरवरी 1975) का जन्म वाराणसी के पास

खेवली गांव में हुआ था। उनका मूल नाम सुदामा पांडेय था। उनके पिता का नाम पंडित शिवनायक था और माँ का नाम रसवंती देवी था। आप सन् 1958 में आई टी आई (वाराणसी) से विद्युत डिप्लोमा लेकर वे वहीं विदयुत अनुदेशक बन गये। 38 वर्ष की अल्पायु में ही ब्रेन ट्यूमर से उनकी मृत्यु हो गई। उनकी कविताओं में आजादी के बाद का समाज, मोहभंग की पीड़ा और आक्रोश आदि का सशक्त अभिव्यक्ति मिलती है। व्यवस्था जिसने जनता को छला है, उसको आइना दिखाना मानों धूमिल की कविताओं का परम लक्ष्य है। उन्हें मरणोपरांत 1979 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

काव्य संग्रह : संसद से सड़क तक, तथा कल सुनना मुझे, सुदामा पांडेय का प्रजातंत्र।

पत्र-पत्रिका में उनकी अनेक कविताओं का प्रकाशन हुआ। संभवतः इनकी कुछ कविताएँ अभी तक अप्रकाशित है। इनकी कविता में जीवन की तल्खी, सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था पर गहरे व्यंग्य, लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता वचनवक्रता एवं सपाटबयानी जैसी शिल्पगत विशेषताएँ उपलब्ध होती है। कुत्ता नामक कविता में आज के चालू सिक्के चापलूसी पर उनका तीखा व्यंगय दर्शनीय है।

सुदामा पाण्डेय 'धूमिल' को हिन्दी कविता के 'एंग्री यंग मैन' कहे जाते हैं। उनकी कविता विशेष स्तर की माने जाते हैं।

शब्द किस तरह
कविता बनते हैं
इसे देखो
अक्षरों के बीच गिरे हुए
आदमी को पढ़ो
क्या तुमने सुना कि यह
लोहे की आवाज़ है या
मिट्टी में गिरे हुए ख़ून
का रंग।

लोहे का स्वाद
लोहार से मत पूछो
घोड़े से पूछो
जिसके मुंह में लगाम है।

सुदामा पाण्डेय 'धूमिल' हिन्दी की समकालीन कविता के दौर के मील के पत्थर हैं। वे अपनी क्रांतिकारी और प्रतिरोधी कविताओं के लिए जाने जाते हैं।

एक आदमी रोटी बेलता है
एक आदमी रोटी खाता है
एक तीसरा आदमी भी है
जो न रोटी बेलता है, न रोटी खाता है
वह सिर्फ़ रोटी से खेलता है
मैं पूछता हूँ-
'यह तीसरा आदमी कौन है
मेरे देश की संसद मौन है।

60 के बाद के दशक में हिन्दी कविता के फलक पर धूमिल प्रमुखता से उभरकर सामने आते हैं। उनके जीवन काल में एक ही काव्य संग्रह 'संसद से सड़क तक' प्रकाशित हो सका, 'कल सुनना मुझे' का प्रकाशन तो उनके निधन के बाद ही संभव हो सका।

'धूमिल' की कविताओं में आक्रामकता है, व्यवस्था का विरोध है। धूमिल अपनी रचनाओं में एक ऐसी काव्य भाषा की इजाद करते हैं जो नई कविता के दौर की काव्य-भाषा की रूमानियत और अतिशय कल्पनाशीलता से मुक्त है। उनकी भाषा सहज और सरल है लेकिन कहन शैली में विद्रोह साफ तौर पर झलकता है-

"उसकी सारी शख़्सियत
नखों और दाँतों की वसीयत है
दूसरों के लिए
वह एक शानदार छलांग है
अँधेरी रातों का
जागरण है, नींद के ख़िलाफ़
नीली गुर्राहट है

अपनी आसानी के लिए तुम उसे
कुत्ता कह सकते हो
उस लपलपाती हुई जीभ और हिलती हुई दुम के बीच
भूख का पालतूपन

हरकत कर रहा है
उसे तुम्हारी शराफ़त से कोई वास्ता
नहीं है, उसकी नज़र
न कल पर थी
न आज पर है
सारी बहसों से अलग
वह हड्डी के एक टुकड़े और
कौर-भर (सीझे हुए) अनाज पर है।"

धूमिल अपनी कविताओं के माध्यम से उन तमाम शोषितों और वंचितों को आवाज़ देते हैं, जो आज भी अपने आपको ठगा हुआ महसूस करते हैं-

"मगर मत भूलो कि इन सबसे बडी चीज़
वह बेश्रमी है
जो अन्त में
तुम्हे भी उस रस्ते पर लाती है।"

सुदामा पांडेय धूमिल कुछ उन रचनाकारों में हैं, जिन्होंने अपने जीवन के चार दशक भी नहीं पूरे किये, लेकिन पूरे दौर को आवाज़ दिया। सदियों के लिए लिख गए। आस-पास की हकीकत को देखा, समझा। लेकिन लिखा तो वर्जनाओं के बाहर जाकर ही। कविताएँ भी आग जैसी, जिनकी तपिश आज तक कम नहीं हुई। पढ़ने वालों का ये भी कहने का मन होता है कि जब तक चेतना रहेगी इन कविताओं का ताप कम होगा भी नहीं। उनकी कविताओं की दो-चार लाइनें ही पूरे मंजर को सामने ला देती हैं। संदर्भ बिल्कुल साफ कर देती हैं। क्रांति के और भी कवि हुए हैं। अपने परिवेश पर उन्होंने भी खूब रचनाएँ की हैं। लेकिन ऐसी ज्यादातर रचनाएँ किसी खास खांचे में चली जाती है। जबकि धूमिल का लिखा आम आदमी से सीधे जुड़ा दिखता है। हाशिए पर जी रहे लोगों की परेशानी बयान करता है।

आस-पास हो रही घटनाओं को बहुत शिद्दत से धूमिल ने महसूस किया। समकालीन कविताओं में तरह-तरह के प्रयोग हो रहे थे, लेकिन जीवन की कठिनाइयों, दुरूहता को तंज के साथ उकेरने वाले शब्द धूमिल दे रहे थे। 'मोचीराम' की आवाज धूमिल की कविता में ही सुनाई दी। ऐसा लगता है, धूमिल की ही तरह उनका मोचीराम भी सीधे कह देता है-

वह हँसते हुये बोला-
बाबूजी सच कहूँ- मेरी निगाह में
न कोई छोटा है
न कोई बड़ा है
मेरे लिये,हर आदमी एक जोड़ी जूता है
जो मेरे सामने
मरम्मत के लिये खड़ा है।

खास बात यह है कि मोचीराम ठीक से समझ और समझा भी रहा है कि उसके लिए न कोई छोटा है न कोई बड़ा है। इसमें वो दीन-हीन भी नहीं दिखता है।

काव्यगत विशेषताएँ:

धूमिल ऐसे कवि है, जिन्होंने दूसरा अनुपयोगी समझे विषयों को उपयोगी सिद्ध किया है। उन्होंने समाज में स्थित बेकारी, दरिद्रता, सामाजिक अनिष्ट रूढ़ियाँ, नारी विषयक दृष्टिकोण, दलितों की स्थिति अनेक समस्याओं से ग्रस्त ग्रामीण जीवन आदि अनेक समस्याओं को अपने काव्य का विषय बनाया और इसमें परिवर्तन लाने के लिए समाज जागृति करने का प्रयास अपनी कविताओं के माध्यम से किया है। धूमिल की कविताओं में देहात और शहर, कविकर्म और राजनीति, सामाजिकता और असामाजिकता, न्याय और अन्याय, अहिंसा और हिंसा, ईमानदारी और बे-ईमानी, जिजीविषा और निराशा आदि प्रायः सभी मानव-जीवन के सभ्य और असभ्य अंगों का चित्रण है।

श्रमजीवी और 'परजीवी' को आमने-सामने खड़ा करके धूमिल व्यवस्था की उस विसंगति को रेखांकित करना चाहते हैं, जो सही आदमी को असफल और अभावग्रस्त बनाती है और गलत आदमी को सफल और सम्पन्न बनाती है। धूमिल इस विसंगति का सख्त विरोध करते हैं। वे कहते हैं कि मानवीय सम्वेदना ही व्यक्ति को जीने का सही तर्क और तरीका देती है।

धूमिल ने जितना भी लिखा है, उसका पूरा लेखा-जोखा 'मोचीराम' कविता में है। उनकी कविता में पीड़ा और आक्रोश देखा जा सकता है। आम आदमी का आक्रोश कवि धूमिल की वाणी में घुलता है और शब्द का रूप धारण कर कविताओं के माध्यम से कागजों पर उतरता है। धूमिल ने विधिवत अध्ययन की कमी को जीवन भर झेला कि वामपंथी होने के बावजूद न स्त्रियों को लेकर मर्दवादी सोच से मुक्त हो पाए और न गाँवों व शहरों के बीच पक्षधरता के चुनाव में सम्यक वर्गीय दृष्टि अपना पाए लेकिन खाए-पिए और अघाए लोगों की 'क्रांतिकारी' बौद्धिक जुगालियों में गहरा अविश्वास व्यक्त करने में उन्होंने 'सामान्यीकरण' और 'दिशाहीन अंधे गुस्से की पैरोकारी' जैसे

गंभीर आरोप भी झेले। वे प्रायः यह पूछते रहे कि 'मुश्किलों व संघर्षों से असंग' लोग क्रांतिकारी कैसे हो सकते हैं?

कवि धूमिल मानते थे कि 'चंद टुच्ची सुविधाओं के लालची/अपराधियों के संयुक्त परिवार' के लोग एक दिन खत्म हो जाएंगे और इसी विश्वास के बल से उन्होंने 'अराजक' होना कुबूल करके भी निष्ठा का तुक विष्ठा से नहीं भिड़ाया। कविताओं में वर्जित प्रदेशों की खोज करने और छलिया व्यवस्था द्वारा पोषित हर परम्परा, सभ्यता, सुरुचि, शालीनता और भद्रता की ऐसी-तैसी करने को आक्रामक धूमिल ने अपना छायावादी अर्थध्वनि वाला उपनाम भी रख लिया था। धूमिल ने अपनी छोटी-सी उम्र में ही हिन्दी आलोचना की परम्परा से कहानियों की ओर चला आ रहा मुँह घुमाकर कविताओं की ओर कर लेने में सफलता पा ली थी।

उनकी सबसे लोकप्रिय कविता में समाज में व्याप्त समस्या की तस्वीर देखी जा सकती है। वे लिखते हैं कि-

'एक आदमी रोटी बेलता है,
एक आदमी रोटी खाता है,
एक तीसरा आदमी भी है,
जो न रोटी बेलता है,न रोटी खाता है,
वह सिर्फ रोटी से खेलता है।

मैं पूछता हूँ ?
यह तीसरा आदमी कौन है,
और मेरे देश की संसद मौन है.....।'

तो अब, जब संसद का मौन कई और दशक लम्बा हो गया है, यह तथ्य और साफ हो गया है कि भारत की विकल्प और विपक्ष दोनों से विरहित जनविरोधी राजनीति का असली प्रतिपक्ष धूमिल की कविताओं में ही बसता है। वे तत्कालीन समाज के सजग प्रहरी हैं। उनकी कविताओं में लोकतंत्र की रक्षा की तड़प रही है। वे उस समय की सत्ता के खिलाफ उस विसंगति को रेखांकित करना चाहते हैं।

हिन्दी साहित्य के कई आलोचक यह मानते हैं कि मुक्तिबोध और रघुवीर सहाय के बाद धूमिल हमारे जटिल समय के ताले खोलने वाली तीसरी बड़ी आवाज है, जो बम मुक्तिबोध के भीतर कहीं दबा पड़ा है और रघुवीर सहाय के यहाँ टिकटिक करता नजर आता है, धूमिल की कविता तक आते-आते वह फट पड़ता है।

लगता है कि समाज के हितैषी संघर्ष के कवि धूमिल को यकीनन एक बार फिर नए सिरे से समझे जाने की जरूरत है। यह याद रखते हुए कि कुछ शक्तियों को उन कवि व कविता दोनों से बहुत असुविधा है। धूमिल सच्चे अर्थों में एक जन कवि हैं। उनकी संसद से सड़क तक की कविताएँ इस बात की साक्षी है कि धूमिल का कवि संघनित अनुभूतियों का ही कवि नहीं है, बल्कि अनुभूतियों से निकलकर विचारों की यात्रा करना भी उसे प्रिय है। संसद से सड़क तक की कविताएँ भावनात्मक रूप से तो पाठक को स्पर्श करती ही हैं, बौद्धिक स्तर पर भी उन्हें प्रेरित करती हैं। भारतीय राजनीति में लोकतंत्र के चरित्र को धूमिल ने अपनी कविता 'जनतंत्र के सूर्योदय में' जिस तरह उजागर किया है,वह चकित करता है। उनकी कविताओं में वर्तमान समय के ढेर जरूरी किंतु अनुत्तरित सवाल है।

हर रचनाकार यह जानता है कि खुद से रूबरू होना कितना कठिन होता है, परंतु मोचीराम, रामकमल चौधरी के लिए, अकाल दर्शन, गाँव, प्रौढ़ शिक्षा जैसी कई कविताएँ धूमिल के गहरे आत्मविश्वास से रूबरू कराती है। कहना न होगा कि जर्जर सामाजिक संरचनाओं और अर्थहीन काव्यशास्त्र को आवेग, साहस, ईमानदारी और रचनात्मक आक्रोश से निरस्त कर देने वाले रचनाकार के रूप में धूमिल अविस्मरणीय है।

'धूमिल' का शिल्प-विधान और भाषा अपने समकालीन सरोकारों, गंवई सुगंध, ईमानदार व्यक्ति की बगैर लाप-लपेट की एक अनूठी झलक है। इस दृष्टि से उनकी काव्यभाषा सामाजिक संरचना के औचित्य को चुनौती देती है। उनकी नजर में कविता भाषा में आदमी होने की तमीज है। वे मानते हैं कि 'एक सही कविता एक सार्थक व्यक्तव्य होती है।' वे भाषा लीक की परिपाटी पर चलने वाली भाषा का भ्रम तोड़ना चाहते हैं। वे जनता की यातना और दुःख से उभरी तेजस्वी भाषा में कविताई करना पसंद करते हैं। वे कहते हैं-आज महत्व शिल्प का नहीं, कथ्य का है, उनका सवाल यह नहीं है कि आपने किस तरह कहा है, सवाल यह है कि आपने क्या कहा है।

धूमिल अपनी कविताओं के जरिए आकाश की बुलंदियाँ छूते हुए भी अपनी माटी का दर्द नहीं भूलते। उन्हें संसद के साथ अपने खेतों की मेड़, हदबंदी, नीम का पेड़, कौए की कर्कश आवाज, तीरथ पर निकली माँ का चेहरा, बेटी की आँखें और जवान बछड़े की मौत भी याद रहती है। धूमिल ने जिस व्यवस्था पर 70 के दशक में सवाल उठाया था, वो आज भी जस की

तस बनी हुई है। सवाल उठाते हुए धूमिल कहते हैं-

"वह कौन-सा प्रजातांत्रिक नुस्खा है,
कि जिसमें मेरी माँ का चेहरा
झुर्रियों का झोला है,
और ठीक उसी उम्र की,
मेरे पड़ोस की महिला के चेहरे पर
मेरी प्रेमिका के चेहरे-सा
लोच है।"

उनके काव्य बिंब अपने परवर्ती कवियों से नितांत पृथक हैं। समाज के संपन्न वर्ग के बारे में धूमिल कहते हैं कि-

'जिसके पास थाली है
हर भूखा आदमी
उसके लिए,सबसे भद्दी
गाली है।'

उन्होंने आम जनता की भाषा के शब्दों में विस्फोट की ताकत भरकर उन्हें कविता में स्थान दिया है। धूमिल मानते हैं कि सबके प्रतिरोध का अपना-अपना तरीका होता है। वे कहते हैं कि-

'जबकि मैं जानता हूँ कि इनकार से भरी हुई एक चीख,
और एक समझदार चुप दोनों का मतलब एक है-
भविष्य गढ़ने में, चुप और चीख
अपनी-अपनी जगह एक ही किस्म से,
अपना-अपना फर्ज अदा करते हैं।'

यदि किसी साहित्यकार के अवदान को विस्मृत कर दिया जाए तो उसकी कृतियों की पुनर्समीक्षा करनी चाहिए, लेकिन 'धूमिल' जैसा कवि जिनकी रचनाएँ पूरे देशभर के पाठ्यक्रम में पढ़ाई जाती हैं, तथा जिनके ऊपर 125 से भी ज्यादा शोध-कार्य हो चुके हैं और जिनकी पंक्तियों पर स्वनामधन्य 'बड़े साहित्यकार' एवं 'दिग्गज आलोचक' अपनी दुकान चला रहे हैं, ऐसे समय में जब धूमिल साहित्य के प्रमुख प्रवक्ता माने जाने चाहिए, उन्हें उनकी जयंती पर याद कर निपटाने जैसा आयोजन नहीं होना चाहिए। उन्हें न्याय देने के लिए उनके साहित्य की प्रासंगिकता को समझना चाहिए।

धूमिल आजादी के बाद उस दौर के कवि हैं, जब आजादी से मोहभंग का सिलसिला अपने उफान पर था। ईमानदारी, सच्चाई, भाईचारा, अहिंसा, आजादी आदि अपना अर्थ खो चुके थे। यह वह समय था जब सहानुभूति और प्यार के नाम पर एक आदमी दूसरे को अकेले अंधेरे में ले जाता है और उसकी पीठ पर छुरा मार देता है। सच्चाई एक मूल्य तब बनती है, जब झूठ का बोलबाला हो, अहिंसा मूल्य तब बनती है जब चारों ओर हिंसा की ज्वाला भड़क रही हो, आजादी एक मौलिक मूल्य तब बनती है जब गुलामी की बेड़ियाँ आजाद होकर खनखना रही हो। इसीलिए असहजता के वातावरण में सहज होना भी कठिन हो गया था। धूमिल का समस्त काव्य संघर्ष सहजता और स्वतंत्रता के लिए किया गया संघर्ष है। वे केवल सहज और स्वतंत्र होना चाहते हैं, ताकि आम को आम और चाकू को चाकू कह सकें, लेकिन उनका यह सपना पूरा नहीं होता। ऐसे ही वातावरण में धूमिल कविता के मैदान में उतरते हैं और तमाम प्रचलित मान्यताओं और परम्पराओं को ध्वस्त कर देते हैं। उनकी कविताओं में उनके समय और समाज की धड़कनों को शब्द बद्ध करने के साथ ही उनका यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है। धूमिल अपनी माँ और चाची की दृष्टि में एक बाघ थे और हिन्दी साहित्य के काव्य परिदृश्य में उनकी कविता किसी दहाड़ से कम नहीं है।

धूमिल ने काल्पनिक और व्यक्तिगत भावभूमि को छोड़कर कविता को समसामयिक यथार्थ से जोड़ा। उन्होंने कविता को बिंबों की घटाओं से पूरी तरह निकालकर कविता को अमूर्तन के अंधेरे से उबारा है। एक जगह धूमिल स्वयं लिखते हैं कि- 'भाषा अपनी जिम्मेदारी नहीं निभा रही है। कुछ हैं जो भाषा को खा रहे हैं।' धूमिल ने कविता को एक खास तरह की मुँहफट और खुर्राट ज़बान दी।

कवि धूमिल अपनी कविताओं में वर्तमान समय की ढेरों जरूरी विद्रूपताओं को खुलकर कहता और लिखता है। इसीलिए उन पर आरोप है कि विशेष रूप से उनका काव्य नारी के प्रति वितृष्णा से भरा है। ध्यान रहे-यह उनकी सभी कविताओं के साथ जोड़कर न देखें तो न्याय होगा। माँ और पत्नी के प्रति उनका आत्मीय संबंध लाजवाब है। वे अपनी प्रकृति और प्रस्तुति में अद्भुत हैं- धूप माँ की गोद सी गर्म थी। कहकर कवि माँ की महिमा को सिर माथे स्वीकारता है। आज के स्वच्छन्द समय में प्यार के बारे में लिखते हुए धूमिल यह भी कहते हैं कि-

'एक सम्पूर्ण स्त्री होने के,
पहले ही गर्भाधान की क्रिया से गुज़रते हुए,

उसने जाना कि प्यार,

घनी आबादीवाली बस्तियों में

मकान की तलाश है।'

धूमिल की कविता और जीवन में जो अराजकता झलकती है, वह दरअसल इस व्यवस्था की दलाली करने वाले दलालों के प्रति गहरे आक्रोश का ही परिणाम है। धूमिल इस दुनिया को खास तौर से इस देश को सम्पन्न, खुशहाल और शोषण मुक्त देखना चाहते हैं इसीलिए उनका आक्रोश अत्यधिक आक्रामक हो उठता है। कहा जा सकता है कि उनकी यह आक्रामक अराजकता ही उनकी कविता की शक्ति है।

दरअसल उनकी कविता नए विम्ब विधान व नए संदर्भों में जनता के संघर्ष के स्वर में स्वर मिलाती है। हिन्दी कविता को नए तेवर देने वाले जनकवि धूमिल का योगदान चिरस्मरणीय है। डॉ. बच्चन सिंह ने धूमिल के बारे में कहा है कि वस्तु के बदलाव के साथ धूमिल ने कविता को नई भाषा और नए मुहावरे दिए हैं, जो विपक्ष का पक्ष प्रस्तुत करने में पूर्णतः समर्थ है, क्योंकि बनिया की भाषा तो सहमति की भाषा है। यद्यपि शिल्प की तुलना में कथ्य पर धूमिल का आग्रह अधिक है। ऐसा इसलिए है क्योंकि वह यथार्थ को उसके असली या नग्न रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं। उनका यही रुझान उनके काव्य शिल्प में भी सामाजिक चेतना का संचार करता है, क्योंकि उनका शिल्प ही उनके कथ्य का संवाहक है।

नागार्जुन

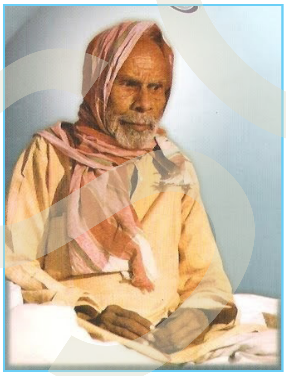

बाबा नागार्जुन जन पक्षधर प्रगतिशील कवि है। वे हिन्दी का ऐसा एकमात्र कवि है, जिन्होंने अपना संपूर्ण जीवन देश के करोड़ों साधारण लोगों के अनुसार जीकर, साहित्य रचना कर चिरंजीवी हो चुके हैं। काल और इतिहास में कभी-कभी ऐसी कुछ घटना घटित होती है जिसका दूसरा नहीं होता है। तात्पर्य यह है कि हिन्दी में नागार्जुन का समकक्ष दूसरा नहीं है। नागार्जुन मिथिला की अपनी मातृभाषा मैथिली से हिन्दी की ओर आये। यह आगमन हिन्दी के लिए एक महत्वपूर्ण घटना बन गयी थी। क्योंकि उनकी आगमन से हिन्दी साहित्य की अद्भुत श्रीवृद्धि हुई।

प्रगतिवाद आदर्श

नागार्जुन प्रगतिवाद के अग्रदूत साहित्यकार है। वे हर वक्त साधारण लोगों के बीच उनमें एक हो कर रहते थे। उन्होंने अपने जीवन में सहन किये गये अभावों ने उन्हें समाजवाद और आगे मार्क्सवाद की ओर ले गये। मार्क्सवाद उन्हें अधिक प्यारा था। जन-संघर्ष में अमित विश्वास करते थे। नागार्जुन जन संघर्षी में भाग लेकर कई बार जेल यातनाएँ सहन करने पड़े। उनमें विद्रोह भावना जोरों पर है। उनके व्यक्तित्व में पहले पहल एक साधारण निरीह और निष्कलंक सीधे-सच्चे ग्रामीण का रूप-भाव उभरकर आता है। दूसरा मार्क्सवादी वर्ग संघर्ष पर उनका विश्वास है। तीसरा उनका नीति-न्याय युक्त समत्व पूर्ण समाज का निर्माण भावना है। नागार्जुन पारंपरिक कथ्य रूपों को आधुनिकता के अनुसार उपयोग करने में सिद्धहस्त रहे थे। हिन्दी में निराला के पश्चात सबसे अधिक छंदों और बिंबों का इस्तेमाल उन्होंने किया है। वे एकसाथ परंपरा के विश्वासी और अविश्वासी रहे थे। वैसे उन्होंने आजीवन अधिकारियों के प्रति विरोधी भावना दर्शाये है। यह भी नहीं, अन्याय और अनीति के विरुद्ध ग्रामीणों में एक होकर निरंतर लड़ते भी रहे थे। यही कारण परतंत्र भारत में ही नहीं, स्वतंत्र भारत में भी वे कई साल कारावास की सजा भोगने पड़े।

पुरस्कार और सम्मान

केंद्र साहित्य अकादमी पुरस्कार (1968 - पत्रहीन नग्न गाछ (मैथिली काव्य संग्रह), मध्य प्रदेश सरकार का मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार, भारत भारती पुरस्कार, सन् 1994 में साहित्य अकादमी की मानद फेलोशिप, राहुल सम्मान, बिहार सरकार का राजेन्द्र शिखर सम्मान आदि पुरस्कारों से नागार्जुन सम्मानित हुए है।

काव्यगत विशेषताएँ

- नागार्जुन की भाषा सरल, सहज, व्यवहारिक और वशीकरण युक्त है।
- नागार्जुन की भाषा तत्सम और तद्भव खड़ीबोली है।
- नागार्जुन काव्य रचना के लिए मुक्तक तथा प्रबंध, दोनों शैलियों को स्वीकारा है।
- नागार्जुन की भाषा में ग्रामीण-देशज शब्द ज्यादा से ज्यादा मिलते हैं।

- नागार्जुन की शैली अत्यंत आकर्षक है, जो प्रतीकात्मक होने के साथ व्यंग्य-प्रधान भी रहे हैं।
- समकालीन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, किसान-मज़दूर-दलित समस्याएँ एवं संघर्ष उनकी मुख्य वर्णन विषय रहा है।
- नागार्जुन सदा समय दलितों-पीड़ितों से संवेदना करने वाला आदमी रहा है।
- नागार्जुन अत्याचार-अंधविश्वास के खुलकर विरोध किया है।

नागार्जुन ने प्रतीकात्मक काव्य शैली को प्रमुखता दिया है। नागार्जुन के हिन्दी काव्य कृतियाँ-

1.युगधारा (1953), 2.प्यासी पथराई आँखे (1962), 3.तालाब की मछलियाँ (1974), 4. तुमने कहा था (1980), 5.खिचड़ी विप्लव देखा मैंने (1980), 6.हजार हजार बाहों वाली (1981), 7.आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने (1982), 8.पुरानी जूतियों का कोरस (1983), 9.रत्नगर्भा (1984), 10.ऐसे भी हम क्या ऐसे भी तुम क्या (1985), 11.इस गुब्बारे की छाया में (1990), 12.भूल जाओ पुराने सपने (1994), 13.भूमिजा (खण्डकाव्य- 1994), 14.अपने खेत में (1997), 15.भस्मांकुर (1998) आदि के अलावा हिन्दी और मैथिली में नागार्जुन ने कई ग्रंथों की रचना किया है।

सही अर्थों में कवि नागार्जुन भारतीय मिट्टी से बने आधुनिकतम कवि हैं। ये प्रगतिवादी युग के कवि हैं। जन संघर्ष में अडिग आस्था, जनता से गहरा लगाव और एक न्यायपूर्ण समाज का सपना, ये तीन गुण नागार्जुन के व्यक्तित्व में ही नहीं, उनके साहित्य में भी घुले-मिले हैं। निराला के बाद नागार्जुन अकेले ऐसे कवि हैं, जिन्होंने इतने छंद, इतने ढंग, इतनी शैलियाँ और इतने काव्य रूपों का इस्तेमाल किया है। पारंपरिक काव्य रूपों को नए कथ्य के साथ इस्तेमाल करने और नए काव्य कौशलों को संभव करने वाले वे अद्वितीय कवि हैं।

नागार्जुन जी की भाषा सरल, सरस, व्यावहारिक एवं प्रभावोत्पादक है। उन्होंने तत्सम और तद्भव दोनों शब्दों का प्रयोग किया है। इन्होंने अपनी रचनाओं में अनुप्रास, उपमा, रूपक और अतिशयोक्ति अलंकारों का प्रयोग किया है।

नागार्जुन हिन्दी और साहित्य के अप्रतिम लेखक और कवि थे। हिन्दी साहित्य में उन्होंने 'नागार्जुन' तथा मैथिली में 'यात्री' उपनाम से रचनाएँ की। नागार्जुन ने जीवन के कठोर यथार्थ एवं कल्पना पर आधारित अनेक रचनाओं का सृजन किया। अभावों में जीवन व्यतीत करने के कारण इनके हृदय में समाज के पीड़ित वर्ग के प्रति सहानुभूति का भाव विद्यमान था। अपने स्वार्थ के लिए दूसरों का शोषण करने वाले व्यक्तियों के प्रति इनका मन विद्रोह की भावना से भर उठता था।

दूधनाथ सिंह

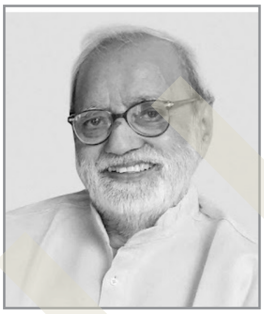

हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कवि, आलोचक तथा कहानीकार दूधनाथ सिंह का जन्म 17 अक्टूबर 1936 ई. को उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के सोबंथा नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता देवकीनंदन सिंह एक साधारण किसान थे, जो कि कृषि कार्य के माध्यम से परिवार का भरण पोषण करते थे, बाल्यकाल से ही बहुमुखी प्रतिभा के धनी दूधनाथ सिंह की प्रारम्भिक शिक्षा इनके बगल के गाँव नरही में स्थित प्राथमिक विद्यालय पर सम्पन्न हुई पढाई में इनकी रूचि इतनी अधिक थी की ये कहीं पर भी पढ़ने के लिये चले जाते थे, इन्होने अपनी हाईस्कुल और इन्टरमीडिएट की शिक्षा चितबड़ा गाँव में स्थित मर्चेंट इंटर कालेज से संपन्न हुई, स्नातक के लिये इन्होंने अपना प्रवेश बलिया शहर के सतीशचन्द्र कालेज में लिया और यहीं स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के उपरान्त वापस अपने गाँव चले आये।

जा रहा हूँ जीवन की खोज में
सम्भवतः मृत्यु मिले
सम्भवतः मिले एक सभ्य
सुसंस्कृत जीवन-व्यवहार
साँझ मिले बाँझ
आँच न मिले
जीवन की राख मिले
दसों-दिशाओं में।

क्या ऐसा नहीं हुआ कई बार
कई तथागतों के साथ

कई शताब्दियों में
निरन्तर।
जब भी वह निकला उल्लास
लास भौतिक जीवन पर इठलाता
मिली उसे निरी उदासीनता
मिला उसे कठिन कंकाल
मिला उसे भव्य अन्तराल।
क्या वह नहीं लौटा
विकल-विकल लिए
हाथों में अपना ही तरल रक्त
क्या उसकी आँखों से नहीं
टूटा, निपट उदास टिमटिमाता
सितारा एक?
पृथ्वी थोड़ी और
समृद्ध क्या नहीं हुई
उसके बाद !

दूधनाथ सिंह ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिन्दी से परास्नातक की उपाधि प्राप्त करके कलकत्ता विश्वविद्यालय में अध्यापन का कार्य करने लगे और कुछ ह दिनों के बाद वापस इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्राध्यापक के पद सुशोभित किया। अध्यापन के कार्य के साथ-साथ ये कई प्रकार की प्रख्यात रचनाओं का सृजन करने लगे इन्होंने सर्वाधिक साठोत्तरी कहानी को सूत्रपात किया है।

हिन्दी के विख्यात लेखक सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पन्त, और महादेवी वर्मा के बहुत प्रिय थे, इन्होने राष्ट्रीय आन्दोलन में भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया ये विभिन्न साहित्यिक मंच से जुड़े हुये थे, 'जनवादी लेखक संघ' के अध्यक्ष के रूप में इन्होने अपने दायित्व का निर्वहन किया, जनसंस्कृति मंच और प्रगतिशील लेखक संघ के पदाधिकारी पद को भी दूधनाथ सिंह ने सुशोभित किया, हिन्दी साहित्य का यह महान आलोचक, कहानीकार कैन्सर की गंभीर बीमारी से निरंतर एक वर्ष को लड़ते हुए 11 जनवरी 2018 को इलाहाबाद में परलोकवासी हो गया।

रचनाएँ

कविता संग्रहः युवा खुशबु, एक और भी आदमी, सुरंग से लौटते हुये, **नाटकः** यम गाथा, **उपन्यासः** आखिरी कलाम, निष्कासन, नमो अन्धकारम, **कहानीः** सपाट चेहरे वाला आदमी, सुखान्त, प्रेमकथा का अंत न कोई, माई का शोकगीत, **आलोचनाः** निरालाः आत्महंता, आस्था, महादेवी, मुक्तिबोध, **साक्षात्कारः** कहा सुनी, लौट आ ओ धार, **सम्पादनः** तारापथ, एक शमशेर भी, पक्षधर

सम्मान एवं पुरस्कारः शरद जोशी स्मृति सम्मान, कथाक्रम सम्मान, साहित्य भूषण सम्मान, भारत-भारती सम्मान।

"मैं मरने के बाद भी
याद करूँगा तुम्हें
तो लो, अभी मरता हूँ झरता हूँ
जीवन की डाल से
निरन्तर हवा में तरता हूँ
स्मृतिविहीन करता हूँ
अपने को तुमसे हरता हूँ।"

दूधनाथ सिंह, हिन्दी के ऐसे कवि-कथाकार-आलोचक, जो सिर्फ शब्दों में ही डूबे रहना चाहते थे। उनका मानना था कि लिखते रहो, प्रसिद्धि स्वयं सर्जक को खोज लेती है। उनके शब्दों में जीवन की कितनी घनी संवेदना थी। अपनी कविताओं से सामाजिक विद्रूपता की सरल अनुभूति कराते रहे दूधनाथ सिंह ने जब भी लिखा, जो भी लिखा, सार्थक और प्राणपण से। दूधनाथ सिंह इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक रहे। उन्होंने कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास और आलोचना सहित सभी विधाओं में लेखन किया। उन्होंने नई कहानी आंदोलन को चुनौती दी और साठोत्तरी कहानी आंदोलन का सूत्रपात किया। 'हिन्दी के चार यार' के रूप में ख्यात ज्ञानरंजन, काशीनाथ सिंह, दूधनाथ सिंह और रवीन्द्र कालिया ने अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में हिन्दी लेखन को नई धार दी। लेखकों की पीढ़ी तैयार की और सांगठनिक मजबूती प्रदान की। चार यार में अब सिर्फ काशीनाथ सिंह और ज्ञानरंजन ही बचे रह गए हैं।

साठोत्तरी पीढ़ी के ऐसे रचनाकार, जिसने कहानी, कविता, नाटक, संस्मरण, उपन्यास, आलोचना विधाओं में जो भी लिखा, अत्यंत महत्त्वपूर्ण। उन्होंने लेखन में प्रेम, दाम्पत्य और यौन-सम्बन्धों के छल-छद्म का उपहास किया। उनके सृजन में नये जीवन-अनुभव, नये कथ्य, नयी भाषा, नये कथा-शिल्प से कहानी में अनूठा स्वाद उपस्थित हुआ। दूधनाथ सिंह अपने निजी अनुभव, जीवन-परिवेश और भौगोलिक गंध की

ईमानदार अभिव्यक्ति तथा ताजगी भरी अनूठी शैली-शिल्प के कारण अलग से पहचाने गए।

श्रीकांत वर्मा

जन्म: श्रीकांत वर्मा का जन्म 18 सितंबर 1931 को बिलासपुर, छत्तीसगढ़ में हुआ था। इनका पिता का नाम राजकिशोर वर्मा था जो कि पेशेवर से वकील थे। श्रीकांत वर्मा ने प्रारम्भिक शिक्षा के लिए बिलासपुर के एक अंग्रेज़ी स्कूल में दाखिला करवाया गया, लेकिन वहाँ का वातावरण उन्हें रास नहीं आया। श्रीकांत वर्मा ने उस स्कूल को छोड़ दिया और नगरपालिका के स्कूल से शिक्षा ग्रहण की। मैट्रिक पास कर लेने के बाद उन्होने आगे की शिक्षा के लिए उन्हें इलाहाबाद भेजा गया। वहाँ उन्होंने 'क्रिश्चियन कॉलेज' में दाखिला लिया। लेकिन वहाँ उन्हें घर की याद सताने लगी और वे बिलासपुर वापस लौट आए। यहीं से उन्होंने बी.ए. तक की पढ़ाई पूरी की। इसके बाद में उन्होने प्राइवेट से 'नागपुर विश्वविद्यालय' से एम.ए. किया।

संपादन एवं प्रकाशन कार्य

1956 से नरेश मेहता के साथ प्रख्यात साहित्यिक पत्रिका 'कृति' का दिल्ली से संपादन एवं प्रकाशन कार्य किया। वर्ष 1956 से लेकर 1963 तक का समय उनके लिए संघर्ष का काल था। 1964 में रायपुर की सांसद मिनी माता ने उन्हें दिल्ली के अपने सरकारी आवास में रहने के लिए बुला लिया, जहाँ वे अगले ग्यारह साल तक रहे। दिल्ली में वे पत्रकारिता से भी जुड़े। 1965 से 1977 तक 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रकाशन समूह से निकलने वाली पत्रिका 'दिनमान' में उन्होंने विशेष संवाददाता की हैसियत से काम किया।

श्रीकांत वर्मा कांग्रेस की राजनीति में सक्रिय हुए तथा 'दिनमान' से अलग होना पड़ा। 1969 में वे तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी के काफ़ी क़रीब आये। वे कांग्रेस के महासचिव भी बनाये गये थे। 1976 में वे मध्य प्रदेश से राज्य सभा में निर्वाचित हुए। इसके बाद 1980 में कांग्रेस प्रचार समीति के अध्यक्ष नियुक्त हुए। राजीव गाँधी के शासन काल में उन्हें 1985 में महासचिव के पद से हटा दिया गया।

काव्य रचनाएँ- भटका मेघ (1957), मायादर्पण (1967), दिनारंभ (1967), जलसाघर, (1973), मगध (1983), गरूड़ किसने देखा (1986)

उपन्यास- दूसरी बार (1968)

कहानी-संग्रह- झाड़ी (1964), संवाद (1969), घर (1981), दूसरे के पैर (1984), अरथी (1988), ठंड (1989), वास (1993)

यात्रा वृत्तांत- अपोलो का रथ (1973)

पुरस्कार व सम्मान

मध्य प्रदेश सरकार ने 1973 में उन्हे 'तुलसी पुरस्कार' से सम्मानित किया। सन् 1983 में 'आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी पुरस्कार' से नवाजा गया। उन्हें केरल सरकार द्वारा 1980 में 'शिखर सम्मान' तथा 1984 में 'कुमार आशान राष्ट्रीय पुरस्कार' से नवाजा गया।। मरणोपरांत 'मगध' नामक कविता संग्रह के लिए 1987 में 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

मृत्यु: श्रीकांत वर्मा की मृत्यु 26 मई 1986 को हुआ।

श्रीकांत वर्मा के काव्य संकलन:- दिनारंभ,माया दर्पण, जलसा घर में आत्मरति और आत्मशलाघा का प्राधान्य है, भीड से घृणा है। श्रीकांत वर्मा के काव्य में विचारशीलता भी है और अस्तित्ववादी दृष्टि भी। भटकाव और मृत्युबोध उसका भी होता है।

श्रीकांत वर्मा उस दौर के कवि हैं जब एक ओर नयी कविता अपना रूपाकार ग्रहण करने में मुश्किल है, दूसरी ओर नयी उम्मीदों से भरा स्वतंत्रता का माहौल है। इसी माहौल में श्रीकांत वर्मा की जीवन-दृष्टि और साहित्य-दृष्टि विकसित होती है। मुक्तिबोध की तरह वे घोषित मार्क्सवादी तो कभी नहीं रहे, किंतु जागरूक होकर नयी कविता की एकलवादी प्रवृत्तियों का जहाँ उन्होंने विरोध किया, कविता को 'वादों' में बाँधना भी उन्होंने स्वीकार नहीं किया। साहित्य में तटस्थता के भी वे विरोधी रहे। कविता सीधे-सीधे जनमुखी होकर जन की आकांक्षाओं का आधार स्तम्भ बने- यह इच्छा उनकी कविताओं में मिलती है।

श्रीकांत वर्मा की कविता राजनीति की भीतरी दुनिया, राजनीति और समाज में व्याप्त रुग्णवादी प्रवृत्तियों को तीखे

स्वर में अभिव्यक्त करती है। इतिहास पुरुषों, स्थलों के माध्यम से भी वे आधुनिक जीवन के तीव्र द्वंद्वों को निशाना बनाते हैं। नयी कविता की शालीनता भरी भाषा को भी उन्होंने बदला। एक नए ढंग के शिल्प में भाषा को जनमुखी बनाते हुए, उसकी अभिव्यक्ति क्षमता में उन्होंने कमी नहीं आने दी।

श्रीकांत वर्मा का रचनाकार जीवन हिन्दी के कई अन्य प्रतिभाशाली कवियों की तरह बड़े शहरों की चकाचौंध से दूर मध्य-प्रदेश के छोटे से कस्बे बिलासपुर से शुरू हुआ था। वे निम्नवर्गीय परिवेश में पले-बढ़े, बिलासपुर में ही उनकी शिक्षा-दीक्षा हुई और वहीं उन्होंने कविता लिखना भी शुरू किया। मध्यप्रदेश कविता और साहित्य में आधुनिक संवेदना के प्रदेश के लिहाज से काफी महत्वपूर्ण है क्योंकि यहीं मुक्तिबोध लिख रहे थे और हरिशंकर परसाई भी।

श्रीकांत वर्मा स्वयं मानव-यातना और मानव-संघर्ष के गौरख की कविताएँ लिखना चाहते थे। वे स्वयं, जैसा कई जगह उन्होंने कहा और लिखा है, रचनाकार की छटपटाहट के चलते बिलासपुर जैसे शांत इलाके से दिल्ली जैसी आपाधापी से भरी और आधुनिक पूँजीवादी समाज के सारे अलगावों से ग्रस्त महानगरी में ला पटके गए। श्रीकांत वर्मा अपने युग और समाज को किस प्रकार देख रहे थे। वे लिखते हैं, '1960 के आसपास मेरे चारों ओर मृत्यु की, सिर्फ़ ग़रीबी, भुखमरी और असहायता से उत्पन्न मृत्यु नहीं बल्कि ऐसी मृत्यु जिसे सैकड़ों नामों से पुकारा जा सकता है, जैसे कि आत्मनिर्वासन, सामाजिक पलायन, प्रेम-विफलता, मूल्यहीन संसार में जीने का अहसास, मानवीय क्रूरता, करुणाविहीनता चारों और 'मारो' या 'मार दिया गया' का शोर।' अपनी वर्गीय सीमाओं से बाहर निकलकर अधिक विकसित सामाजिक समुदाय का हिस्सा होने की जद्दोजहद में एक संवेदनशील व्यक्ति को जो चोटें लगती हैं, उन सबका बयान इन पंक्तियों में पढ़ा जा सकता है। गरीबी, भुखमरी, असहायता के प्रमाण बड़ी संख्या में विपन्नता में मिल रहे लोगों की जिंदगियों में थे।

श्रीकांत वर्मा इस अभाव को वाणी देना चाहते थे। पहले कविता-संग्रह 'भटका मेघ' की भूमिका में उन्होंने उन साहित्यिक प्रवृत्तियों पर आक्रमण किया है जो 'आज के साहित्य' को 'व्यक्तित्व की खोज' साहित्य के में परिभाषित चाहती हैं। उनके अनुसार इस परिभाषा में अंतर्निहित है व्यक्तित्व को सामाजिकता से वंचित करने का प्रयास और उसे एक सामुदायिक जीवन-क्रम से, जिसे इतिहास भी कह सकते हैं, निकालकर अपने क्षणों तक सीमित करने का षड्यंत्रः तब नयी कविता 'क्षणों के महात्म्य' का साहित्य हो जाती है; तब मनुष्य एक जीवन नहीं जीता, क्षण जीता है। एक आदमी का जीवन संघर्ष, उसके अंत और मनोपीडाएँ स्वयं में महाकाव्य की क्षमता रखती हैं; किंतु 'अन्वेषी' साहित्यकार की दृष्टि में इन असंख्य क्षणों में कोई परस्पर संबंध नहीं, उनका कोई मेरुदंड नहीं, वे सब असम्बद्ध तथा स्वयं में संपूर्ण और 'स्वतंत्र' हैं। फलस्वरूप 'दायित्व' भी क्षण के ही प्रति! 'स्वतंत्रता' भी क्षण की, 'दायित्व' भी क्षण का।

श्रीकांत वर्मा की इन साहित्यिक मान्यताओं का कुछ संबंध उनके अपने समय के और उन्हीं के प्रदेश के मूर्धन्य मार्क्सवादी कवि गजानन माधव मुक्तिबोध के साथ उनकी निकटता से भी है। जैसा विद्वानों ने ठीक ही लक्ष्य किया है, यह संबंध सैद्धांतिक स्तर पर भी था। मुक्तिबोध के नज़दीक जाने पर उनके जीवन-मूल्यों और साहित्यिक मूल्यों से स्वयं को असम्पृक्त रखना किसी भी ईमानदार व्यक्ति के लिए असंभव था। श्रीकांत वर्मा के साथ भी यही स्थिति थी। डॉ. नंदकिशोर नवल ने श्रीकांत वर्मा पर अपने निबंध में लिखा है, 'मुक्तिबोध से प्रभावित होने का मतलब था नयी कविता के अंतर्विरोध को समझना और प्रगतिशील आलोचकों तरह नयी कविता को नकार कर नहीं, बल्कि स्वीकार कर नई सृजनशीलता के धरातल पर प्रगतिशील कविता की रचना करना।' डॉ. नवल ने अनुमान किया है कि नरेश मेहता के साथ नई दिल्ली से 'कृति' की शुरुआत के पीछे मुक्तिबोध की प्रेरणा काम कर रही होगी। प्रगतिशीलता की एक नई परिभाषा करने की कोशिश मुक्तिबोध कर रहे थे और उसमें दे साथी भी खोज रहे थे। श्रीकांत वर्मा स्वयं को इन आरंभिक वर्षों में वामपक्षी मानते थे और यह बताना चाहते थे कि सच्ची व्यक्तिगत स्वाधीनता की सही परिकल्पना उन जैसे कवियों के पास है, व्यक्तिगत स्वाधीनता का ढोल पीटने वाले व्यक्तिवादियों के बीच नहीं। यहाँ ये स्पष्टतः स्वयं को वैसे लेखकों से अलग करते हुए दीखते हैं जो साहित्य में तटस्थता के सिद्धांत को प्रतिपादित कर रहे थे। 'कृति' के दूसरे संपादक नरेश मेहता के 'तटस्थताः एक सैद्धांतिक स्वीकृति' शीर्षक संपादकीय की जिम्मेदारी लेने से इन्कार करते हुए डॉ. नामवर सिंह को उन्होंने पत्र लिखा- 'राजनीति में तटस्थता का जो भी महत्व हो- और है- साहित्य में तटस्थता जैसी कोई चीज़ नहीं। असल में यह प्रश्न कमिटमेंट का है। आज प्रगतिशील लेखक संघ जैसी कोई चीज नहीं।'

'मुक्तिबोध ने यथार्थ को उसकी जटिलता के साथ आत्मसात्कर

मनुष्यता के विजय-अभियान में अपनी अखंड आस्था का परिचय दिया, वहाँ श्रीकांत वर्मा ने सरल ढंग से आशा और विश्वास से युक्त स्वर को अपनी कविता में अभिव्यक्त किया। यही कारण था कि मुक्तिबोध का जहाँ अपनी आस्था से मोहभंग नहीं हुआ, वहाँ श्रीकांत वर्मा जिंदगी के यथार्थ का पहला झटका लगते ही दूसरे छोर पर आ पहुँचे।' उन्होंने यह भी लिखा है कि श्रीकांत वर्मा ने अपनी कविता में मानव-यातना का चित्रण नहीं किया, मानव-संघर्ष का भी चित्रण नहीं किया। ये निष्कर्ष थोड़ी जल्दबाज़ी से भरे हुए हैं क्योंकि श्रीकांत वर्मा की कविता मुक्तिबोध से भिन्न चरित्र की कविता है। दूसरे, मुक्तिबोध पक्के तौर पर मार्क्सवादी कवि थे, वे मार्क्सवाद द्वारा दी गई, जो उनके समय प्रायः स्वीकृत थी, सामाजिक विकास-क्रम की अवधारणा में विश्वास करते थे। श्रीकांत वर्मा मोटे तौर पर वामपंथी रुझान के बावजूद मार्क्सवादी न थे और मनुष्य को सामाजिक इकाई मानने के बाद भी उनके सामने वह संगठित जन-शक्ति स्पष्ट न थी जो उनके युग बंधनों में जकड़े मनुष्य को पूँजीवादी अलगाव और उत्पीड़न से मुक्ति दिलाने का आश्वासन हो सकती थी।

श्रीकांत वर्मा के समकालीन केदारनाथ सिंह की भी उस दौर की कविताओं में उत्साह, उल्लास, उमंग के दर्शन होते हैं। संशय का स्वर भी है, लेकिन वह उतना प्रबल नहीं है। खोज की आकुलता, कुछ नया कर डालने की व्यग्रता, चारों तरफ चल रहे उत्सव में अपना स्वर मिलाने की बेकली- ये सब श्रीकांत वर्मा की आरंभ की कविताओं में है। आस्था-विश्वास का स्वर अत्यंत ही दृढ़ हैं और दृष्टि साफ मालूम पड़ती है।

'कविता की खोज' शीर्षक इस कविता में वे कहते हैं- 'दृष्टि में मेरी, दिशा, नवकमल जैसी खिल गई है।'

ऐसा नहीं कि इस रूमानियत के चलते वे यथार्थ को जैसा वह था, देख नहीं पा रहे थे।

'संघर्ष-काल' शीर्षक कविता की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं:

"हर एक दिशा में मुझे दरारें दिखती हैं,
शायद यह आँखों का भ्रम है।
ये फटे-फटे सपने,
ये पंखनुची चिड़ियाँ,
यह सब कुछ कितना निर्मम है।
आत्मा के अंदर हिप्पोपोटेमस-सा दर्द चिंघाड़ रहा है।....
कोमलताओं की जांघों पर है।
छींटे ताज़े लहू के।"

श्रीकांत वर्मा के रचनाओं में ऊब, अनिर्णायात्मकता, आक्रामकता, विडंबना, यौन-प्रकृति आदि सभी कुछ आधुनिकता वाद के लक्षण हैं।

Critical Overview / अवलोकन

धूमिल, नागार्जुन, दूधनाथ सिंह और श्रीकांत वर्मा आधुनिक साहित्य के यशस्वी रचनाकार है। उन्होंने जीवन, प्रकृति, राजनीति एवं समकालीन समाज आदि को वर्णन विषय बनाया है। ये कवि सदा जन पक्ष में खड़े रहे।

Recap / पुनरावृत्ति

- सठोत्तरी कविता
- साठोत्तरी कविता
- समकालीन कविता, अकविता, सत्तोत्तरी कविता, नब्बे-उत्तरी कविता

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. नागार्जुन का असली नाम कया है?
2. धूमिल का वास्तविक नाम क्या है?
3. श्रीकांत वर्मा के दो रचनाओं के नाम लिखिए?
4. युगधारा किसकी रचना है?
5. संसद के सडक तक किसकी रचना है?
6. श्रीकांत वर्मा का जन्म कब हुआ?
7. 'संसद से सड़क तक' का प्रकाशन वर्ष?
8. साठेत्तरी कहानी आंदोलन का सूत्रपात किसने किया?

Answers/ उत्तर

1. वैद्यनाथ मिश्र।
2. सुदामा पाण्डेय।
3. माया दर्पण, जलसा घर में।
4. नागार्जुन।
5. धूमिल।
6. 18 सितंबर 1931
7. 1972
8. दूधनाथ सिंह

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. साठेत्तरी कविता के प्रमुख कवि एवं कविता पर आलोचनात्मक अध्ययन कीजिए।
2. दूधनाथ सिंह की काव्यगत विशेषताएँ लिखिए।
3. नागार्जुन के काव्यसौष्ठव पर टिप्पणी लिखिए।
4. श्रीकांत वर्मा की काव्यगत विशेषताएँ लिखिए।
5. कवि धूमिल पर टिप्पणी लिखिए।

इकाई 3

समकालीन कविता, परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ, प्रमुख कविता आन्दोलन- अकविता, हाईकू आदि

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- समकालीन कविता की प्रवृत्तियाँ समझता है
- समकालीन कविता की परिस्थितियों का परिचय प्राप्त होता है
- समकालीन कविता क्षेत्र की काव्यगत विशेषताएँ समझता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

हिन्दी में समकालीन जैसी कोई प्रवृत्ति नहीं है। वस्तुतः नयी कविता के बाद से लेकर अब तक के सभी प्रकार की कविताओं को ही सामूहिक रूप से समकालीन कविता की संज्ञा दी जाती है।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

- समकालीन हिन्दी के प्रतिनिधि।
- समकालीन प्रतिनिधि कविता ।
- स्त्री पक्षपात, दलित पक्षपात, सम लिंग पक्षपात, पर्यावरण-प्रदूषण संबंधी विषयों के मुख्य प्रवृत्तियाँ।
- समकालीन कवियों में प्रमुख अरुण कमल, अनामिका, ज्ञानेंद्रपति आदि के कविता के विषय-चुनाव, भाषा-शैली, भाव पक्ष और कला पक्ष का महत्व।

Discussion / चर्चा

समकालीन कविता, आधुनिक हिन्दी कविता के विकास में वर्तमान काव्यान्दोलन है। समकालीन कविता का आरम्भ 1962-64 से माना जाता है। साठोत्तरी कविता और समकालीन कविता को एक मान लेना उचित नहीं है। समकालीन कविता, आधुनिक कविता के विकास में नई चेतना, नयी भाव-भूमि, नई संवेदना तथा नए शिल्प के बदलाव की सूचक काव्यधारा है। इस काव्य धारा का लक्ष्य आम-आदमी और समाज की वास्तविकता को प्रस्तुत करना है। समकालीन कविता में सामान्य जन की दीनता-हीनता, प्रजातंत्र के प्रति अविश्वास, भविष्य के प्रति निराशा-अनिश्चितता, साधारण आदमी का संकटग्रस्त अस्तित्व, राजनीतिक व्यवस्था के भ्रष्टाचार पर प्रहरात्मक भाषा शैली में विरोध किया गया है।

'समकालीन कविता' का प्रवर्तन डॉ. विशम्भरनाथ उपाध्याय ने सन् 1976 में अपनी पुस्तक 'समकालीन कविता की भूमिका के माध्यम से किया। समकालीन शब्द अंग्रेजी के 'Contemporary' (कन्टेम्परेरी) का पर्याय है। इसे 'समसामयिकता' के अर्थ में ग्रहण किया जाता है। यह इस बात का सूचक है कि समकालीन कविता समसामयिक सन्दर्भों से जुड़ी हुई है। साथ ही इसे युग-विशेष के सन्दर्भों के अनुसार बदली हुई चेतना या मानसिकता का भी द्योतक माना जाता है। डॉ. विशम्भरनाथ उपाध्याय ने 'समकालीन' विशेषण के प्रयोग पर डालते हुए स्पष्ट किया है- 'समकालीन शब्द का प्रयोग मैंने

पहले अनजाने में ही किया हो पर सचेत रूप में तो सप्तम दशक में ही किया, क्योंकि मेरा 'Contemporary' (कन्टेम्परंरी) या और यह कि 'Modern' (मार्डन) अनेकार्थक तथा सन्देहास्पद हो गया था। 'Modern' या आधुनिक शब्द से परस्पर विरोधी अर्थ लिए जाते थे। पाश्चात्य सभ्यता तथा व्यवस्था और संस्कृति से प्रभावित लोग अपने को 'आधुनिक' कहते थे, पर वे उग्र सामाजिक परिवर्तन के पक्ष नहीं थे, और मात्र नवीन प्रयोगों तक सीमित थे, और व्यक्तिवादी रुझानों तक। अतः स्वच्छन्दता, स्वेच्छाचार, वैयक्तिकता तथा नए प्रयोगों को आधुनिक माना जाता था। मजा यह था कि कविता में तो नए प्रयोगों के लिए आधुनिक लोग समर्थक थे पर ये समाज की संरचना में बुनियादी परिवर्तनों के विरोधी थे। अतः मैंने सोचा कि 'आधुनिक शब्द मतिभ्रमपरक होने से 'समकालीन' शब्द ज्यादा ठीक है।' इससे स्पष्ट है कि डॉ. उपाध्याय का मूल लक्ष्य 'आधुनिकता' के नाम पर उछाली जाने वाल व्यक्तिवादी एवं समाज विरोधी प्रवृत्तियों का बहिष्कार करते हुए, सामाजिक प्रगति या क्रांति में योग देने वाली प्रवृत्तियों को बढ़ावा देना था।

समकालीन कविता की विशेषताएँ

विषय-विविध हैः

समकालीन कविता में घटना मुख्य विषय रहा हुआ है। कवियों के आँखों के आगे आने वाला ही नहीं, अपरिचित विषय भी काव्य-विषय के रूप में रूप-धारणा करता है। स्वदेशी समस्याओं के समान विदेशी समस्याएँ भी कवियों को प्रभावित करते हैं। जिसमें नैतिकता-अनैतिकता, लोकतंत्र-परतंत्र, विधान सभा, राजनीतिज्ञ, संप्रदायवाद, समाजवाद, चुनाव आदि सब मिल सकती है।

डॉ. संतोष तिवारी अपनी 'अज्ञेय से अरुण कमल' नामक ग्रंथ में लिखते है कि आठवेंदशक की कविता पूँजीवाद और व्यवस्था के ख़िलाफ़ आक्रोशित और आवेगी रचनाओं का दस्तावेज रही है। किंतु नवें दशक में आम आदमी के दुःख दर्द को अपेक्षाकृत अधिक संयत भाषा में इस तरह शब्दबद्ध किया गया है कि मनोव्यथायें गहरी करुणा के साथ परिवेशगत सच्चाइयों का इज़हार करती हुई हमारे दिल दिमाग़ को झकझोरती है संवेदना के स्तर पर वस्तु स्थिति का मार्मिक उद्घाटन करती है। समकालीन कविता में पारिवारिक रिश्तों को प्रगाढ़ आत्मीयता के साथ उभारा गया है।

▶ मोहभंग की कविता

समकालीन कविता समाज की मृत मान्यताओं, टूटती हुई परम्पराओं और मोहभंग की कविता है। उसमें आज की विकृत जिन्दगी और सम्बन्धों की खींच खरोच व्यक्त हुई है मोहभंग की जो प्रवृत्ति इस कविता में उपलब्ध है, उसे समकालीन परिवेश की तल्खी से उत्पन्न प्रतिक्रिया माना जा सकता है।

▶ यथार्थ का चित्रण

समकालीन कविता में जीवन से सीधा साक्षात्कार देखने को मिलता है। आठवें, नवें और दसवें दशक में लिखी गई कविता इसका उदाहरण है। इन दशकों में जो कविता लिखी गयी है, उसमें उत्तेजना, खीझ, असंतोष, निराशा और कड़वाहट का स्वर बहुत अधिक है। आज का कवि जब मनुष्य को दुहरी जिन्दगी जीते हुए देखता है तो वह साक्षात्कृत परिवेश के प्रति अपनी प्रतिबद्धता सूचित करता है।

समकालीन कविता जिस परिवेश की देन है, वह काफी भयावह, थोथा और विसंगतिपूर्ण है। कविता के 'मिथ' के टूटने उसे नये रूप में प्रस्तुत करने की पृष्ठभूमि में अस्वीकार के तेवर साफ झलकते हैं। ध्यान रहे कि अस्वीकार आधे या अधूरे मन से नहीं, सम्पूर्ण बौद्धिक और भावात्मक शक्ति से किया जाता है। यही कारण है कि समकालीन कवियों में अस्वीकार की यह मुद्रा रचनात्मक है, कोरी भावात्मक नहीं है। अस्वीकार की यह प्रवृत्ति दूधनाथ सिंह, चन्द्रकान्त देवताले, सौमित्र मोहन और नवें दसवें दशक के कवियों में बखूबी देखी जा सकती है। सौमित्र मोहन की 'लुकमान अली' कविता में आया अस्वीकार जीवन की विसंगतियों से जुड़कर निरन्तर एक रचाव की मुद्रा में प्रतिफलित हुआ है। अन्य कवियों के यहाँ भी इस अस्वीकार को देखा जा सकता है।

▶ आक्रोश और विद्रोह की भावना

समकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्तियों में आक्रोश और विद्रोह की भावना भी पर्याप्त अहमियत रखती है। इस कविता में जो आक्रोश और विद्रोह उभरा है, वह भारतीय परिवेश से ही उपजा है। भारत समाज में व्याप्त जड़ता, निष्क्रियता, विसंगति और विडम्बनाओं के कारण समकालीन कवि आक्रोशमूलक और विद्रोहपरक हो गयी है। विद्रोह और आक्रोश का यह स्वर बलदेव वंशी, वेणु गोप लीलाधर जगूड़ी, कमलेश, विष्णु खरे, देवेन्द्र कुमार, श्रीराम वर्मा, मत्स्येन्द्र शुक्ल, श्याम विमल आदि की कविताओं में देखा जा सकता है।

▶ तीखे व्यंग्य

वर्तमान परिवेश में व्याप्त विसगतियों को व्यक्त करने केलिए समकालीन कवियों ने तीखे व्यग्य का प्रयोग किए हैं। इस व्यंग्य की पृष्ठिका नयी कविता में ही तैयार हो गयी थी,

किन्तु वहाँ व्यंग्य शालीन था। यहाँ व्यंग्य तीखा, मर्मान्मक और आक्रान्त हो गया है।

▶ **राजनीतिक संदर्भों से साक्षात्कार**

राजनीतिक संदर्भों से साक्षात्कार समकालीन कविता की एक प्रवृत्ति राजनीतिक संदर्भों से साक्षात्कार है। मुक्तिबोध से शुरू हुई यह स्थिति श्रीराम वर्मा, मत्स्येन्द्र शुक्ल, रमेश गौड, धूमिल, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा और लीलाधर जगूड़ी आदि कवियों तक ही सीमित नहीं रही है। इसे हम नवें और दसवें दशक के युवा कवियों में भी देख सकते हैं।

किसी एक कवि की कविता की बपौती नहीं है, इसे तो हम बीसवीं सदी के अन्तिम वर्षों में समकालीन कविता में निर्मम वास्तविकताओं की बेपर्द व्यंजना हुई है। यह व्यंजना लिखी गई कविताओं में भी देख सकते हैं। नरेन्द्र मोहन, राजेश जोशी, अजय अनुरागी, प्रेमशंकर रघुवंशी, नरेन्द्र तिवारी, सुनील खन्ना, विजयकुमार, परमानन्द श्रीवास्तव, एकान्त श्रीवास्तव, मंजू गुप्ता, आलोक धन्वा, मोहन संपरा, अरुण कमल, अनिल जोशी, अमरजीत प्रताप सहगल व मलखान सिंह सिसोदिया आदि की कविताएँ इसका प्रमाण हैं।

▶ **अनुभव की ईमानदारी**

समकालीन कविता अनुभव की आँच में तपकर लिखी गई कविता है। इसके कवि अपने अनुभव की ईमानदार अभिव्यंजना के कायल हैं। यही कारण है कि इस कविता की भाषा रोज भाषा है। उसमें साफगोई है, सपाटबयानी है, किन्तु इसका यह अर्थ मान लेना अनुचित होगा कि प्रेषणीयता और व्यंजकता के गुणों से शून्य है।

Critical Overview / अवलोकन

समसामायिक सामाजिक एवं राजनीतिक विसंगतियों का प्रभाव आर्थिक पक्ष पर पड़ना स्वाभाविक है। कवियों ने आर्थिक विषमता और महंगाई का चित्रण भी किया है। हमारे समकालीन कवि दो प्रकार के हैं। एक वे हैं जो अपनी रचना और उसके विषयों को लेकर बहुत मुखर हैं। उन्हें अपने को मनवाने की चिन्ता अधिक रहती है। समझौताविहीन स्तर पर और बेहतरी की दिशा में या कहें प्रगति की मंशा से यदि किसी में यह है, उसे भी आत्मसंघर्ष के रूप में मंजूर किया जाना चाहिए। दूसरे वे हैं जो अपने कवि होने के प्रति संकोच का भाव रखते हैं। उनका आत्मसंघर्ष कठिन है। उनमें अन्तःप्रेरणाएँ अधिक सक्रिय रहती हैं, लेकिन उन्हें समझने में कवि अपने को असमर्थ महसूस करता है। जब कवि ही नहीं समझ पाता तो दूसरों के लिए समझना मुश्किल काम होगा ही। इस मुश्किल के भीतर कवि के आत्मसंघर्ष को समझने और इसी दृष्टि से उसे महत्त्व दिए जाने की आवश्यकता है। आज कवि बहुत हैं, लेकिन इस 'मुश्किल' के भीतर ऊँचाई पाने वाले कवि बहुत कम हैं। जो हैं उन्हें आगे रखकर देखने की ज़रूरत है। आत्मसंघर्ष वाली बात ठीक-ठीक तभी समझ में आ सकती है।

जिसे पुराने लोग 'कारयित्री प्रतिभा' कहते थे। यह 'उत्पाद्य प्रतिभा' है। प्रतिभा कहने से भी काम चल सकता है। इसमें अनुभूति, जीवनानुभूति और कलात्मक अनुभूति, सभी बातें शामिल हो जाती हैं। यह सदैव बेहतरी अथवा अच्छाई की दिशा में सक्रिय रहती है। इसे मान लेने के बावजूद, जैसा कि मैं समझता हूँ, अन्तःप्रेरणा वह 'स्पेस' है जहाँ अच्छाई और बुराई को बराबर का दर्जा प्राप्त होता है। अन्तःप्रेरणा में हम एक वस्तु को दूसरी वस्तु को विकल्प के रूप में नहीं देखते, उनसे चेतनागत सम्बन्ध अथवा विशेष प्रकार का तादात्म्य स्थापित करते हैं। अन्तःप्रेरणा के क्षेत्र में अन्तर्बाधा के लिए स्थान नहीं है। लेखक के नाते हम जानते हैं कि मूल्य अन्तिम नहीं होते। सात्र का यह कथन महत्त्वपूर्ण है, "मानवता को अभी निर्धारित होना बाकी है।" यही समझ हमें फासीवादी होने से बचाती है और आत्मसंघर्ष के लिए युक्ति प्रदान करती है।

एक साथ कई विषयों से गुज़रना और उनसे जुड़े प्रश्नों पर बात करना कठिनाई पैदा करता है। यह दौर ही ऐसा है- अनेक विषयों और प्रश्नों से घिरा। इस अर्थ में मैं मानता हूँ कि नौवाँ दशक और उसके बाद का समय अलग से दिखाई देता है। लेकिन इसे 'लाँग नाइन्टीज़' ही कहा जाए, इसे लेकर मेरे मन में दुविधा है। बद्रीनारायण की इस बात से मैं सहमत हूँ कि नब्बे के दशक के पूर्व की कविता में जा वैचारिक संस्रोत काम कर रहे थे, वे बाद में कमजोर पड़ गए या अपर्याप्त साबित हुए। हमारे समय में 'अनेकान्त' का महत्त्व है। हम किसी भी बुनियादी विषय पर एकमत होने की स्थिति में पहले की तुलना में बहुत कम हैं। दूसरी ओर, दूसरों की तरफ से प्रस्तावित विषय और विचार के प्रति हम पहले की तरह द्वेषी नहीं हैं। हम अकेला विकल्प हैं, यह बात अब नहीं रही। हमारा विवाद सबसे है और अपने आपसे भी है, जो जीवन और रचनाशीलता दोनों में मायने पैदा कर रहा है। लेकिन जिस दुनिया में हम जी रहे हैं उसमें ख़तरे भी कई गुना बढ़ गए हैं, उसमें हार जाने का डर विगत की तुलना में बढ़ गया है। यह एक ऐसा क्षण अथवा विन्दु है जो हमें इस समझ पर कायम होने के लिए विवश करता है कि पिछले 'दर्शन' का महत्त्व है, लेकिन उसमें ज़रूरी

संशोधन और नये अध्याय जोड़ने की ज़रूरत पड़ेगी। अभी तो हमें यही पता नहीं है कि हम कहाँ जा रहे हैं। यह अनेकान्त काल है। लेकिन रचनाशीलता के लिए, तमाम मुश्किलों के बावजूद, यही ऊर्वर काल है।

साहित्य में आम आदमी या सामान्य जन की चर्चा विश्व के हर साहित्य में मिल जाती है। साहित्य व्यक्ति विशेष की संवेदनाओं का साधारणीकरण करता है। भारत के प्राचीन साहित्य में सामान्य जन की संवेदनाएँ कम ही मिलती है। संस्कृत साहित्य का नायक तो धीरोदात्त प्रकार का होता है। हिन्दी में भक्ति काल में कबीर एवं तुलसी काव्य में सामान्य व्यक्ति का चित्रण मिल जाता है। रीतिकाल में फिर से आम आदमी नदारद है। आधुनिक काल में जन सामान्य एक क्रांतिकारी परिवर्तन के साथ उपस्थित होता है। भारतेन्दु, मैथिलीशरण गुप्त, निराला, पंत, दिनकर आदि के साहित्य में जन साधारण का चित्रण मिल जाता है। सही मायनों में आम आदमी का चित्रण नागार्जुन की कविताओं में मिलता है। इस प्रकार सातवें दशक तक आम आदमी का किसी न किसी रूप में लिखा जाता रहा है पर सातवें दशक के कवियों ने आम आदमी को गम्भीरता एवं विविधतापूर्ण गहन संवेदना के साथ चित्रण किया।

साधारण, सामान्य, मामूली जन आदि आम आदमी के ही पर्याय है पर आम आदमी कहने में जितना पूरा ध्वनितार्थ मिलता है उतना अन्य पर्यायवाची शब्दों में नहीं। 'आम' शब्द अमूर्त है और यह व्यापक अर्थ की उद्भावना लिए हुए है। आम आदमी बिल्कुल मामूली, पद दलित, प्रताडित, विवश व्यक्ति के सन्दर्भ में अर्थ लिया हुआ है। इसी आदमी को परिभाषित करते हुए कमलेश्वर कहते हैं "यह आदमी वह है जो कहीं भी किसी भी क्षेत्र में नियन्ता नहीं है पर हर कार्य की आधारशिला है।" यह आदमी सामाजिक विषमता से त्रस्त और शोषित व्यक्ति है जो प्रत्येक स्तर एवं हर अवस्था में अपने को विवश पाता है। समकालीन हिन्दी कविता इसी आदमी की पीडा को चित्रित करती है। सातवें दशक की इन कविताओं में आम आदमी की पीडा, संत्रास, दयनीयता, तनाव, जीवन संघर्ष का चित्रण है वहीं व्यवस्था की क्रूरता, दमन, आतंकवाद, साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार, विकृत न्याय व्यवस्था, महंगाई, भूख, कुपोषण, दरिद्रता आदि वर्णित है। इस कविता में आदमी का विद्रोह, चेतना, संघर्ष, विरोध, जागृति के स्वर भी सुनाई देते हैं।

आम आदमी की सबसे बडी पीडा निर्धनता की है। समकालीन कवि ने निर्धनता और अभाव पर खुल कर लिखा है।

Recap / पुनरावृत्ति

- आधुनिक काल
- नयी कविता के बाद आनेवाले काव्य क्षेत्र
- समकालीन कविता का उदय
- नामकरण की सार्थकता
- परिस्थितियाँ
- प्रवृत्तियाँ
- महत्व

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. समकालीन कविता क्षेत्र किस काल के अन्तर्गत आते है?
2. समकालीन कविता की एक मुख्य प्रवृत्ति क्या है?
3. अरुण कमल किस क्षेत्र के कवि है?
4. समकालीन कविता का समय क्या है?
5. एक समकालीन कविता का नाम लिखिए?
6. 'महंगू महंगा रहा' किसमें में संकलित कविता है?
7. अपनी कविता 'बीस साल बाद' किसकी कविता है?
8. नदी और साबुन किसकी कविता है?

Answers/ उत्तर

1. आधुनिक काल।
2. समसामयिक प्रश्नों का अवधारणा।
3. समकालीन कवि।
4. 1960 के बाद।
5. संश्यात्मा- ज्ञानेंद्र पति।
6. 'नए पत्ते'
7. धूमिल
8. ज्ञानेन्द्रपति

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. समकालीन कविता पर टिप्पणी लिखिए।
2. समकालीन कविता की मुख्य प्रवृत्तियों पर टिप्पणी लिखिए।
3. समकालीन कवियों पर टिप्पणी लिखिए।
4. समकालीन कविता में अभिव्यक्त राजनीति पर टिप्पणी लिखिए।
5. समकालीन कविता की परिस्थितियों पर विचार प्रकट कीजिए।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

इकाई 4

समकालीन कविता के प्रमुख कवि- अरुण कमल, अशोक वाजपेयी, राजकमल चौधरी, अनामिका, लीलाधर जगूडी, उदय प्रकाश, आलोक धन्वा, कुमार अम्बुज, ज्ञानेन्द्रपति (सामान्य परिचय)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- समकालीन कवियों के सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिक, भौगोलिक, शैक्षिक तथा पारिवारिक आदि सभी विषयों का परिचय प्राप्त होता है
- हिन्दी के समान अंग्रेजी साहित्य में भी प्रभुत्व रखने वाली कवियत्री अनामिका के बारे में समझता है
- समकालीन कवियों की काव्यगत विशेषताएँ समझता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

समकालीन हिंदी कविता को समृद्ध बनाने में प्रगतिवादी और नयी कविता दौर के कवि भी सक्रिय रहे जिनमें नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, शमशेर, त्रिलोचन शास्त्री आदि प्रमुख हैं। मुक्तिबोध का साहित्य तो प्रेरक के रूप में मौजूद था ही नयी कविता दौर के रघुवीर सहाय केदारनाथ सिंह, श्रीकांत वर्मा आदि ने भी इस दौर में महत्वपूर्ण लेखन किया। इनके अतिरिक्त इस दौर के प्रमुख कवि हैं- जगदीश चतुर्वेदी, सौमित्र मोहन, प्रयाग शुक्ल, धूमिल, लीलाधर जगूड़ी, विनोद कुमार शुक्ल, ऋतुराज, अशोक वाजपेयी, आलोक धन्वा, कुमार विकल, अरुण कमल, इब्बार रब्बी, मंगलेश डबराल, राजेश जोशी, मनमोहन, कुमारअम्बुज, आलोकधन्वा, राजकमल चौधरी, ज्ञानेन्द्रपति, विष्णु नागर आदि गीतकारों में शंभूनाथ सिंह, रामदरश मिश्र, वीरेंद्र मिश्र, लीलाधर जगूडी, उमाकांत मालवीय, रवीन्द्र भ्रमर ठाकुरप्रसाद सिंह, रमेश रंजक, हरीश भादानी, माहेश्वरी तिवारी, कात्यायनी, अनामिका, उदयप्रकाश आदि प्रमुख हैं।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

- समकालीन कविता की सामाजिक परिस्थिति।
- कवियों के रचना वैभव।
- रचना में व्यक्त समसामयिक समस्याएँ।

Discussion / चर्चा

हिन्दी कविता को विकसित करने में समकालीन कवियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। समकालीन कवियों का योगदान निश्चित रूप से समकालीन कविता के विकास में महत्वपूर्ण रहा है, ऐसे कवियों का परिचय होना आवश्यक है। समकालीन कवियों के जानकारी के बगैर समकालीन कविता की बात करना असंगत होगा अतः समकालीन कवियों का सामान्य परिचय देना समीचीन होगा। समकालीन कवियों में अगर देखा जाए तो हर दौर का कवि है, लेकिन कुछ महत्वपूर्ण हस्ताक्षरों को यहाँ पर देखना अधिक समीचीन होगा। समकालीन कवियों में चन्द्रकांत देवताले, लीलाधर जगूडी, नरेन्द्र मोहन, कुमार विकल, अरुण कमल, धूमिल, ज्ञानेन्द्रपति, विनय, मंगलेश डबराल, केदारनाथ सिंह, राजेश जोशी, विनोद कुमार शुक्ल,

ध्रुव शुक्ल, शिवकुमार श्रीवास्तव, श्रीकांत जोशी, देवेंद्र दीपक, वेदप्रकाश अमिताभ, हर्षनारायन नीरव, माधव शुक्ल मनोज, सुदीप बनर्जी, संजय चौरसिया, असद जैदी, आलोक धन्वा, प्रयाग शुक्ल, विनोद भारद्वाज, हरिशंकर अग्रवाल, शलभ श्री रामसिंह, वीरेंद्र डंगवाल, मनीमधुकर, देवेंद्र दीपक, हर्षनारायन नीरव, रमाकांत श्रीवास्तव, स्वप्निल श्रीवास्तव, विमल कुमार, मोहन कुमार डहेरिया, अनामिका, ओम भारती, सुनीता बुद्धिराजा, गगन गिल आदि कवि महत्वपूर्ण है, वैसे अगर देखा जाए तो समकालीन कवियों की लम्बी सूची है, लेकिन कुछ कवियों का परिचय यहाँ प्रस्तुत किया गया है।

प्रमुख समकालीन कवि

लीलाधर जगूड़ी

समकालीन कविता के महत्वपूर्ण तथा सशक्त कवि है। हिन्दी कविता के सातवें तथा आठवें दशक के कवियों में जगूड़ी का विशेष अस्तित्व रहा है, आज भी अपने समकालीनों में जगूडी अपने अस्तित्व से जुड़े हुए है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जगूडी अपने समय के समर्थ कवि है। जगूडी की कविताएँ आदमी के जीने के लिए प्रेरक है। कविता आदमी की आवश्यकता है ऐसे आवश्यकताओं की पूर्ती जगूडी जैसे कवियों ने की है आज के समाज की सच्ची तस्वीर जगूड़ी की कविता है। जगूडी की कविताएँ आज की स्थिति से सीधा साक्षात्कार कराती है। वर्तमान समाज के साथ कवि का सरोकर है। जगूडी की कविताओं में आम आदमी की नियति का लेखा जोखा प्रस्तुत हुआ है। जगूडी ने अव्यवस्था तथा आम आदमी की विवशता को अपने काव्य का विषय बनाया है। समकालीन लम्बी कविता लिखने कवियों में जगूडी ने अपनी लम्बी कविताएँ लिखकर अपनी अलग शनाख्त बनाई है। आज तक जगूडी के नौ काव्य संग्रह प्रकाशित हुए है। इसके साथ ही साथ जगूडी की कविताएँ सभी पत्र पत्रिकाओं में तथा अन्यतम काव्य संग्रहों में प्रकाशित होती रही है। वर्तमान की सामाजिक राजनीतिक विसंगती मानव के टूटते हुए मूल्य आदि को जगूडी ने अपनी कविताओं में बड़ी ईमानदारी से साकार किया है जगूडी की कविता पूरी तरह से आम आदमी पर केन्द्रित है। समाज में निहित आम आदमी के प्रति, शोषितों के प्रति कवि जगूडी की गहरी सहानुभूति है। अपने हर काव्य संग्रह में कवि जगूडी ने सामान्य जन के प्रति आत्मीयता का भाव प्रस्तुत किया है। जगूडी के काव्य में राजनीतिक तथा सामाजिक चेतना प्रचुर मात्रा में उद्घाटित हुई है। कवि के शब्द निश्चित अर्थ को ग्रहण करते है। जगूडी की कविताएँ सामाजिकता बोध को नई दिशाएँ देती है। कवि लीलाधर जगूडी का जन्म सन् जुलाई 1944 को टिहरी जिले के धंगणगांव में हुआ। शुरु में बडेथ, रायमोर उत्तरकाशी में अध्यापक रहे जगूडी समकालीन कविता के सशक्त कवि है। अपने समकालीनों में जगूडी अपना एक विशेष प्रकार का स्थान स्थापित करते है लीलाधर जगूडी की प्रकाशित कृतियाँ इस प्रकार है- शंखमुखी शिखरों पर (1964), नाटक जारी है (1972), इस यात्रा में (1974), रात अब भी मौजूद है (1976), बची हुई पृथ्वी (1977), घबराए हुए शब्द (1981)।

जगूडी की पारिवारिक कविताओं में सहजता और स्वाभाविकता है। भाषा की दृष्टि से जगूडी कविताएँ सहज, सरल तथा बोलचाल की भाषा है। लीलाधर जगूडी के प्रतिकों और बिम्बों में बच्चे, पेड़, चिड़ियाँ अन्तर्देशीय, चींटी, जंगल, घोड़ जैसे सामान्य संदर्भ अर्थवत्ता और मानवीय संवेदना को प्राप्त करते है। जगूडी की हर कविता में बच्चे, पेड़, चिड़ियाँ बार-बार आते है। कवि जगूड़ी ने घोड़े, साँप, बच्चों के प्रतिकात्मक प्रयोग से वर्तमान व्यवस्था की भयावहता को मूर्त किया जगूडी की लम्बी कविताओं में शिल्प के कई स्तर है। जगूडी की लम्बी कविता में भाव बोध तथा वैचारिकता बार-बार बिखरती और टूटती है लम्बी कविता मे भाषण शैली का प्रयोग हुआ है।

अरुण कमल

अरुण कमल समकालीन हिन्दी कविता के सशक्त हस्ताक्षर है। आप वर्तमान प्रगतिशील विचारधारा के वक्ता-कवि रहे हैं। समकालीन जीवन की संघर्ष, संकट एवं परिवर्तन आदि अरुण के काव्यों के विषय रहा है।

अरुण कमल का वास्तविक नाम अरुण कुमार है। अरुण कमल के नाम से आप जाने जाते हैं। उनका जन्म 15 फरवरी 1954 को बिहार के रोहतास जिले के नासरीगंज में हुआ था। वे कई साल पटना विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के प्रोफ़ेसर रहे

हैं। आप कवि होने के साथ-साथ आलोचक और अनुवादक भी है। किंतु कवि के रूप में उन्हें अच्छी ख्याति मिली है। अरुण कमल प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यिक पत्रिका आलोचना के संपादक भी रहे है।

पहला काव्य ग्रंथ

अरुण कमल का पहला काव्य ग्रंथ अपनी केवल धार है, जिसकी प्रकाशन सन् 1980 में हुई थी। इसके पश्चात आप जाने माने वाले कवि बन गये।

अन्य काव्य संग्रह

सन् 1989 में प्रकाशित अरुण कमल के दूसरा काव्य-संग्रह सबूत अत्यधिक लोकप्रियता पायी है। सन् 1996 में उन्होंने नए इलाके में नाम से तीसरे काव्य-संग्रह प्रकाशित किये, जिसे भी साहित्य-प्रेमी सहर्ष स्वीकार किये।

प्रकाशित कृतियाँ

नए इलाके में, मैं वो शंख महा शंख, अपनी केवल धार, सबूत, पुतली में संसार आदि अरुण कमल के काव्य कृतियों में प्रमुख है। उनके आलोचना ग्रंथों में कविता और समय, गोल मेज आदि मुख्य है। कथोपकथन उनकी ख्याति प्राप्त आलोचना ग्रंथ है।

पुरस्कार

सन् 1998 में नये इलाके में नामक काव्य पर अरुण कमल को केंद्र साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला है। इसके सिवा सोवियत लैंड नेहरु पुरस्कार, भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार, श्रीकांत वर्मा स्मृति पुरस्कार, शमशेर सम्मान, रघुवीर सहाय स्मृति पुरस्कार आदि सम्मानों से भी आप सम्मानित हुए हैं।

समकालीन हिन्दी कविता के युवा कवियों में उभरता हुआ एक सशक्त हस्ताक्षर आज समकालीन कवियों में अरुण कमल का नाम बहुचर्चित है। अरुण कमल में समकालीन सोच की सही दिशा विद्यमान है। अरुण कमल की कविताएँ समकालीन परिवेश का सही चित्रण करने में अग्रणी है। समसामायिक विचारधारा की धरातल पर कवि अरुण कमल की कविताएँ सही मायने में खरी उतर रही है। समाज में निहित साधारण जन से कवि सीधे बातचीत करते हुए अपनी कविताओं में उसे सही रूप में साकार करता है। अरुण कमल एक ऐसे समकालीन कवि है, जो साधारण जन से अपनी कविता के लिए कुछ लेते है, और उसे वापसी भी कर देते है। साधारण जन के प्रति आस्था है। अरुण कमल की कविताएँ धीमे-धीमे आक्रोश की ओर से वैचारिक धरातल की ओर उन्मुख होते नजर आती है। समकालीन हिन्दी कविता को नये सिरे से लाने का सफल प्रयास कवि ने किया है। कवि अरुण कमल की संवेदना वर्तमान समाज में निहित आर्थिक एवं सामाजिक पहलुओं को उजागर करते हुए युगीन सच्चाईयों को बेबाकी से प्रस्तुत करती है। अरुण कमल की कविताओं में समाज के प्रति आस्था तथा मानवीयता का समन्वय एक साथ उपस्थित हुआ है।

अरुण कमल की कविताओं में समाज में निहित निम्न मध्यमवर्ग, तथा मिल में काम करने वाले मजदूर जिनका यथार्थ चित्रण हुआ है। अरुण कमल की कुछ कविताओं में नारी के प्रति सहानुभूति दिखाई देती है। इस पूँजीवादी व्यवस्था में मजदूर तथा नारी का शोषण होने वाला शोषण कवि को बेहद परेशान करता है, इन सब के प्रति अरुण कमल की कविताओं में अवसाद दिखाई देता है। समाज की स्थितियों के खिलाफ कवि संघर्ष जारी है। समकालीन कवियों में संवेदनशील कवि के रूप में अरुण कमल की अलग पहचान है। समान में दीन दुःखी है, पीड़ित है, जिनका शोषण किया जा रहा है, ऐसे समाज में सताए हुए लोगों के कवि अरुण कमल है अपने काव्य कवि ने अपनी सही पहचान बनाई है। अरुण कमल कवि होने के साथ-साथ एक अच्छे समीक्षक, आलोचक भी है। समकालीन कविता की आलोचना की है। समकालीन कवियों की खासियत यह रही कि वे अच्छे आलोचक भी सिद्ध हुए अरुण कमल उन्हीं से उभरता हुआ एक सफल कवि है।

अनामिका

हिन्दी समकालीन साहित्य के मजबूत नाम है अनामिका। अंग्रेजी के कन्टेम्परेरी शब्द का हिन्दी है समकालीन। अनामिका के लेखनी समकालीन संदर्भो के सारी उथल-पुथलों को लिपिबद्ध करने में सक्षम है। वे खुली आँखों से समाज को देखती है और उसकी समग्र चित्रण प्रस्तुत करती है। यह विशेष ध्यान देने का बात है कि अनामिका के संपूर्ण रचना का नींव नारीवाद है। वे सदा समय उसके पक्षधर हो कर चलते हैं। उनकी कविता हो या लेख, स्त्री अस्तित्व की पहचान के प्रतिरूप हो कर समाज

के सामने खड़ी है।

अनामिका पूर्ण अर्थ में जागरूक कलाकार है। इक्कीसवीं शती में समाज और परिवार से भ्रष्ट महिलाओं की दुख और पीड़ा अक्षरबद्ध करने में वह किसी के पीछे नहीं है। हर वक्त उनकी कोमल मन नारी-यातनाओं के प्रति हमदर्दी प्रदर्शित करती दिखायी पड़ती है। क्योंकि वह हज़ारों-लाखों स्त्रियों की नरक तुल्य जीवन भली-भाँति समझती है।

अनामिका की कविता समकालीन संदर्भ में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने का कारण यह है कि उसमें अंतर्लीन नारी मुक्ति भावना है। उनके स्त्री पक्ष कविता पढ़ते समय पाठक और कवयित्री के बीच संपर्क प्रतीत नहीं होता है। पाठक सीधे लाखों-करोड़ों दुखित और विवश स्त्रियों से अपना आँख, कान और हृदय मिलाने के समान प्रतीत होता है। तात्पर्य यह है कि अनामिका के कविता में पाठक सीधे विषय और पात्र से विचार-विनिमय करते हैं। कवयित्री नेपथ्य में छिपकर बैठती यह कवि और कविता की सफलता के सबूत है।

हिन्दी के समान अंग्रेजी साहित्य में भी प्रभुत्व रखने वाली रचनाकार है। वे सही अर्थ में नारी पक्षपाती लेखिका है। लेखन-कार्य के साथ-साथ अनामिका देश-देशांतर के साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक प्रवृत्तियों में से भी जुड़े हुए है। अध्यापिका, कवयित्री, उपन्यासकार, कहानीकार, आलोचक, निबंधकार, पत्रकार तथा अनुवादक आदि विभिन्न रूप में अनामिका ख्याति पायी है।

अनामिका के रचनाओं की मुख्य विशेषता उसमें अंतर्लीन संवेदना है। उनकी कविताओं में जितनी संवेदना मिलती है उतनी वर्तमान साहित्य में अन्यत्र किसी में दुर्लभ है। अनामिका के कविता में स्त्री के अस्तित्व और वास्तविक स्थिति विविध रूप-धारण कर पाठकों के सामने उपस्थित होते हैं। जिससे बच्ची से लेकर बूढ़ी तक छूटे नहीं जाते है।

स्त्री पक्ष चिंता अनामिका के कविता का पहचान है। उस धरातल पर खड़ी होकर वह अपनी भावनाओं को विकास-परिणाम कर देती है। यह सच है कि समाज में स्त्री की एक अलग स्थान होती है। यह स्थान पुरुष से भिन्न और बहुत दूर की होती है। पुरुष को जो कुछ उपलब्ध है वह स्त्री को अनुपलब्ध है। जब पुरुष सभी प्रकार के सुख-सुविधाओं के वक्ता और भोक्ता रहता है तब स्त्री को उन सबसे वंचित रहना पड़ता है। पुरुष के सामने सब रास्ता खुला है, परंतु स्त्री के आगे सब कुछ बंद। सभी अवसर स्त्री से छूटी जाती है। वह अधिकांशतः मनचाहे जगह से वंचित रह सकती है। अनामिका स्त्री की उस छूटी हुई जगह को निर्धारित कर प्रस्तुत करने में सजीव, सक्रिय और सबल रहती है।

अनामिका के बारे में वरिष्ठ आलोचक डॉ.नामवर सिंह सच ही कहा है- स्त्री-मुक्ति के नए आयाम यहाँ खुलते हैं। अनामिका के यहाँ स्त्री-मुक्ति मानव-मुक्ति का उत्स है।

कवि परिचय

अनामिका शब्द का अर्थ गुणी या सीमाओं एक नाम द्वारा लगाये गये निशुल्क होता है। समकालीन साहित्य जगत में अपनी नाम चरितार्थ कर दिये मेधा कवयित्री अनामिका का जन्म बिहार के मुजफ़्फ़रपुर में 17 अगस्त, 1961 को हुआ था।

शिक्षा

अनामिका ने दिल्ली विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए पास किया। तदनंतर वहीं से पी.एच.डी तथा डी लिट् की उपाधि भी पास कर दिया।

अध्यापन

अनामिका विद्यार्थियों के प्रिय अध्यापिका बनी रही है। आपने कई वर्ष दिल्ली के सत्यवती कॉलेज में प्रशंसनीय रूप में अध्यापन कार्य किया। संप्रति दिल्ली विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग में प्रोफ़ेसर के पद पर कार्यरत है।

लेखनी से-

अनामिका यशस्वी कवयित्री, कहानीकार, उपन्यासकार, आलोचक, पत्रकार आदि विविध क्षेत्र में ख्याति प्राप्त रचनाकार है। उनके 'टोकरी में दिगंत-थेरीगाथा: 2014' शीर्षक काव्य पर वर्ष 2020 का केन्द्र साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है। उनकी मुख्य कृतियों के नाम आगे दिया जायेगा।

पुरस्कार व सम्मान-

1. केन्द्र साहित्य अकादमी पुरस्कार।
2. राष्ट्रभाषा परिषद पुरस्कार।
3. भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार।
4. गिरिजाकुमार माथुर पुरस्कार।
5. साहित्य सेतु सम्मान।
6. केदार सम्मान।
7. ऋतुराज सम्मान।
8. गिरिजाकुमार माथुर सम्मान।
9. शमशेर सम्मान।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

10. द्विजदेव सम्मान।
11. साहित्यकार सम्मान।
12. मुक्तिबोध सम्मान।
13. महादेवी सम्मान।

आदि कई पुरस्कारों से अनामिका सम्मानित हुई है ।

रचनाकार की अन्य रचनाएँ

कविता संग्रह- गलत पते की चिट्ठी, बीजाक्षअनुष्टुप, समय के शहर में, दूब धान, खुरदुरी हथेलियाँ

आलोचना- एलियट पोएट्री, स्त्रीत्व का मानचित्र, तिरिया चरित्रम, उत्तर काण्ड, मन मांजने की जरूरत, पानी जो पत्थर पीता है।

कहानी संग्रह- प्रति नायक।

उपन्यास- पर कौन सुनेगा, अवांतर कथा, तिनका तिनके पास, दस द्वारे का पिंजरा, मन कृष्णः मन अर्जुन। इसके अलावा कई कृतियों के अनुवाद भी किया है।

पुरस्कार व सम्मान

1. राष्ट्रभाषा परिषद् पुरस्कार
2. भारत भूषण अग्रवाल पुरस्कार
3. गिरिजाकुमार माथुर पुरस्कार
4. ऋतुराज सम्मान
5. द्विजदेव सम्मान
6. केदार सम्मान

कात्यायनी

हिन्दी की स्त्री-कविता में क्रान्तिधर्मी चेतना के वाहक के रूप में कात्यायनी की कविता एक अलग प्रतिमान उपस्थित करती है। जीवन के तमाम निजी एवं सामाजिक प्रसंगों में उनकी पारखी निगाह विडम्बनामूलक स्रोतों का अनावरण कर मर्म तक पहुँचती है और उन दुखती रगों को पकड़ पाती है जो व्यक्ति और समाज के जीवन को बदरंग कर रहे हैं। बहुमुखी शोषण तथा साम्प्रदायिकता के आघातों से तार-तार होती मनुष्यता को बचाने का संकल्प उनकी कविता का प्राण है। गहरी सामाजिक प्रतिबद्धता व मानवीय पक्षधरता का महीन तार उनकी समस्त रचनाओं को एक सूत्र में पिरोता है। संस्थाबद्ध वर्चस्वशाली चुनौतियों के विकल्प के रूप में उन्हें कविता की सामाजिक भूमिका में गहरी आस्था है। उनके यहाँ कविता में और आँखों में परिवर्तन का सपना जीवन्त धड़कता है। निष्ठा तथा आशा का यह स्वर ऊसर होती दुनिया को किसी भी क़ीमत पर बचा लेने की उत्कट जिजीविषा से जुड़ी संकल्पधर्मिता का परिणाम है। कात्यायनी की कविता में सामाजिक परिवर्तन के प्रति अटूट विश्वास उन्हें मुक्तिबोध की काव्य परम्परा में स्थापित करता है। सामाजिक चेतना का यह स्वर स्त्री-कविता का विलक्षण स्वर है, जिसने स्त्री के स्त्रीत्व और दृष्टि दोनों को नई दिशा दी है।

कात्यायनी की काव्य-यात्रा का प्रारम्भ 1994 में 'सात भाइयों के बीच चम्पा' से होता है। उससे पहले सम्भवतः 'चेहरों पर आँच' शीर्षक से उनकी एक कविता पुस्तिका का प्रकाशन हो चुका था। लेकिन जिस काव्य-संकलन से उनकी पहचान बनी वह 'सात भाइयों के बीच चम्पा' ही है। इस पुस्तक के फ्लैप पर दी गई सुरेश सलिल की टिप्पणी इन कविताओं की दिशा संकेतित करती है। सुरेश सलिल लिखते हैं, 'सात भाइयों के बीच चम्पा की कविताएँ काव्य चातुर्य के लिए नहीं, कविता सरोकारों के लिए पढ़ी और याद रखी जाएँगी।' यह टिप्पणी कात्यायनी के कवि-स्वभाव को दर्ज करती है। उनकी कविता का प्रधान लक्ष्य काव्य-सरोकार ही है। इसके बाद 1999 में 'इस पौरुषपूर्ण समय में' फिर 2002 में 'जादू नहीं कविता', 2004 में 'राख अँधेरे की बारिश में' और 2006 में 'फुटपाथ पर कुर्सी' उनके प्रसिद्ध काव्य संकलन हैं। कात्यायनी की कविताएँ अनेक स्तरों पर सामाजिक तिलिस्म को तोड़ती हैं। ये रचनाएँ सत्ता की दुरभिसंधियों के विरोध का काव्यात्मक अभियान हैं। सामाजिक-राजनीतिक कार्यकर्ता के रूप में अपने समय और यथार्थ की जिस पहचान से वे रूबरू हुई हैं, उसके चक्रव्यूह को बेधकर नए मानवीय सामाजिक मूल्यों को अर्जित करने का संकल्प उनकी कविता के शब्द शब्द में झाँकता है।

'दुर्ग द्वार पर दस्तक', 'षड्यंत्ररत समस्याओं के बीच' तथा 'कुछ जीवन्त कुछ ज्वलंत' सामाजिक मुद्दों पर उनके विचारों को प्रस्तुत करने वाले सामयिक निबन्धों के संकलन हैं। इन कृतियों की वैचारिक ऊर्जा की ध्वनि कात्यायनी की कविताओं में भी सुनाई पड़ती है। कविताएँ और निबन्ध लगभग विम्बप्रतिबिम्ब भाव से एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। स्त्री-जीवन की विषम स्थिति, साम्प्रदायिक फासीवाद, बुद्धिजीवियों की अकर्मण्यता, थोथा आदर्शवाद व सुविधाजीविता इन रचनाओं के केन्द्र में हैं कात्यायनी ने अपने समाज और संस्कृति के सभी प्रश्नों पर गहराई से विचार किया है। इन स्थितियों के प्रतिरोध के रूप में वामपंथी वैचारिक आग्रह उनकी साहित्यिक कृतियों में विन्यस्त उनका रचना संसार इन्हीं सरोकारों को विचार के केन्द्र में लाने तथा बनाए रखने की ऊर्जस्वित रचनाशीलता का प्रमाण है।

संघर्ष और मुक्ति का स्त्री स्वप्न कात्यायनी के लेखन का समय इसलिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि अनेक सामाजिक अस्मिताओं के साहित्यिक अभिव्यक्ति के बीच स्त्री अस्मिता के साहित्यिक स्वर को भी नई पहचान मिली। कविता के क्षेत्र में स्त्री- कविता को भी गम्भीरता से लिया जाने लगा। सामाजिक, साहित्यिक और राजनीतिक परिसर में स्त्री अस्मिता की दमदार उपस्थिति से स्त्री-पुरुष असमानता के पारम्परिक ढाँचे की नींव चरमराने लगी। स्त्री-विमर्श और स्त्री आन्दोलन के कारण कविता और विचार के अनेक स्तरों पर सामाजिक संरचनाओं को स्त्री के नजरिये से देखा जाने लगा। साहित्य में स्त्रियाँ एक नए सामाजिक परिवेश की कामना कर रही थीं जो- अधिक सहृदय और सहानुभूतिपूर्ण हो। कात्यायनी की मूल चिन्ता, सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था है।

ज्ञानेन्द्रपति

(ज्ञानेन्द्रपति)

ज्ञानेन्द्रपति का जन्म 1 जनवरी 1950 को झारखंड राज्य के पथरगामा के गोड्डा नामक गाँव में हुआ है। उनके पिता देवेन्द्र प्रसाद चौबे और माता सरला देवी है। ज्ञानेन्द्रपति का प्राथमिक शिक्षा अपने गाँव पथरगामा में संपन्न हुई। उन्होंने विहार के पटना विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी में स्नातक और स्नातकोत्तर परीक्षा पास किया है। ज्ञानेन्द्रपति पहले सरकार विभाग में कारा अधीक्षक के पद पर काम करते थे। उन्होंने आगे यह नौकरी छोड़ दिया है। अब वे उत्तर प्रदेश के वाराणसी में रहकर स्वतंत्र लेखन कर रहे हैं।

समकालीन हिन्दी कविता में अपने नवीन दृष्टिकोण से नयी दिशा और दशा प्रदान करने वाले कवियों में ज्ञानेन्द्रपति का नाम शीर्षस्थ है। ज्ञानेन्द्रपति महाप्राण निराला और क्रांति बीज मुक्तिबोध की परंपरा को आगे ले जाने वाला कवि है। उन्हें कविता केवल कवि का कथनी नहीं है, करनी है। ज्ञानेन्द्रपति कविता को इतना पसंद करते थे कि पूरा समय काव्य-सृजन में ध्यान केंद्रित करने को उन्होंने अपने जीविका एवं जन्म-स्थान छोड़ दिया है। ज्ञानेन्द्रपति की कविताएँ जीवन और कला, सृजन और संवेदना के समर्थन का परिणाम है। उनकी कवि केवल विमर्श को उपस्थित नहीं करती है, जिसमें संवेदना भी पर्याप्त मात्रा में मिलाकर देती है।

ज्ञानेन्द्रपति के कविता का प्राण तत्व प्रकृति है। उनकी कविता में प्रकृति के चेत-अचेत अवस्था मुख्य स्थान पाता है शेष सबकुछ गौण है। अथवा उनकी काव्य की रीढ़ पारिस्थितिक-चित्रण है। इसके बिना अन्य विषय दुर्लभ है। ज्ञानेन्द्रपति के साहित्य की शब्द दर शब्द, पंक्ति दर पंक्ति में मिट्टी की गहरी महक है। सजग कवि इसमें दुःखी है कि आजकल सबसे अधिक हमला प्रकृति पर चल रही है। फलतः जीव वायु, पानी, हवा, प्रकृति-सौंदर्य, सुगंध, पेड़-पौधे, खाद्य-पदार्थ आदि सब छूट जाते हैं। वर्तमान काल में मनुष्य अधिक से अधिक अविवेकी और क्रूर होते जा रहे है। यह भी नहीं, इस अविवेकी संघ जानबूझकर अपने ही आत्म (प्रकृति) का घात कर रहे हैं। ज्ञानेन्द्रपति अपने कर्मो-धर्मो द्वारा व्यक्त करते है कि प्रकृति में मानव का हमला इस प्रकार चलता है तो मनुष्य को अभयारण्य तलाशना होगा।

ज्ञानेन्द्रपति प्रगतिशील उदात्त और भव्य परिकल्पना के कवि है। उन्हें काल और समय के प्रामाणिक भाष्यकार कवि कहना भी उचित है। पाठक उनकी कविताओं को अपने समय की सर्वाधिक विश्वसनीय एवं विचारपूर्ण उपज समझ सकते हैं। संशयात्मा तथा गंगातट जैसी कृतियाँ यह साबित करती है कि कवि ज्ञानेन्द्रपति कवि-कर्म को कभी भी कम नहीं देखता है और कभी नहीं छोड़ता है। उनकी कविताएँ मानव मन की आंतरिक प्रांतों को, सचेत बनाने को विवश कर देती है। संशयात्मा ज्ञानेन्द्रपति का महत्वपूर्ण काव्य ग्रंथ है, जिसका प्रकाशन 2004 में हुआ संशयात्मा उनकी काव्य जीवन की मील का पत्थर है। उदय प्रकाश आधुनिक हिन्दी के संवेदनशील एवं प्रयोगशील कहानीकार है। इसके सिवा वे गहन समाज शास्त्रीय चिंतन और मनन करने वाले साहित्यकारों की उच्च श्रेणी में स्थान रखते हैं। उदय प्रकाश ने अपने लेखन का आरम्भ काव्य-रचना के द्वारा किया है। लेकिन कविता के साथ-साथ कहानियों में भी उन्होंने काफी नाम पाया है। उन्होंने हिन्दी कहानी के बोध और भाव को रूपांतरित कर उसे कई स्तरों में समृद्ध कर दिया है। उदय प्रकाश ने अपने आसपास पर जितना सूक्ष्म दृष्टि डाली है, उतना अन्यत्र कम हुआ हैं। उनकी रचनाएँ यह प्रमाणित करते है कि आप देश-विदेश में घटित होने वाली सभी घटनाओं को परिचित है और उसे अपने लेखन में उपयोग कर देते हैं।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

अशोक वाजपेय

समादृत कवि-आलोचक, संपादक और संस्कृतिकर्मी अशोक वाजपेयी का जन्म 16 जनवरी 1941 को तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य के दुर्ग में एक संपन्न सुशिक्षित परिवार में हुआ। पिता सागर विश्वविद्यालय में डिप्टी रजिस्ट्रार थे और नाना डिप्टी कलक्टर थे। उनकी आरंभिक शिक्षा लालगंज सरकारी विद्यालय में हुई, फिर इंटर और बी.ए. की परीक्षा सागर विश्वविद्यालय से पास की। एम.ए. की पढ़ाई सेंट स्टीफ़ेंस कॉलेज, दिल्ली से की और फिर दयाल सिंह कॉलेज, दिल्ली में अध्यापन करने लगे। उन्होंने आई.ए.एस की परीक्षा 1965 में पास की और 1966 में उनका विवाह समादृत साहित्यकार नेमिचंद्र जैन की सुपुत्री रश्मि जैन से हुआ। उनके प्रशासनिक जीवन का एक लंबा समय मध्य प्रदेश, विशेषकर भोपाल में बीता जहाँ उन्होंने राज्य के संस्कृति सचिव के रूप में भी सेवा दी और कार्यकाल के अंतिम दौर में भारत सरकार के संस्कृति विभाग के संयुक्त सचिव के रूप में दिल्ली में कार्य किया। उन्होंने महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा के प्रथम उप-कुलपति और ललित कला अकादेमी के अध्यक्ष के रूप में भी कार्य किया। उन्होंने भारत भवन, मध्य प्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद, उस्ताद अल्लाउद्दीन ख़ाँ संगीत अकादेमी, ध्रुपद केंद्र, चक्रधर नृत्य केंद्र, उर्दू अकादेमी, कालिदास अकादेमी, महात्मा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, रज़ा फ़ाउंडेशन जैसी कई संस्थाओं की स्थापना और संचालन में योगदान किया है।

उनके काव्य-कर्म का आरंभ स्कूली दिनों से हो गया था और 16-17 की आयु तक आते प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगे थे। पहला कविता-संग्रह 'शहर अब भी संभावना है' 25 वर्ष की आयु में 1966 में प्रकाशित हुआ। तब से उनके एक दर्जन से अधिक काव्य-संग्रह और उतने ही काव्य-संचयन प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी कविताओं के अनुवाद विभिन्न भारतीय और विदेशी भाषाओं में प्रकाशित हुए हैं।

आलोचना के क्षेत्र में उनका प्रवेश 'लेखक की प्रतिबद्धता' शीर्षक लेख के साथ हुआ। वह देवीशंकर अवस्थी और नामवर सिंह की प्रेरणा से इस ओर प्रवृत्त हुए और आलोचना में अपनी बहुलतावादी दृष्टि और आलोचना के जनतंत्र के लिए विशेष रूप से चिह्नित किए जाते हैं। उनकी पहली आलोचना-कृति 'फ़िलहाल' 1970 में प्रकाशित हुई और तब से उनकी एक दर्जन से अधिक आलोचना एवं निबंध कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

उनकी प्रतिष्ठा एक संपादक की भी रही है जहाँ उन्होंने कई पत्र-पत्रिकाओं, कृतित्व-व्यक्तित्व, कविता-संग्रहों और रचना-संचयनों का संपादन किया है। उन्होंने चेस्लाव मिलोष, विस्साव शिंबार्स्का, जिबिग्न्यु हर्बर्ट, तादयुश रोज़विच सरीखे कवियों की कविताओं का हिन्दी अनुवाद किया है।

अशोक वाजपेयी एक संस्कृतिकर्मी और आयोजक के रूप में भी विशिष्ट उपस्थिति रखते हैं। भोपाल में उनके प्रशासनिक कार्यकाल के दिनों में उनके द्वारा हज़ार से अधिक आयोजन कराए गए जो साहित्य और कला की विभिन्न विधाओं के प्रसार में अद्वितीय योगदान कहा जाता है। उस दौर में 'भारत-भवन' जैसे साहित्य-कला-संस्कृति आयोजन का पर्याय ही हो गया था। बाद के दिनों में रज़ा फ़ाउंडेशन एवं अन्य संस्थाओं के माध्यम से दिल्ली में भी उनकी सांस्कृतिक गतिविधियाँ बनी रही हैं।

साहित्य, राजनीति और समाज के समसामयिक मुद्दों पर लेखन, मौखिक वक्तव्य और खुली भागीदारी के रूप में उनका ज़रूरी दख़ल बना रहा है।

प्रमुख कृतियाँ

काव्य-संग्रहः शहर अब भी संभावना है (1966), एक पतंग अनंत में (1984), अगर इतने से (1986), तत्पुरुष (1989), कहीं नहीं वहीं (1991), बहुरि अकेला (1992), थोड़ी सी जगह (1994), आविन्यों (1995), जो नहीं है, अभी कुछ और (1998), समय के पास समय (2000), इबारत से गिरी मात्राएँ (2002), कुछ रफ़ू कुछ थिगड़े (2004), उम्मीद का दूसरा नाम (2004), दुख चिट्ठीरसा है (2008), कहीं कोई दरवाज़ा (2013)

आलोचना/निबंध/लेखः फ़िलहाल (1970), कुछ पूर्वग्रह (1986), समय से बाहर (1994), कविता का गल्प (1996), सीढ़ियाँ शुरू हो गई हैं (1996), बहुरि अकेला (1999), कभी-कभार (2000)

संपादनः समवेत, पहचान, पूर्वग्रह, बहुवचन, कविता एशिया, समास आदि पत्रिकाएँ। कुमार गंधर्व, कला विनोद, प्रतिनिधि कविताएँ (मुक्तिबोध), पुनर्वसु, निर्मल वर्मा, टूटी हुई बिखरी हुई (शमशेर बहादुर सिंह की कविताओं का एक चयन), साहित्य विनोद, कविता का जनपद, जैनेंद्र की आवाज़, परंपरा की आधुनिकता, शब्द और सत्य, तीसरा साक्ष्य, सन्नाटे का छंद (अज्ञेय की कविताएँ), स्वच्छंद, आत्मा का ताप, संशय के साए (कृष्ण बलदेव वैद संचयन)

उन्हें काव्य-संग्रह 'कहीं नहीं वहीं' के लिए 1994 के साहित्य

अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। वह दयावती मोदी कवि शेखर सम्मान, कबीर सम्मान के साथ ही फ्रांस और पोलैंड के सरकारी सम्मानों से नवाज़े गए हैं।

राजकमल चौधरी

अकविता दौर के प्रमुख कवि-कथाकार राजकमल चौधरी हिन्दी साहित्यिक परिदृश्य के प्रतिभाशाली, विवादास्पद और रोचक किरदार के रूप में याद किए जाते हैं। जन्मतिथि और जन्म स्थान को लेकर कुछ विवादों के साथ आम तौर पर माना जाता है कि उनका जन्म 13 दिसंबर 1929 को उनके ननिहाल रामपुर हवेली, ज़िला मधेपुरा, बिहार में हुआ था। उनके नाम और नाम प्रयोग को लेकर भी कई कथाएँ प्रचलित हैं। उन्होंने स्वयं अपनी डायरी में लिखा है कि पिता ने तीनों भाइयों को वीर, धीर, सुधीर का नाम दिया था जबकि उनके स्कूली दोस्त उन्हें फूल बाबू पुकारते थे। गया की वेश्याएँ उन्हें राजा और फूल राजा पुकारती थीं। स्कूली सर्टिफ़िकेट में उनका नाम मणींद्र नारायण था। राजकमल चौधरी उनका साहित्यिक उपनाम था जिस तक पहुँचते मणींद्र किरण, पुष्पतीर्थ, स्वर्णफूल, पुष्पराज, मणींद्र राजकमल और फिर राजकमल की नाम-यात्राओं से गुज़रे थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने मणि मधुसूदन दास, मासूम अजीमाबादी, अनामिका चौधरी, वनलता सिंह, शशि चौधरी आदि छद्म नामों से भी लेखन किया।

हिन्दी कविता में राजकमल चौधरी को उनके कथ्य और काव्य तकनीक के लिए जाना जाता है। वे शब्दों को इतर तरीक़े से बरतने के शौक़ीन थे जिन पर उनके निजत्व की एक छाप नज़र आती है। उन्होंने अपनी कविताओं और गद्य के लिए जो भाषा विकसित की वह ताज़ा और आकर्षक थी। उनकी कविताओं पर देह और राजनीति पर अधिक एकाग्र होने का आरोप तो लगाया जाता है, लेकिन उनमें व्यक्त संत्रास, घुटन, अकेलेपन, आशंका, विसंगति, फूहड़ता, विद्रूपता आदि से ही समकालीन जीवन और यथार्थ की अभिव्यक्ति हो पाती है।

अकूत लेखन प्रतिभा के धनी राजकमल चौधरी ने मैथिली और हिन्दी में लगभग 250 कविताएँ, 92 कहानियाँ, 55 निबंध, 8 उपन्यास, 3 नाटक और कई लेख लिखे हैं। 'कंकावती', 'विचित्रा', 'इस अकालबेला में', 'ऑडिट रिपोर्ट' आदि में उनकी कविताओं का संकलन हुआ है जबकि 'मछली जाल' और 'प्रतिनिधि कहानियाँ' उनकी कहानियों के संग्रह हैं। 'मछली मरी हुई', 'देहगाथा', 'नदी बहती थी', 'शहर था शहर नहीं था', 'अग्निस्नान', 'बीस रानियों के बाइस्कोप', 'एक अनार सौ बीमार' उनके प्रमुख उपन्यास हैं। उनके समस्त लेखन का संग्रह राजकमल चौधरी रचनावली के 8 खंडों में किया गया है। 19 जून 1967 को महज 37 वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया।

आलोकधन्वा

आलोकधन्वा का जन्म 1948 में मुँगेर, बिहार में हुआ था। उनकी पहली कविता 'जनता का आदमी' 1972 में 'वाम पत्रिका' में प्रकाशित हुई थी और उसी वर्ष फिर उनकी दूसरी कविता 'गोली दाग़ो पोस्टर' 'फ़िलहाल' पत्रिका में छपी। इन दोनों कविताओं ने एक मज़बूत प्रतिरोधी धमक दर्ज की और देश के वामपंथी सांस्कृतिक आंदोलन में इनकी गहरी पैठ हुई। आगे फिर 'कपड़े के जूते', 'पतंग', 'भागी हुई लड़कियाँ', 'ब्रूनो की बेटियाँ' जैसी लंबी कविताओं से उनकी कविता उपस्थिति और गहन हुई और वह प्रतिरोधी चेतना के अनिवार्य कवि के रूप में स्थापित हुए।

सातवें दशक के उत्तरार्द्ध में बदलते सामाजिक परिदृश्यों और सत्ता के क्रूर स्वरूप के विरुद्ध उभरती जन भागीदारियों ने एक नए तरह की कविता की आवश्यकता को जन्म दिया था। कविता की यह धारा, जिसे हम 'तीसरी धारा' के रूप में जानते हैं, नक्सलबाड़ी आंदोलन और किसान विद्रोहों के गर्भ से उत्पन्न हुई थी। इस धारा में प्रतिबद्धता को रचनाकर्म के एक नए प्रतिमान के रूप में स्वीकार किया गया। प्रतिबद्धता के इस प्रतिमान ने रचनाकारों को मार्क्सवादी राजनीति की ओर तो मोड़ा ही, कविता एवं राजनीति के बीच एक अनिवार्य संबंध और उनके परस्पर संघर्षों को भी स्वीकार किया जाने लगा। इस युगीन आवश्यकता में रचनाकारों के लिए आवश्यक हो गया कि वह न केवल मज़दूर, किसान, स्त्री, युवाओं के जीवन संघर्ष के भागी बनें बल्कि उन्हें रचनात्मक और वैचारिक नेतृत्व भी प्रदान करें।

इसी परिदृश्य में आलोकधन्वा का उदय किसी 'फ़िनोमेनन' की तरह हुआ था। उनकी कविता का स्वर मध्यमवर्गीय प्रतिबद्ध चेतना के प्रतिरोध का स्वर है जिस पर समकालीन कृषक संघर्षों का स्पष्ट प्रभाव है। वह शोषण और शोषक के सभी रूपों की परख में सक्षम हैं और अपनी कविताओं में बार-बार इसे उजागर करते हैं। उनकी कविताओं में शोषण की पहचान भर नहीं है, जनता का प्रशिक्षण भी है और किसी समाधान के लिए सशस्त्र संघर्ष की आवश्यकता से

भी मुँह नहीं मोड़ा गया है।

आलोकधन्वा की कविताओं का संवाद किसी 'रोमांटिसिज़्म' का अवसर नहीं छोड़ता। उनकी कविताओं में जहाँ सत्ता-व्यवस्था के शोषण के चित्र हैं, वहीं जनता द्वारा इसके प्रतिरोध और संघर्ष के भी चित्र हैं। वह प्रतिरोध की संस्कृति के कवि हैं। उनकी कविताओं में आती स्त्रियाँ तक आत्मीयता के रंग तो छोड़ती हैं लेकिन वृहत स्त्रीवर्गीय संवाद का भागीदार बनने से भी नहीं चूकतीं।

कविताओं के अतिरिक्त आलोकधन्वा की सांस्कृतिक-वैचारिक सक्रियता भी रही है जहाँ वह विविध लेखक संगठनों और सांस्कृतिक मंचों से संबद्ध रहे। आलोकधन्वा की रचना -यात्रा के लगभग पाँच दशक हो गए हैं, लेकिन लेखन व प्रकाशन के मामले में वह अत्यंत संकोची, आत्म-संशयी और संयमी रहे हैं। 'दुनिया रोज़ बनती है' (1998) उनका एकमात्र कविता-संग्रह है, जो 50 वर्ष की उमर में उन्होंने दोस्तों/प्रशंसकों के बहुत इसरार पर, उनकी ही मदद से प्रकाशित करवाया। उनकी कविताओं की दूसरी किताब अब तक प्रतीक्षा की राह में है। उनकी कविताओं का अँग्रेज़ी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ है। साहित्य अकादेमी द्वारा प्रकाशित हिन्दी कविताओं के अँग्रेज़ी अनुवाद संकलन 'सरवाइवल' में उनकी कविताएँ शामिल हैं। प्रसिद्ध अमेरिकी साहित्यिक पत्रिका 'क्रिटिकल इनक्वायरी' ने उनकी कविताओं के अनुवाद प्रकाशित किए हैं।

कुमार अम्बुज

सुपरिचित कवि कुमार अंबुज का जन्म 13 अप्रैल 1957 को गुना, मध्य प्रदेश में हुआ। कविता चर्चा जगत में उनका प्रवेश 1989 में 'किवाड़' कविता के साथ हुआ जिसे नेमिचंद्र जैन ने भारतभूषण अग्रवाल कविता पुरस्कार के लिए चुना। तब से उनकी कविता-यात्रा जारी है और उनके पाँच कविता-संग्रह आ चुके हैं। वह बहुचर्चित सीरिज़ 'कवि ने कहा' और प्रतिष्ठित सीरिज़ 'प्रतिनिधि कविताएँ' में शामिल किए गए हैं।

विष्णु खरे के शब्दों में "...कुमार अंबुज की कविता भाषा, शैली और विषय-वस्तु के स्तर पर इतना लंबा डग भरती है कि उसे 'क्वांटम जंप' ही कहा जा सकता है। उनकी कविताओं में इस देश की राजनीति, समाज और उसके करोड़ों मज़लूम नागरिकों के संकटग्रस्त अस्तित्व की अभिव्यक्ति है। वे सच्चे अर्थों में जनपक्ष, जनवाद और जन-प्रतिबद्धता की रचनाएँ हैं। जनधर्मिता की वेदी पर वे ब्रह्मांड और मानव-अस्तित्व के कई अप्रमेय आयामों और शंकाओं की संकीर्ण बलि भी नहीं देतीं। यह वह कविता है जिसका दृष्टि-संपन्न कला-शिल्प हर स्थावर-जंगम को कविता में बदल देने का सामर्थ्य रखता है। कुमार अंबुज हिन्दी के उन विरले कवियों में से हैं जो स्वयं पर एक वस्तुनिष्ठ संयम और अपनी निर्मिति और अंतिम परिणाम पर एक ज़िम्मेदार गुणवत्ता-दृष्टि रखते हैं। उनकी रचनाओं में एक नैनो-सघनता, एक ठोसपन है। अभिव्यक्ति और भाषा को लेकर ऐसा आत्मानुशासन, जो दर-अस्ल एक बहुआयामी नैतिकता और प्रतिबद्धता से उपजता है और आज सर्वव्याप्त हर तरह की नैतिक, बौद्धिक तथा सृजनपरक काहिली, कुपात्राता तथा दलिद्दर के विरुद्ध है, हिन्दी कविता में ही नहीं, अन्य सारी विधाओं में दुष्प्राप्य होता जा रहा है। अंबुज की उपस्थिति मात्र एक उत्कृष्ट सृजनशीलता की नहीं, सख़्त पारसाई की भी है।"

'किवाड़' (1992), 'क्रूरता' (1996), 'अनंतिम' (1998), 'अतिक्रमण' (2002) और 'अमीरी रेखा' (2011) उनके काव्य-संग्रह हैं और उनकी कहानियाँ 'इच्छाएँ' (2008) में संकलित हुई है। इसके अतिरिक्त, वैचारिक लेखों पर एक संकलन 'मनुष्य का अवकाश' और डायरी एवं सर्जनात्मक टिप्पणियों का एक संकलन 'थलचर' शीर्षक से प्रकाशित है।

वह मध्य प्रदेश साहित्य अकादेमी का माखनलाल चतुर्वेदी पुरस्कार, भारतभूषण अग्रवाल स्मृति पुरस्कार, श्रीकांत वर्मा पुरस्कार, गिरिजाकुमार माथुर सम्मान, केदार सम्मान और वागीश्वरी पुरस्कार से नवाज़े गए हैं।

Critical Overview / अवलोकन

- कवि अरुण कमल समाज की गतिविधियों में जितनी अंतर्दृष्टि डॉलते हैं उतनी अन्यत्र दुर्लभ है। अरुण कमल सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिक, भौगोलिक, शैक्षिक तथा पारिवारिक आदि सभी विषयों जागरूक कलाकार है।
- ज्ञानेन्द्रपति प्रगतिशील उदात्त और भव्य परिकल्पना के कवि है। उन्हें काल और समय के प्रामाणिक भाष्यकार कवि कहना भी उचित है। पाठक उनकी कविताओं को अपने समय की सर्वाधिक विश्वसनीय एवं विचारपूर्ण उपज समझ सकते हैं।
- अनामिका की कविताएँ केवल स्त्री पीड़ा, स्त्री-पुरुष भेदभाव, स्त्री के मानसिक व्यथा ही उजागर नहीं करती है, उसकी समाधान भी करती है। कविता बेजगह इससे अलग नहीं रहती है।

Recap / पुनरावृत्ति

- समकालीन कविता
- परिस्थितियाँ
- प्रवृत्तियाँ
- प्रमुख कवि
- उनके रचनाएँ
- काव्यगत विशेषताएँ
- प्रमुख कवियों का महत्वपूर्ण योगदान

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. समकालीन कवियों का नाम लिखिए।
2. अनामिका किस क्षेत्र के कवियत्री है?
3. 'दूब दान' किसकी कृती है?
4. अरूण कमल की दो रचनाओं के नाम लिखिए?
5. ज्ञानेन्द्र पति के किसी एक रचना का नाम लिखिए?
6. 'क्रूरता' किसके काव्य-संग्रह हैं?
7. 'शहर अब भी संभावना है' का प्रकाशन वर्ष?
8. संशयात्मा किसका महत्वपूर्ण काव्य ग्रंथ है?

Answers/ उत्तर

1. अरूण कमल, अनामिका, ज्ञानेन्द्र पति आदि।
2. समकालीन कवियत्री।
3. अनामिका।
4. सबूत, नए इलाके में।
5. संश्यात्म।
6. कुमार अम्बुज
7. 1966
8. ज्ञानेन्द्रपति

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. अनामिका की स्त्रीपक्षीय रचना की विशेषता पर टिप्पणी लिखिए।
2. समकालीन कवि अरुण कमल के बारे में लिखिए।
3. ज्ञानेन्द्रपति कविता की विशेषताएँ लिखिए।
4. समकालीन कवियों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
5. समकालीन कवि एवं प्रवृत्तियों पर चर्चा कीजिए।

Reference/ सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहासः शर्मा।
2. हिन्दी साहित्य का इतिहासः सं नगेन्द्र।
3. संशयात्मा- ज्ञानेन्द्र पति
4. खुरदरी हथेलियाँ- अनामिका।
5. गलत पते की चिट्ठी- अनामिका।
6. बीजाक्षर- अनामिका।
7. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहासः गणपति चन्द्र गुप्त

BLOCK - 03

हिन्दी गद्य साहित्य

(1942 के बाद)

SOU

इकाई 1

1942 के बाद हिन्दी गद्य का विकास, परिस्थितियाँ एवं प्रवृत्तियाँ

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 1942 के बाद की गद्य साहित्य की जानकारी प्राप्त करता है
- 1942 के बाद की कहानी साहित्य की विकास की जानकारी प्राप्त करता है
- v1942 के बाद के उपन्यास साहित्य का विकास की जानकारी प्राप्त करता है
- 1942 के बाद के निबंध साहित्य का विकास की जानकारी प्राप्त करता है
- 1942 के बाद की अलोचना साहित्य का विकास की जानकारी प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

छायावादोत्तर युग हिन्दी गद्य की सर्वांगीण उन्नति का युग है। इस युग में भारत ने पराधीनता की बेड़ियों को तोड़कर स्वाधीनता की सुखद एवं स्फूर्तिदायक सांस ली। इसका एक स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि आलोच्य युग में विमिन्न गद्य-विधाओं ने अभूतपूर्व तथा बहुमुखी प्रगति की है। इस युग के लेखकों ने कहानी, उपन्यास, आलोचना आदि क्षेत्रों में नये आयामों का उद्घाटन करने के साथ साथ अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति के लिए रिपोर्ताज और इंटरव्यू सदृशं सर्वथा नवीन साहित्य रूपों का प्रश्रय लिया। इसके साथ ही स्वाधीनता प्राप्त करने से पूर्व जहाँ साहित्यकारों ने राष्ट्रीय चेतना पर बल दिया। वहाँ स्वातन्त्र्योत्तर साहित्य में नवनिर्माण पर बल दिया गया। इस युग में गद्य ही जन-जीवन की अभिव्यक्ति का सर्वप्रमुख साधन रहा।

प्रसादोत्तर नाटकों के क्षेत्र में लक्ष्मीनारायण लाल, लक्ष्मीकांत वर्मा, मोहन राकेश तथा कमलेश्वर के नाम उल्लेखनीय हैं। कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, रामवृक्ष बेनीपुरी तथा बनारसीदास चतुर्वेदी आदि ने संस्मरण रेखाचित्र व जीवनी आदि की रचना की है। शुक्ल जी के बाद पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी, नंद दुलारे वाजपेयी, नगेन्द्र, रामविलास शर्मा तथा नामवर सिंह ने हिन्दी समालोचना को समृद्ध किया। आज गद्य की अनेक नई विधाओं जैसे यात्रा वृत्तांत, रिपोर्ताज, रेडियो रूपक, आलेख आदि में विपुल साहित्य की रचना हो रही है और गद्य की विधाएं एक दूसरे से मिल रही हैं।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

- हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल भारत के इतिहास के बदलते हुए स्वरूप से प्रभावित था।
- स्वतंत्रता संग्राम और राष्ट्रीयता की भावना का प्रभाव साहित्य में भी आया।
- अंग्रेज़ी और पाश्चात्य शिक्षा का प्रभाव बढा और जीवन में बदलाव आने लगा।
- भावना के साथ-साथ विचारों को पर्याप्त प्रधानता मिली।
- पद्य के साथ-साथ गद्य का भी विकास हुआ।
- छापेखाने के आते ही साहित्य के संसार में एक नई क्रांति हुई।
- अनेक अन्य भाषी लेखकों ने हिन्दी में साहित्य रचना करके इसके विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया।

Discussion / चर्चा

साहित्यिक हिन्दी गद्य का क्रमबद्ध इतिहास उन्नीसवीं शती से प्राप्त होता है। इसके पहले भी राजस्थानी-गद्य, ब्रजभाषा-गद्य तथा खड़ीबोली- गद्य की परम्परायें चल रही थीं। खड़ीबोली का प्रयोग यों तो अमीर खुसरो, सन्त कवियों तथा दक्खिनी हिन्दी के कवियों में स्फुट रूप से बराबर होता रहा है; किन्तु उपलब्ध सामग्री के आधार पर खड़ीबोली गद्य की परम्परा पटियाला के रामप्रसाद निरंजनी कृत 'भाषा योगावशिष्ठ' (1741 ई०) से ही प्रारम्भ मानी जा सकती है।

खड़ीबोली- गद्य का विकास

हिन्दी-खड़ीबोली गद्य के विकास में अंग्रेजों के योग को सर्वथा अस्वीकार नहीं किया जा सकता। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथ में शासन-सूत्र आने पर राज्य-व्यवस्था के सुचारु रूप से संचालन के लिये यह अनिवार्य था कि शासितों से सम्पर्क स्थापित किया जाय। इस सम्पर्क के लिये किसी-न-किसी भाषा का माध्यम आवश्यक था। अंग्रेजों के सामने तीन प्रमुख भाषाएँ थीं, जिनके माध्यम से वे कार्य संचालन करते- अंग्रेजी भाषा, संस्कृत, अरबी-फारसी भाषाएँ और लोक भाषाएँ।

यह तो निर्विवाद था कि कम्पनी अंग्रेजी भाषा का अधिकाधिक प्रचार करना चाहती थी; किन्तु सामान्य जनता इससे सर्वथा अपरिचित थी। संस्कृत का प्रचार हिन्दुओं के उच्च वर्ग में था।

हिन्दी खड़ी बोली के विकास में फोर्टविलियम कॉलेज का बहुत बड़ा स्थान है। हिन्दी-खड़ीबोली के विकास में जिन पंडितों ने सर्वाधिक योग दिया है उनमें लल्लूलाल, सदल मिश्र तथा गंगाप्रसाद शुक्ल का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त राजा शिवप्रसाद, राजा लक्ष्मण सिंह, प्रताप नारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बदरी नारायण चौधरी प्रेमघन, ठाकुर जगमोहन सिंह, बालमुकुंद गुप्त आदि ने भी अपनी कृतियों से हिन्दी खड़ीबोली के विकास में पर्याप्त योग दिया है।

द्विवेदी युग के प्रमुख गद्य लेखकों में महावीर प्रसाद द्विवेदी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, सरदार पूर्ण सिंह, शिवपूजन सहाय, अध्यापक पूर्ण सिंह, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि प्रमुख हैं।

गद्य- 1942 के बाद

स्वच्छन्दता एवं स्वतन्त्र चिन्तन

द्विवेदी युग की नैतिकता की प्रतिक्रिया स्वरूप विकसित स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति ने हिन्दी गद्य को भी प्रभावित किया। छायावाद युग के साहित्य चिन्तकों एवं समीक्षकों के गद्य में भी स्वच्छन्दता, आवेगशीलता एवं स्वतन्त्र चिन्तन की प्रवृत्ति लक्षित होती है। छायावाद के प्रतिनिधि आलोचक आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी का गद्य अपनी चिन्तनशील मुद्रा के बावजूद स्वच्छन्दतावादी कला-मूल्यों का ही समर्थक है।

प्रगतिशील लेखकों ने सरल एवं व्यावहारिक गद्य को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। महापंडित राहुल सांकृत्यायन, यशपाल, डॉ. रामविलास शर्मा, शिवदानसिंह चौहान, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', अमृतराय, रांगेय राघव आदि ने सरल एवं व्यावहारिक भाषा को ही अधिक प्रश्रय दिया। जैनेन्द्र के कथा-साहित्य के प्रकाशन के साथ हिन्दी गद्य को एक नया आयाम प्राप्त हुआ। प्रेमचन्द का गद्य अनुभूति-दीप्त वर्णात्मक सौष्ठव के कारण धन्य है।

उच्चस्तर आलोचकों में पं० परशुराम चतुर्वेदी, डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी, डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, डॉ० नगेन्द्र, डॉ० भगीरथ मिश्र आदि प्रमुख हैं। इतिवृत्तात्मकता, तार्किकता, गंभीरता, संयमशीलता, विश्वसनीयता एवं चयनधर्मिता इनके गद्य की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

आधुनिक भावबोध

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सन् 1950 से 60 तक का हिन्दी-गद्य वस्तुतः रूमानी मानसिकता से मुक्ति और आधुनिकता की चेतना का गद्य है। इस काल के प्रायः सभी प्रयोगशील गद्य लेखकों-मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, धर्मवीर भारती, लक्ष्मीनारायण लाल, नरेश मेहता, फणीश्वरनाथ 'रेणु', नागार्जुन, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, मार्कण्डेय, शैलेश मटियानी आदि-में यह चेतना लक्षित की जा सकती है। इन सभी में क्रमशः रूमानियत से मुक्त होने और आधुनिकता से जुड़ने की प्रक्रिया का द्वन्द्व देखा जा सकता है।

इन लेखकों में मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव और कमलेश्वर के गद्य ने मानवीय सम्बन्धों की जटिलता, अनुभूति की ताजगी, संयम और तनाव से आलोचकों का ध्यान आकृष्ट किया। सर्वेश्वर, नरेश मेहता और धर्मवीर भारती के गद्य में आधुनिक भावबोध के साथ ही काव्योचित राग-दीप्ति का वैशिष्ट्य भी लक्षित किया जा सकता है।

फणीश्वरनाथ 'रेणु', नागार्जुन, शैलेश मटियानी, मार्कण्डेय और रुद्र काशिकेय जैसे आंचलिक कथा-लेखकों के गद्य में

ग्रामीण अञ्चल की गंध, ताजगी और स्थानीय रंगत ने विशेष रूप से ध्यान आकृष्ट किया है। 'रेणु' का बिम्बधर्मी गद्य अपनी ध्वन्यांकन शैली और काव्यात्मक संवेदनशीलता में बेजोड़ है।

साठोत्तरी हिन्दी-गद्य की विशेषताएँ

साठोत्तरी पीढ़ी का हिन्दी -गद्य आधुनिकता बोध का गद्य है। आज मानवीय संवेदना में निरन्तर ह्रास होता जा रहा है। मनुष्य बुद्धि एवं तर्क के सहारे समस्याओं का समाधान ढूँढ़ने को विवश है। आधुनिकता आज की प्रत्येक साहित्य विधा को परखने की कसौटी बन गई है। यही कारण है कि आज प्रत्येक संवेदनशील गद्य-लेखक आधुनिकता बोध का लेखक है। राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, धर्मवीर भारती, गिरिराज किशोर, ज्ञानरंजन, रवीन्द्र कालिया, दूधनाथ सिंह, मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, प्रभा खेतान, चित्रा मुद्गल, राजी सेठ आदि की गद्य-कृतियाँ अब विश्वविद्यालय स्तर पर भी स्वीकृति प्राप्त कर चुकी हैं। इस दौर की रचनाओं ने हिन्दी गद्य को अनुभव का धनत्व, संयम, सजगता और अन्तर्दृष्टि प्रदान की है।

Critical Overview / अवलोकन

हिन्दी-गद्य आज अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बन चुका है। वह जीवन की प्रत्येक गति और स्थिति को सार्थक एवं प्रभावी अभिव्यक्ति देने में सक्षम है। निबन्ध, आलोचना, उपन्यास, कहानी, नाटक, एकांकी, जीवनी, गद्य-गीत आदि परिचित विधाओं के अतिरिक्त संस्मरण, रेखाचित्र, डायरी, पत्र, रिपोर्ताज, यात्रावृत्त, साक्षात्कार, व्यंग्य लेख, कैरीकेचर, एकालाप आदि अनेक नवीन विधाओं का विकास हिन्दी गद्य के बहुआयामी स्वरूप तथा जीवन की वास्तविकता एवं संश्लिष्टता को रूपायित करने की उसकी बढ़ती हुई क्षमता का द्योतक है। अंग्रेजी के अनेक शब्द हिन्दी में स्वीकृत होकर हिन्दी गद्य की शब्द-सम्पदा एवं व्यंजकता में वृद्धि कर रहे हैं। क्षेत्रीय, जनपदीय एवं आंचलिक बोलियों के अनेक शब्द हिन्दी गद्य को अपनी सहज ऊष्मा से दीप्त कर रहे हैं। हिन्दी-गद्य के इस बहु आयामी विकास के साथ आज हिन्दी के लेखकों और रचनाकारों का दायित्व भी बढ़ गया है। यह दायित्व हिन्दी गद्य की मूल प्रकृति की रक्षा करने, उसे जीवन की वास्तविकता से निरन्तर जुड़े रखने तथा उसके विकास की गति सुनिश्चित और स्वस्थ दिशा देने का दायित्व है।

Recap / पुनरावृत्ति

- गद्य की अनेक नई विधाओं जैसे यात्रा वृत्तांत, रिपोर्ताज, रेडियो रूपक, आलेख आदि में विपुल साहित्य की रचना हो रही है
- कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, रामवृक्ष बेनीपुरी तथा बनारसीदास चतुर्वेदी आदि ने संस्मरण रेखाचित्र व जीवनी आदि की रचना की है
- हज़ारी प्रसाद द्विवेदी इस युग के प्रमुख गद्यकार है
- स्वातन्त्र्योत्तर साहित्य में नवनिर्माण पर बल दिया गया

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. इस युग के प्रमुख गद्यकार का नाम लिखिए?
2. स्वातन्त्र्योत्तर साहित्य में किस मुद्दे पर बल दिया गया?
3. 1942 के बाद के रेखाचित्रकार व जीवनीकार का नाम लिखिए?
4. 1942 के साहित्य पर किस का प्रभाव पडा?
5. भारत में औद्योगीकरण का प्रारंभ कब होने लगा था?
6. मनुष्य किसके सहारे समस्याओं का समाधान ढूँढ़ने को विवश है?
7. छायावाद के प्रतिनिधि आलोचक कौन है?
8. प्रगतिशील लेखकों किसको अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया?

Answers/ उत्तर

1. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी
2. नवनिर्माण पर
3. कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, रामवृक्ष बेनीपुरी तथा बनारसीदास चतुर्वेदी
4. स्वतंत्रता संग्राम और राष्ट्रीयता की भावना का प्रभाव साहित्य में आया।
5. 1940 के बाद
6. बुद्धि एवं तर्क के सहारे
7. आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी
8. सरल एवं व्यावहारिक गद्य को

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. 1942 के बाद की परिस्थितियों पर विचार व्यक्त कीजिए।
2. विभिन्न परिस्थितियाँ साहित्य के विकास में सहायता प्रदान की हैं। अपना विचार व्यक्त कीजिए?
3. साठोत्तरी हिन्दी-गद्य की विशेषताएँ क्या-क्या हैं ?
4. स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सन् 1960 तक का हिन्दी-गद्य साहित्य की विशेषताएँ क्या -क्या हैं ?
5. फोर्टविलियम कॉलेज पर लेख लिखो।

इकाई 2

1942 के बाद के प्रमुख गद्यकार

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 1942 के बाद के प्रमुख गद्यकार की विशेषता समझता है
- 1942 के बाद के प्रमुख कथा साहित्यकार की जानकारी प्राप्त करता है
- 1942 के बाद के निबंधकार की जानकारी प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

1942 के बाद हिन्दी गद्य साहित्य का बहुमुखी विकास का काल है। पं. हजारी प्रसाद द्विवेदी, जैनेंद्र कुमार, अज्ञेय, यशपाल, नंददुलारे वाजपेयी, डॉ. नगेंद्र, रामवृक्ष बेनीपुरी तथा डॉ. रामविलास शर्मा आदि ने विचारात्मक निबंधों की रचना की है। हजारी प्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र, कुबेर नाथ राय, कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर और विवेकी राय, ने ललित निबंधों की रचना की है। हरिशंकर परसांई, शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल, रवींन्द्रनाथ त्यागी, तथा के. पी. सक्सेना, के व्यंग्य आज के जीवन की विद्रूपताओं के उद्घाटन में सफल हुए हैं। जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल, इलाचंद्र जोशी, अमृतलाल नागर, रांगेय राघव और भगवती चरण वर्मा ने उल्लेखनीय उपन्यासों की रचना की। नागार्जुन, फणीश्वर नाथ रेणु, अमृतराय, तथा राही मासूम रजा ने लोकप्रिय आंचलिक उपन्यास लिखे हैं।

मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी, कमलेश्वर, भीष्म साहनी, भैरव प्रसाद गुप्त, आदि ने आधुनिक भाव बोध वाले अनेक उपन्यासों और कहानियों की रचना की है। अमरकांत, निर्मल वर्मा तथा ज्ञानरंजन आदि भी नए कथा साहित्य के महत्वपूर्ण स्तंभ हैं।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

- प्रस्तुत काल में गद्य साहित्य का सीमातीत विस्तार हुआ।
- फ्लैशबैक, चेतना प्रवाह आदि नयी शैलियों का प्रयोग।
- इस युग का गद्य साहित्य कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टियों से पर्याप्त वैविध्यपूर्ण एवं समृद्ध रहा।
- हिन्दी नाटक का क्रमिक विकास हुआ।
- हिन्दी नाटक को रोमांस के कठघरे से निकालकर आधुनिक भावबोध के साथ जोड़ा गया।
- निबंध लेखन के क्षेत्र में पर्याप्त विकास हुआ।
- ललित निबंध, व्यंग्य निबंध और वैचारिक निबंध शैलियों का आविर्भाव हुआ।

Discussion / चर्चा

इस युग में गद्य ही जन-जीवन की अभिव्यक्ति का सर्वप्रमुख साधन रहा। फलतः गद्य साहित्य का सीमातीत विस्तार हुआ। कथ्य की कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए सर्वथा नये प्रतीक, उपमान अथवा बिम्ब ही प्रयुक्त नहीं हुए, अपितु फ्लेशबैक,

चेतना प्रवाह आदि शैलियों का भी प्रयोग किया गया। कथानक को गौण मानने तथा पात्रों का मनोवैज्ञानिक चित्रण करने की प्रवृत्तियों के फलस्वरूप वर्तमान लेखक मानव मन के सूक्ष्म से सूक्ष्म संवेदनों को अभिव्यक्त करने में सफल हो सके हैं। समग्रतः इस युग का गद्य साहित्य कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टि यों से पर्याप्त वैविध्यपूर्ण एवं समृद्र है।

नाटक

आलोच्य काल में हिन्दी नाटक रंगमंच और जीवन के यथार्थ से जुड़कर नयी दिशा की ओर उन्मुख हुआ। यद्यपि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भी यह प्रयास किया था, पर गद्य के उस प्रारम्भिक विकास-काल में उनके नाटकों से बड़ी अपेक्षाएं नहीं की जानी चाहिए। भारतेन्दु के बाद प्रसाद को दिशा-प्रवर्तक नाटककार स्वीकार किया जाता है, किन्तु उनके नाटकों को मंच नहीं मिला। फिर भी अपनी सांस्कृतिक चेतना, काव्यात्मक परिवेश, नाटकीय संघर्ष की सूझ और चरित्र सर्जन की अपूर्व क्षमता के कारण उनके नाटक अद्वितीय बन गये हैं। अपने रोमैंटिक दृष्टि कोण के कारण इतिहास के अतीत के साथ समसामयिक जीवन को आदर्श के साथ जोड़कर उन्होंने महत्त्वपूर्ण कार्य किया, किन्तु रोमैंटिक दृष्टि की खामियां भी उनके साथ लिपट रहीं। उनके समसामयिक नाटककार (लक्ष्मीनारायण मिश्र सहित) भी रूमानियत से छूट नहीं सके। वस्तुतः उपेन्द्रनाथ अश्क पहले नाटककार हैं जिन्होंने हिन्दी नाटक को रोमांस के कठघरे से निकालकर किसी सीमा तक आधुनिक भावबोध के साथ जोड़ा। यद्यपि उनका 'जय-पराजय' (1937) प्रसाद की प्रभाव छाया से बहिर्गत नहीं होता, फिर भी 'छठा बेटा' (1940) उस प्रभाव से मुक्त है। इसमें पिता-पुत्र के परिवर्तित सम्बन्धों को व्यंग्यात्मक ढंग से चित्रित किया गया है। अवकाश प्राप्त पिता को छह बेटों में से कोई भी अपने पास रखने को तैयार नहीं है। जिन पुराने मूल्यों पर पिता-पुत्र का सम्बन्ध आधारित रहा करता था, वे यहाँ गायब हैं। यदि कोई सम्बन्ध शेष है तो आर्थिक सम्बन्ध स्वप्न के माध्यम से जिस आर्थिक सम्बन्ध की स्थापना की जाती है, वह स्वयं में एक छलना है। हाँ, स्वप्न-नाटक होने के नाते छाया-सृजन का फिल्मी प्रयोग नाटकीय शिल्प की दृष्टि से श्लाध्य है। उनके दो अन्य नाटक- 'कैद' (1945) और 'उड़ान'।

विष्णु प्रभाकर कृत 'डॉक्टर' भी इस अवधि का बहुचर्चित नाटक है। इसके पूर्व वे एक अन्य नाटक - 'समाधि' की रचना कर चुके थे। 'डॉक्टर' मनोवैज्ञानिक सामाजिक नाटक है, जिसमें डॉ. अनीला के सन्दर्भ में भावना और नैतिक कर्त्तव्य का संघर्ष दिखाया गया है। उसका अन्तर्द्वन्द्व ऑपरेशन करते समय भी चलता रहता है, जो विश्वसनीय नहीं बन पाता। यद्यपि द्वन्द्व और आन्तरिक संघर्ष की सम्भावनाओं का पूरा इस्तेमाल लेखक नहीं कर सका है, पर अन्त में चलकर तनाव अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंचकर आधुनिकता से जुड़ जाता है; और यही इस नाटक की उपलब्धि है।

प्रसादोत्तर नाटककार

प्रसादोत्तर प्रमुख नाटककार हैं, उदयशंकर भट्ट, सेठ गोविन्ददास, लक्ष्मीनारायण मिश्र रांगेय राघव, कृष्णदत्त भारद्वाज, रामकुमार वर्मा, लक्ष्मीनारायण मिश्र जगदीशचन्द्र माथुर, वृन्दावनलाल वर्मा आदि।

सन् 1954-55 से हिन्दी नाटक के क्षेत्र में आधुनिकताबोध की प्रवृत्ति साफ लक्षित होती है। आधुनिकताबोध की दृष्टि से मोहन राकेश के नाटक- 'आषाढ़ का एक दिन' (1958 ई०), 'लहरों के राज हंस' (1963 ई०) और 'आधे अधूरे' (1969 ई०)- विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। इन नाटकों में आधुनिकता बोध के अन्य बिन्दुओं को भी लक्षित किया जा सकता है।

समकालीन नाटककार

लक्ष्मीनारायण मिश्र (1903-1987 ई०), हरिकृष्ण प्रेमी (19068-1974 ई०), उदयशंकर भट्ट (1898-1966 ई०), गोविनदवल्लभ पंत (1898-1996 ई०), भगवतीचरण द (1903-1981 ई०), अमृतलाल नागर (1916-1990 ई०) आदि उल्लेखनीय हैं। हरिकृष्ण प्रेमी, उदयशंकर भट्ट भगवतीचरण वर्मा यह होने पर भी यह नाटक किसी प्रकार की नवीन नाट्य सम्भावना का संकेत नहीं देता।

अमृतलाल नागर, विष्णुप्रभाकर (1912-2009 ई०), भीष्म साहनी (1915-2003 ई०), जगदीशचन्द्र माथुर (1917-1978 ई०), लक्ष्मीकान्त वर्मा (1922-2002 ई०), शंभुनाथ सिंह (1916-1991), विनोद रस्तोगी (1923 ई०), मोहन राकेश (1925-1972 ई०), लक्ष्मीनारायण लाल (1927-1983 ई०), सर्वेश्वरदयाल सक्सेना (1927-1983 ई०), अमृतराय (1921-1996 ई०) आदि नाटककारों का उल्लेख किया सकता है।

भीष्म साहनी का प्रमुख नाटक हैं:- 'हानूश' (1977 ई०), 'कबिरा खड़ा बाजार में' (1981 ई०), 'माधवी' (1985 ई०), 'मुआवजे' (1993 ई०), 'रंग दे बसंती चोला' (1998 ई०) और आलमगीर (1999 ई०) आपके चर्चित नाटक हैं।

लक्ष्मीकांत वर्मा का प्रमुख नाटक हैं:- 'तिन्दुवुलम्'

(1958 ई०), 'सीमान्त के बादल' (1963 ई०), 'अपना-अपना जूता' (1968 ई०), 'रोशनी एक नदी है' (1974 ई०), 'ठहरी हुई जिन्दगी' (1980 ई०) आदि कई नाटक प्रकाशित हैं।

निबंध साहित्य

द्विवेदी युग और शुक्ल युग के निबंध अधिकाधिक गंभीर, साहित्यिक, विवेचनापूर्ण और तर्कसंकुल हो गये। इनमें न तो भारतेंदु युगीन निबंधों की सी वैयक्तिता है और न भावना की तरलता। यद्यपि छायावादी कवियों के निबंधों में व्यक्तित्व और आत्मीयता की झलक पायी जाती है किंतु अधिकतर आत्मपरकता और जिंदादिली का अभाव रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् शुक्ल युग के बाद के दौर में एक बार फिर निबंधों में वैयक्तिकता का समावेश हुआ और वह विचारों को प्रकट करने का प्रमुख एवं सशक्त माध्यम बना है। उसका आकार भी छोटा हुआ है। भाषा बोलचाल की-सी होने लगी है। उसमें तत्सम शब्दों के स्थान पर तद्‌भव और देशी शब्दों का प्रयोग अधिक होने लगा है। निबंध के विषयों में विविधता बढ़ने लगी है।

शुक्ल युग के बाद के दौर में निबंध लेखन की कई शैलियों ने अपनी अलग पहचान बनायी। इस युग में तीन प्रमुख शैलियों ने निबंध लेखन को उत्कर्ष पर पहुँचाया। ललित निबंध, व्यंग्य निबंध और वैचारिक निबंध शैलियाँ।

शुक्ल जी के बाद भी हिन्दी वैचारिक निबंधों की परंपरा बराबर बनी रही। इस दौर के वैचारिक निबंधों में विचार की स्पष्टता और तर्कपूर्ण चिंतन के साथ विचारधारात्मक आग्रह भी व्यक्त हुए। जैनेन्द्र कुमार, डॉ. संपूर्णानंद, रामविलास शर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, नगेंद्र आदि के निबंधों से उनकी वैचारिक दृष्टि का परिचय मिलता है। इन निबंधकारों ने अपने निबंधों के लिये समसामयिक विषय चुने।

प्रमुख निबंध और निबंधकार

अज्ञेयः- अज्ञेय जी का पहला निबंध-संग्रह 'त्रिशंकु' (1945 ई०) है। इसमें विशेषरूप से आपकी साहित्यिक मान्यताएँ स्पष्ट हुई हैं। इसके बाद 'सबरंग और कुछ राग' (1956 ई०), 'आत्मनेपद' (1960 ई०), 'आलवाल' (1971 ई०), 'लिखि कागद कोरे' (1972 ई०). 'अद्यतन' (1977 ई०), 'जोग लिखी' (1977 ई०), 'स्रोत और सेतु' (1978 ई०). इन निबन्धों में अज्ञेय ने 'साहित्य', 'भाषा', 'संस्कृति', 'जीवन-मूल्य', 'इतिहासबोध', 'परम्परा', 'आधुनिकता' 'समाज', 'लोकतंत्र', 'धर्म निरपेक्षता', 'भारतीयता' आदि अनेक विषयों पर विचार किया है।

डॉ. रामविलास शर्मा प्रगतिवादी आलोचक के रूप में विख्यात हैं। आपने हिन्दी-भाषा और साहित्य की समस्याओं और प्रवृत्तियों पर प्रगतिवादी दृष्टिकोण से विचार किया है। 'प्रगति और परम्परा' (1949 ई०), 'साहित्य और संस्कृति' (1949 ई०), 'भाषा साहित्य और संस्कृति' (1954 ई०), 'प्रगतिशील साहित्य की समस्यायें' (1954 ई०), 'लोकजीवन और साहित्य', 'स्वाधीनता और राष्ट्रीय साहित्य' (1956 ई०), 'आस्था और सौन्दर्य' (1961 ई०), 'भाषा युगबोध और कविता' (1981 ई०), 'कथा विवेचन और गद्य-शिल्प' (1982 ई०), 'विराम चिह्न' (1985 ई०) आदि आपके प्रसिद्ध निबन्ध संग्रह हैं। डॉ. शर्मा की 'मार्क्सवाद' में गहरी आस्था है और आपने मार्क्सवादी जीवन और कला-मूल्यों को दृष्टि में रखकर साहित्य की विविध समस्याओं पर विचार किया है। आपके अनेक निबंध वाद शैली में लिखे गए हैं।

पं. माखनलाल चतुर्वेदीः- आपका निबन्ध संग्रह 'अमीर इस गरीब इरादे' (1960 ई०) प्रकाशित हुआ था। अब आपकी समस्त रचनाएँ' माखनलाल चतुर्वेदी शीर्षक से दस खण्डों में प्रकाशित हुई हैं। इनमें खण्ड दो और खण्ड तीन में आपके सभी प्रकार के निबन्ध संगृहीत हैं। आपके निबन्धों में व्यंग्य, भाव-चित्र, विचार और कथात्मक संस्पर्श का अद्‌भुत सम्मिश्रण है। निबन्ध छोटे-छोटे किन्तु चुभने वाले हैं। उनमें एक निजी विशिष्ट भंगिमा है।

इलाचन्द्र जोशीः- इलाचन्द्र जोशी गम्भीर चिन्तन, विवेचन और विश्लेषण के लिए प्रसिद्ध हैं। आप मनोवैज्ञानिक चिन्तन से विशेष प्रभावित हैं। आपके विचारात्मक निबन्धों के कई संग्रह प्रकाशित हैं। इनमें 'साहित्य सर्जना' (1938 ई०), 'विवेचना' (1943) ई०), 'विश्लेषण' (1953 ई०), 'साहित्य चिन्तन' (1934 ई०) तथा देखा परखा (1957 ई०) प्रमुख हैं।

यशपालः- यशपाल प्रसिद्ध कथाकार ही नहीं, सफल निबन्ध लेखक भी हैं। आप मार्क्सवाद से प्रभावित साहित्यकार हैं। अपने निबन्धों में भी अपने गम्भीर किन्तु तीखी व्यंग्य-शैली में समाज की गतानुगतिकता पर निर्मम चोट की है। 'न्याय का संघर्ष' (1940 ई०), 'बात-बात में बात' (1950 ई०) 'देखा सोचा समझा' (1951 ई०) आदि आप के प्रसिद्ध निबन्ध संग्रह हैं।

जैनेन्द्रः- जैनेंद्र कुमार प्रसिद्ध कथाकार तो हैं ही, निबंध

के क्षेत्र में भी उन्होंने ख्याति अर्जित की। जैनेन्द्र गांधीवादी दार्शनिक विचारक साहित्यकार हैं। आपने जीवन के सभी प्रश्नों पर अपने ढंग से सोचने-समझने और लिखने की चेष्टा की है। 'साहित्य का श्रेय और प्रेय' (1953 ई०), 'मन्थन' (1953 ई०), 'सोचविचार' (1953 ई०), 'काम, प्रेम और परिवार' (1953 ई०), 'इतस्ततः' (1963 ई०) 'समय और हम' (1964 ई०), 'परिप्रेक्ष' (1977 ई०) आपके प्रसिद्ध विचार-प्रधान निबन्ध-संग्रह हैं। आपके साहित्य और संस्कृति सम्बन्धी निबन्धों का एक संग्रह-साहित्य और संस्कृति (1979 ई०)-ललित शुक्ल द्वारा संपादित होकर प्रकाशित हुआ है। इसमें धर्म, नीति, विज्ञान, राजनीति, कला, नैतिकता आदि संदर्भो में साहित्य की रचना और महत्ता का विवेचन किया गया है।

नन्ददुलारे वाजपेयीः- नन्ददुलारे वाजपेयी छायावाद-युग के श्रेष्ठ समीक्षक के रूप में विख्यात हैं। 'हिन्दी साहित्यः बीसवीं शताब्दी' (1942 ई०), 'आधुनिक साहित्य' (1950 ई०)। 'नया साहित्य नये प्रश्न' (1955 ई०), 'राष्ट्रभाषा की कुछ समस्यायें' (1961 ई०), 'राष्ट्रीय 'साहित्य' (1965 ई०), 'नयी कविता' (1976 ई०), 'रस सिद्धांत' (1977 ई०), 'हिन्दी साहित्य का आधुनिक युग' (1978 ई०), 'आधुनिक साहित्य सृजन और समीक्षा' (1978 ई०), 'रीति और शैली' (1979 ई०) आदि रचनाओं में आपके निबन्ध ही संगृहीत हैं।

हज़ारी प्रसाद द्विवेदीः- हजारीप्रसाद द्विवेदी निर्विवाद रूप से छायावादोत्तर निबन्धकारों में सर्वश्रेष्ठ हैं। आपके निबन्धों की आधारभूमि भारतीय संस्कृति है। आपके श्रेष्ठ निबन्धों में आत्म-व्यंजना का तत्त्व प्रधान है। 'अशोक के फूल' (1948 ई०), 'कुटज' (1964 ई०), 'आलोक पर्व' (1972 ई०) आपके प्रमुख निबन्ध संग्रह हैं। अब आपकी सम्पूर्ण रचनाओं का संग्रह 'हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली' शीर्षक से ग्यारह खण्डों में प्रकाशित हो चुका है। आपके चिन्तन का केन्द्रीय विषय 'मनुष्य' है। आचार्य शुक्ल के बाद हिन्दी निबन्ध को नवीन मोड़ देकर आचार्य ने ऐतिहासिक महत्त्व का कार्य किया है। 'अशोक के फूल', 'नाखून क्यों बढ़ते हैं', 'देवदारु', 'कुटज', 'बसन्त आ गया है', 'वर्षा घनपति से घनश्याम तक', 'मेरी जन्म भूमि', 'घर जोड़ने की माया' आदि निबन्ध हिन्दी निबन्ध-साहित्य के क्लासिक बन गए हैं।

महादेवी वर्माः- महादेवी वर्मा के निबन्ध मूलतः विचार-प्रधान हैं। 'श्रृंखला की कड़ियाँ' (1942 ई०), 'क्षणदा' (1957 ई०), 'साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबन्ध' (1964 ई०) आपके प्रसिद्ध निबन्ध-संग्रह हैं। 'श्रृंखला की कड़ियाँ' में भारतीय नारी की विषम परिस्थितियों को अनेक दृष्टियों से देखा गया है। इन निबन्धों में महादेवी ने पहली बार भारतीय नारी को सभी अनैतिक और अशोभनीय सामाजिक बंधनों को तोड़कर आगे बढ़ने का सन्देश दिया है।

अन्य प्रमुख निबंधकारः- श्री बालकृष्ण राव (1913- 1975 ई०), डॉ. भगीरथ मिश्र (1914-1994 ई०), डॉ. विजयेन्द्र स्नातक (1914-1998 ई०), डॉ. नगेन्द्र (1915-1999 ई०), श्री नलिनविलोचन शर्मा (1916-1961 ई०), डॉ. रामरतन भटनागर (1916-1992 ई०), श्री अमृतलाल नागर (1916-1990 ई०), डॉ. प्रभाकर माचवे (1917-91 ई०), श्री अमृतराय (1921-1996 ई०) आदि प्रमुख हैं।

Critical Overview / अवलोकन

सूक्ष्म अध्ययन से ज्ञात होता है कि हिन्दी गद्य एक प्रकार की बौद्धिक सूक्ष्मता प्रदान की है। गद्य में तत्समता और प्रयोगवक्रता के साथ ही जीवन की गहरी रेखाओं को उभार देने की पूरी शक्ति है। गद्य साहित्यकार मन की सूक्ष्मतम भावों को धीरे-धीरे खोलता है। गद्य लेखकों ने गद्य को सूक्ष्म निगूढ़ और अमूर्त कला-संकेतों से मुक्त कर यथार्थ की पृष्ठभूमी प्रदान करते हैं। इसलिए समकालीन गद्य को यथार्थधर्मी कहा जा सकता है।

Recap / पुनरावृत्ति

- जैनेन्द्र और अज्ञेय फ्रायड के मनोविज्ञान से प्रभावित हैं
- इलाचन्द्र जोशी फ्रायड के मनोविश्लेषण से प्रभावित हैं
- निबंधकारों में अज्ञेय, डॉ. रामविलास शर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी इलाचन्द्र जोशी यशपालजैनेन्द्र नन्ददुलारे वाजपेयीहजारीप्रसाद द्विवेदी आदि प्रमुख हैं
- नाटककारों में मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, मन्नू भंडारी, कमलेश्वर, भीष्म साहनी, भैरव प्रसाद गुप्त,अमरकांत, निर्मल वर्मा आदि प्रमुख है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. मोहन राकेश का एक नाटक का नाम लिखिए?
2. तीन प्रमुख नाटककारों का नाम लिखिए?
3. तीन प्रमुख उपन्यासकारों का नाम लिखिए?
4. यशपाल का एक उपन्यास का नाम लिखिए?
5. 'मुक्तिपथ' किस विधा की रचना है?
6. समकालीन निबंधकारों ने निबंधों के लिये कौन सा विषय चुन लिए?
7. 'श्रृंखला की कड़ियाँ' किसका निबंध संग्रह है?
8. छायावादोत्तर निबन्धकारों में सर्वश्रेष्ठ कौन हैं?

Answers/ उत्तर

1. आधे-अधूरे
2. मोहन राकेश, भीष्म साहनी, निर्मल वर्मा
3. यशपाल, अज्ञेय, अंचल, भगवतीचरण वर्मा
4. झूठा-सच
5. उपन्यास
6. समसामयिक विषय
7. महादेवी वर्मा के
8. हजारीप्रसाद द्विवेदी

Assignments/ प्रदत्त कार्य

- 1942 के बाद के प्रमुख गद्यकर और उनका योगदान।
- भारत की राष्ट्रीयता संग्राम में गद्य सहित्य का अमूल्य योगदान रहा है- स्पष्ट कीजिए।
- हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के बारे में टिप्पणी लिखें।
- निबंधकार नन्ददुलारे वाजपेयी पर टिप्पणी लिखें।
- समकालीन नाटककार के बारे में टिप्पणी लिखें।

Reference/ सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. कल्पलता - डॉ. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी।
2. हिन्दी आलोचना की बीसवीं शती - डॉ. निर्मला जैन।
3. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी की आलोचना दृष्टि - चन्द्रदेव यादव।
4. नया साहित्य-नये प्रश्न - डॉ. नन्ददुलारे वाजपेयी।
5. हिन्दी साहित्य, युग और प्रवृत्तियाँ - डॉ. शिवकुमार शर्मा।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

BLOCK - 04

हिन्दी कथा साहित्य,

(1942 के बाद)

SGOU

इकाई 1

1942 के बाद का हिन्दी उपन्यास साहित्य और उसका विकास

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 1942 के बाद का हिन्दी उपन्यास साहित्य और उसका विकास की जानकारी प्राप्त करता है
- 1942 के बाद का हिन्दी उपन्यास साहित्य में चित्रित विषयों की जानकारी प्राप्त करता है
- 1942 के बाद का हिन्दी उपन्यास साहित्य में चित्रित विभिन्न सामाजिक समस्याओं की जानकारी प्राप्त करता है
- 1942 के बाद का हिन्दी उपन्यास साहित्य में चित्रित विभिन्न परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

प्रेमचन्द के उपरान्त हिन्दी-उपन्यास कई मोड़ों से गुज़रता हुआ दिखायी पड़ता है, जिन्हें स्थूल रूप से तीन दशकों में बांटा जा सकता है- 1950 ई. तक के उपन्यास, 1950 से 1960 तक के उपन्यास और साठोत्तरी उपन्यास। पहला दशक मुख्यतः फ्रायड और मार्क्स की विचारधारा से प्रभावित है, दूसरा, प्रयोगात्मक विशेषताओं से और तीसरा, आधुनिकतावादी विचारधारा से पहले दशक में फ्रायड से प्रभावित होकर जिस कथा-साहित्य की रचना की गयी, उसकी पृष्ठभूमि जैनेन्द्र पहले ही प्रस्तुत कर चुके थे। जहाँ प्रेमचन्द ने समाज के साथ व्यक्ति के एकीकृत(एडजस्ट) होने के प्रश्न को अधिक महत्त्व दिया, वहाँ जैनेन्द्र ने व्यक्ति की गुम होती हुई पहचान को उभारकर सामने रखा। उनके उपन्यासों में अनमेल विवाह या दहेज-प्रथा जैसी समस्याएं नहीं हैं, बल्कि विवाह स्वयं में एक समस्या है; क्योंकि सारी अनिश्चितताएँ उसके बाद आरम्भ होती है। किन्तु जिस मुक्ति की समस्या पर उन्होंने बल दिया, उसके आड़े आते हैं रूढ़ संस्कार, और इस प्रकार जैनेन्द्र का प्रत्येक उपन्यास अन्तर्विरोधों का उपन्यास बन गया है। उनके नारी पात्र यदि एक ओर समाज की मर्यादाओं को बनाये रखना चाहते हैं, तो दूसरी ओर अपने अस्तित्व की पहचान भी करना चाहते है। ऐसी स्थिति में आत्म-यातना के अतिरिक्त और कोई राह शेष नहीं रहती। नियति ईश्वर धर्म आदि में अटूट आस्था उनके उपन्यासों को आधुनिक नहीं बनने देती-वे 'मेटिक एगोनी' का रूप ले लेते है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

फ्रायड और मार्क्सवादी विचारधारा, आधुनिकतावादी विचारधारा, प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास, ऐतिहासिक उपन्यास, स्वच्छन्दतावादी उपन्यास, व्यक्तिवादी उपन्यास

Discussion / चर्चा

प्रेमचन्द के उपरान्त हिन्दी-उपन्यास कई मोड़ों से गुज़रता हुआ दिखायी पड़ता है, जिन्हें स्थूल रूप से तीन दशकों में बाँटा जा सकता है-

- 1940 ई. तक के उपन्यास
- 1940 से 1960 तक के उपन्यास
- साठोत्तरी उपन्यास

पहला दशक मुख्यतः फ्रायड और मार्क्स की विचारधारा से प्रभावित है, दूसरा, प्रयोगात्मक विशेषताओं से और तीसरा,

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

आधुनिकतावादी विचारधारा से। पहले दशक में फ्रायड से प्रभावित होकर जिस कथा-साहित्य की रचना की गयी, उसकी पृष्ठभूमि जैनेन्द्र पहले ही प्रस्तुत कर चुके थे। जहाँ प्रेमचन्द ने समाज के साथ व्यक्ति के एकीकृत (एडजस्ट) होने के प्रश्न को अधिक महत्त्व दिया, वहाँ जैनेन्द्र ने व्यक्ति की गुम होती हुई पहचान को उभारकर सामने रखा। उनके उपन्यासों में अनमेल विवाह या दहेज-प्रथा जैसी समस्याएँ नहीं हैं, बल्कि विवाह स्वयं में एक समस्या है; क्योंकि सारी अनिश्चितताएँ उसके बाद आरम्भ होती है।

प्रेमचन्दोत्तर पमुख उपन्यासकार

प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों में दूसरी पीढ़ी के लेखक पहली पीढ़ी के लेखकों की तुलना में आधुनिक बोध के स्तर पर पर्याप्त नये दिखाई पड़ते हैं और तीसरी पीढ़ी में व्यवस्था के प्रति तीखा आक्रोश एवं जीवन यथार्थ के प्रति गहरी संसक्ति है।

प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासकारों की प्रथम पीढ़ी के अन्तर्गत चतुरसेन शास्त्री, इलाचन्द्र जोशी, सियाराम शरण गुप्त, 'जैनेन्द्र उपेन्द्रनाथ अश्क', भगवतीचरण वर्मा, वृन्दावनलाल वर्मा, यशपाल, बेचन शर्मा 'उग्र', ऋषभचरण जैन, 'अज्ञेय', रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', हजारीप्रसाद द्विवेदी, विष्णु प्रभाकर, अमृतलाल नागर आदि आते हैं।

दूसरी पीढ़ी में उदयशंकर भट्ट, प्रभाकर माचवे, वीरेन्द्रकुमार जैन, भैरवप्रसाद गुरु, भीष्म साहनी, फणीश्वरनाथ 'रेणु', नागार्जुन, लक्ष्मीनारायणलाल, रांगेय राघव, धर्मवीर भारती, डॉ. रघुवंश, अमृतराय, डॉ. देवराज, कृष्णचन्द शर्मा भिजावु रुद्र काशिकेय, अनंत गोपाल शेवडे, नरेश मेहता, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, लक्ष्मीकान्त वर्मा, कंचनलता सब्बरवाल, शिवानी, श्रीलाल शुक्ल, शैलेश मटियानी, कमलेश्वर, मारकण्डेय, ठाकुरप्रसाद सिंह, रामदरश मिश्र, दुष्यन्त कुमार, निर्मल वर्मा, मनहर चौहान आदि लेखक आते हैं।

तीसरी पीढ़ी में केशवप्रसाद मिश्र, विवेकीराय, कृष्ण बलदेव वैद, राही मासूम रजा, अमरकान्त, विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, गंगाप्रसाद विमल, मुद्राराक्षस, मनोहर श्याम जोशी, रवीन्द्र कालिया, काशीनाथ सिंह, गिरिराज किशोर, विनोदकुमार शुक्ल, नरेन्द्र कोहली, संजीव आदि उल्लेखनीय हैं।

सामाजिक यथार्थवादी उपन्यास

ऐतिहासिक उपन्यासों में भी व्यक्ति और समाज को ही महत्त्व दिया जाता है। 'प्रेमचन्द' के 'गोदान' से आरम्भ करके 'जैनेन्द्र', इलाचन्द्र जोशी, 'अज्ञेय', 'अश्क', नागार्जुन, भारती, 'रेणु', अमृतलाल नागर, राजेन्द्र यादव, कृष्णबलदेव वैद, रांगेय राघव, यशपाल, मोहन राकेश, नरेश मेहता, निर्मल वर्मा, राजकमल चौधरी, महेन्द्र भल्ला, उषा प्रियंवदा, श्रीकान्त, श्रीलाल शुक्ल, गिरधर गोपाल, गोविन्द मिश्र, प्रमोद सिन्हा, गिरिराजकिशोर, ममता कालिया, मणिमधुकर, जगदम्बा प्रसाद दीक्षित, यदी उन्नम जगदीशचन्द्र, कृष्णा सोबती के उपन्यासों तक में उन्होंने स्तर-भेद से आधुनिकता के बोध का साक्षात्कार किया है।

आंचलिक उपन्यास

आंचलिक उपन्यासों में भी व्यक्ति और समाज को ही महत्त्व दिया जाता है। आंचलिक उपन्यासों में फणीश्वरनाथ 'रेणु'(1921-1977 ई०) का नाम सर्व प्रमुख है। उनके उपन्यासों में 'मैला आँचल'(1954 ई०), 'परतीपरिकथा'(1957 ई०), 'दीर्घ तपा'(1963 ई०), 'जुलूस'(1965 ई०), 'कितने चौराहे'(1966 ई०) और 'पल्टूबाबू रोड'(1979 ई०) आदि उल्लेखनीय हैं।

स्वच्छन्दतावादी उपन्यास

स्वच्छन्दतावादी उपन्यासों की रचना छायावादी युग में अधिक हुई थी। वृन्दावनलाल वर्मा का 'गढ़कुण्डार' (1929 ई०) और 'विराटा की पद्मिनी' (1929 ई०), 'प्रसाद' की 'तितली' (1934 ई०), 'निराला' की 'अप्सरा' (1931 ई०), 'अलका' (1933 ई०), 'प्रभावती' (1936 ई०) और 'निरुपमा' (1936 ई०), भगवती बाबू का 'तीन वर्ष' (1936 ई०) और 'चित्रलेखा' (1934 ई०), उषादेवी मित्रा का 'प्रिया' (1936 ई०) आदि उपन्यासों को स्वच्छन्दतावादी परम्परा में रखा गया है।

व्यक्तिवादी उपन्यासकार

व्यक्तिवादी उपन्यासकारों में श्री भगवतीचरण वर्मा (1903-1981 ई०), श्री उपेन्द्रनाथ 'अश्क' (1911 ई०-1996 ई०), भगवतीप्रसाद वाजपेयी (1899-1973 ई०), श्री रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' (1915-1995 ई०), उषादेवी मित्रा (1897-1966 ई०) आदि प्रमुख माने गये हैं। दूसरी पीढ़ी के डॉ० लक्ष्मीनारायण लाल को भी इसी परम्परा में रखा जा सकता है। इनमें कई के सम्बन्ध में व्यक्तिवादिता के प्रश्न पर मतभेद हो सकता है।

सामाजिक यथार्थवादी उपन्यास

सामाजिक यथार्थवादी(प्रगतिवादी) उपन्यासकारों में यशपाल, नागार्जुन, रांगेय राघव, भैरवप्रसाद गुप्त, अमृतराय आदि को प्रमुख स्थान दिया जाता है। इस परम्परा को आगे बढ़ाने वालों में भीष्म साहनी, अमरकान्त, विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, जगदीशचन्द्र, राही मासूम रज़ा, मारकण्डेय, काशीनाथ सिंह, जगदम्बाप्रसाद दीक्षित, अब्दुल बिस्मिल्लाह, संजीव आदि

उल्लेखनीय हैं।

Critical Overview / अवलोकन

समाज, संस्कृति और राजनीति के सन्दर्भ में समकालीन परिवेश के विविध पक्षों को रूपायित करना इन उपन्यासों की मुख्य उपलब्धि है। किन्तु यथार्थ के प्रति रुझान होने पर भी उपन्यासकार ने कथा-विन्यास में कल्पना की अतिशयता रखी है। यही कारण है कि इनमें जीवन की द्वन्द्वात्मक चेतना अपनी पूरी शक्ति से नहीं उभर पायी।

Recap / पुनरावृत्ति

- जैनेन्द्र और अज्ञेय फ्रायड के मनोविज्ञान से प्रभावित हैं
- इलाचन्द्र जोशी फ्रायड के मनोविश्लेषण से प्रभावित हैं
- जैनेंद्र का तीसरा उपन्यास 'त्यागपत्र' है
- झूठा सच(1958-60) हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकार यशपाल का सर्वोत्कृष्ट उपन्यास है
- 'वतन और देश' तथा 'देश का भविष्य' नाम से दो भागों में विभाजित है 'झूठा सच' उपन्यास
- यशपाल का नाम आधुनिक हिन्दी साहित्य के कथाकारों में प्रमुख है
- यशपाल का जन्म 3 दिसम्बर 1903 और मृत्यु 26 दिसम्बर 1976 में

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. यशपाल का जन्म कब हुआ?
2. जैनेन्द्र और अज्ञेय किससे प्रभावित हैं?
3. झूठा सच किसका उपन्यास है?
4. जैनेंद्र का तीसरा उपन्यास कौन-सी है?
5. 'त्यागपत्र' किस तरह का उपन्यास है?
6. 'गढ़कुण्डार' किसका उपन्यास है?
7. आंचलिक उपन्यासकारों में सर्व प्रमुख कौन है?
8. स्वच्छन्दतावादी उपन्यासों की रचना किस युग में अधिक हुई थी?

Answers/ उत्तर

1. यशपाल का जन्म 3 दिसम्बर 1903 में हुआ।
2. फ्रायड के मनोविज्ञान से
3. यशपाल का
4. 'त्यागपत्र'
5. औपन्यासिक उपन्यास
6. वृन्दावनलाल वर्मा का
7. फणीश्वरनाथ 'रेणु'
8. छायावादी युग में

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Assignments/ प्रदत्त कार्य

- हिन्दी साहित्य को यशपाल का देन समझाईए।
- हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में अज्ञेय के देन पर टिप्पणी तैयार कीजिए।
- 'झूठा सच' में चित्रित समस्याओं पर विचार व्यक्त कीजिए?
- 'शेखर एक जीवनी' में चित्रित समस्याओं पर अपना विचार स्पष्ट कीजिए?
- आंचलिक उपन्यासों की विशेषताएँ बताकर प्रमुख आंचलिक उपन्यासों के नाम लिखिए?

SGOU

इकाई
2

प्रमुख उपन्यासकारः अज्ञेय, जैनेन्द्र, यशपाल, भीष्म साहनी, फणीश्वर नाथ रेणु, इलाचंद्र जोशी, उपेन्द्र नाथ अश्क, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, उदयप्रकाश आदि

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 1942 के बाद के प्रमुख उपन्यासकार अज्ञेय, जैनेन्द्र, यशपाल, भीष्म साहनी, फनीश्वर नाथ रेणु, इलाचंद्र जोशी, उपेन्द्रनाथ अश्क, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, उदयप्रकाश की रचनों की विशेषताएँ समझता है
- अज्ञेय का उपन्यास 'शेखर एक जीवनी' की विशेषता समझता है
- यशपाल का उपन्यास 'झूठा सच' की विशेषता समझता है
- जैनेद्र का उपन्यास 'त्यागपत्र' की विशेषता समझता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

आधुनिकताबोध के आधार पर प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों का वर्गीकरण करना आसान नहीं है। 'आधुनिकताबोध' स्वयं में एक जटिल अवधारणा है। आधुनिक उपन्यासों की मुख्य प्रवृत्ति हैं विसंगति, विडम्बना, व्यर्थता, अजनबीपन, नैराश्य, कुण्ठा, संत्रास आदि। आधुनिक उपन्यासकार आज का जीवन-सत्य को प्रतिष्ठित करके यथार्थबोध को महत्त्व देते हैं।

Key Themes /मुख्य प्रसंग

- आधुनिक उपन्यासों की मुख्य प्रवृत्तियों का वर्णन है।
- स्वतन्त्रता की खोज मानवीय परिस्थितियों के बीच की गयी है।
- फ्रायड के मनोविश्लेषण का प्रभाव उपन्यासों का सृजन में हुआ।
- देश-विभाजन की पृष्ठभूमि में उपन्यास लिखा गया।
- पुराने नैतिक आदर्शो और आधुनिक व्यावहारिक मूल्यों की टकराहट से उत्पन्न तनाव का यथार्थ चित्रण अंकित किया है।
- परिवर्तनशील मानवीय रूप के मूल में आर्थिक समस्या का अंकन प्रस्तुत समय की विशेषता है।

Discussion / चर्चा

आधुनिकता -बोध के उपन्यासों में कहीं वैयक्तिक, तो कहीं पारिवारिक, सामाजिक विषमताओं का मुखर विरोध मिलता है। इन उपन्यासकारों में अज्ञेय, जैनेन्द्र, यशपाल, भीष्म साहनी, फणीश्वरनाथ रेणु, इलाचंद्र जोशी, उपेन्द्र नाथ अश्क, कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, उदयप्रकाश आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

अज्ञेय

अज्ञेय (1911-1987ई॰) के तीन उपन्यास- 'शेखरः एक जीवनी', 'नदी के द्वीप' (1951ई॰) और 'अपने-अपने अजनबी' (1961ई॰) प्रकाशित हैं।

'शेखरः एक जीवनी' एक सशक्त और प्रौढ़ रचना है।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

अज्ञेय कृत 'शेखरः एक जीवनी' के प्रकाशन के साथ हिन्दी उपन्यास की दिशा में एक नया मोड़ आया। अपनी प्रथम-कृति में ही अज्ञेय ने कलात्मक प्रौढ़ता का निदर्शन किया। यह कृति 'फ्लैषबैक' शैली में लिखी गयी है। शेखर एक क्रान्तिकारी विद्रोही है। उसे फाँसी की सजा हुई है। वह अपने जीवन की अन्तिम रात में अपने समूचे अतीत को एक बार पुनः जी लेना चाहता है। शेखर एक अहंवादी व्यक्ति है। वह हर सामाजिक बन्धन के प्रति विद्रोह करता है। उसका अहं हर पुरुष से आदर की अपेक्षा करता है और हर स्त्री से समर्पण की। उसके जीवन 'शेखरः एक जीवनी' अनेक प्रतिकूल आलोचनाओं के बावजूद हिन्दी-जगत् की एक सशक्त और विशिष्ट रचना है।

कथ्य, शिल्प और भाषा की दृष्टि से यह परम्परा से हटकर एक नया प्रयोग था जिसे आज आधुनिकता की संज्ञा दी आती है। इसका सर्वप्रथम समावेश इसी उपन्यास में दिखायी देता है। इसका मूल मन्तव्य है- स्वतन्त्रता की खोज। यह खोज मानवीय परिस्थितियों के बीच की गयी है।

1. जैनेन्द्र

जैनेन्द्र और अज्ञेय फ्रायड के मनोविज्ञान से प्रभावित हैं, तो इलाचन्द्र जोशी उसके मनोविश्लेषण से। 'सन्यासी' के द्वारा उन्हें उपन्यासकार के रूप में प्रतिष्ठा मिली। इस उपन्यास में ही पहली बार मनोविश्लेषणात्मक पद्धति की प्रवृत्ति देखी जाती है। सन्यासी के अतिरिक्त उनके 'पर्दे की रानी', 'प्रेत और छाया', 'निर्वासित', 'मुक्तिपथ', 'जिप्सी' 'जहाज का पंछी', 'ऋतुचक्र', 'भूत का भविष्य' आदि उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। जोशी जी के उपन्यासों की विकास-यात्रा में 'मुक्तिपथ' एक नये मोड़ की सूचना देता है। 'मुक्तिपथ' और उसके बाद के उपन्यासों में परिदृश्य का विस्तार और सामाजिकता का समावेश दिखायी पड़ता है।

'सन्यासी', 'पर्दे की रानी' और 'प्रेत और छाया' में एबनार्मल चरित्रों को लिया गया है। इनके मुख्य पात्र किसी-न-किसी मनोवैज्ञानिक ग्रन्थि के शिकार हैं। 'पर्दे की रानी' के पात्र मानसिक कुण्ठाओं से ग्रस्त है। फ्रायड के मनोविश्लेषण का मूलाधार काम भावना है, उसी को केन्द्र में रखकर तीनों उपन्यासों के ताने-बाने बुने गये है।

'मुक्तिपथ', 'जिप्सी' और 'जहाज का पंछी' में जोशी जी ने सामाजिकता का भी सन्निवेश किया है। 'मुक्तिपथ' का नायक समाजवादी विचारधारा का व्यक्ति है और नायिका का दृष्टिकोण व्यावहारिक एवं व्यक्ति सापेक्ष है।

किन्तु 'जहाज का पंछी' व्यक्ति और समाज की पारस्परिक असम्बद्धता का उपन्यास है। इस उपन्यास का नायक ग्रन्थि से बाहर निकलकर समाज की बदबूदार गलियों का चक्कर लगाता है और निस्सहायों की सहायता करता है पर उसके कार्य परिस्थितिजन्य उतने नहीं है, जितने बौद्धिक है। उसका भटकाव उसी के द्वारा नियोजित है, परिस्थितियों द्वारा नहीं।

'ऋतुचक्र' में जोशी जी पुनः रोमानी प्रेम की ओर उन्मुख हो गये हैं मानो उनका प्रतिपाद्य यह है कि जीवन के चरम सत्य की उपलब्धि सेक्स में ही होती है। इसमें प्रेम के तीन आयामों का चित्रण हैं। आदिम गन्धों का प्रेम अस्तित्ववादी प्रेम और इन दोनों की मध्यवर्ती स्थिति का प्रेम कथा। संरचना और अभिव्यंजना-शिल्प दोनों की ही दृष्टि से जोशी जी इसमें छायावादी संस्कारों से मुक्त नहीं हो सके हैं और इसीलिए इसमें नये मूल्यों का सही ढंग से आंकलन नहीं हो सका है।

2. यशपाल

यशपाल(1903-1976 ई०) का नाम आधुनिक हिन्दी साहित्य के रचनाकारों में प्रमुख है। ये एक साथ ही क्रांतिकारी एवं लेखक दोनों रूपों में जाने जाते है। प्रेमचंद के बाद हिन्दी के सुप्रसिद्ध प्रगतिशील कथाकारों में इनका नाम लिया जाता है। अपने विद्यार्थी जीवन से ही यशपाल क्रांतिकारी आन्दोलन से जुड़े, इसके परिणाम स्वरूप लम्बी फरारी और जेल में व्यतीत करना पड़ा। इसके बाद इन्होने साहित्य को अपना जीवन बनाया, जो काम कभी इन्होने बंदूक के माध्यम से किया था, अब वही काम इन्होने बुलेटिन के माध्यम से जनजागरण का काम शुरु किया। यशपाल को साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में भारत सरकार द्वारा सन् 1970 में पद्मभूषण से सम्मानित किया गया था।

यशपाल का पहला उपन्यास 'दादा कामरेड' 1941 ई० में प्रकाशित हुआ था। 'देशद्रोही' (1943 ई०), 'दिव्या' (1945 ई०), 'पार्टीकामरेड' (1946 ई०), 'मनुष्य के रूप' (1949 ई०), 'अमिता' (1956 ई०), 'झूठा सच' दो भाग (1958 ई०), 'बारह घण्टे' (1962 ई०), 'अप्सरा का शाप' (1965 ई०), 'क्यों फँसे' (1968 ई०), 'मेरी तेरी उसकी बात' (1974 ई०) आदि कई उपन्यास प्रकाशित हुए हैं। वे मार्क्सवादी विचारधारा के समर्थक हैं।

झूठा सच यशपाल का सर्वोत्कृष्ट उपन्यास है। यह 'वतन और देश' तथा 'देश का भविष्य' नाम से दो भागों में विभाजित हैं। इस फ्रायड के मनोविश्लेषणमें विभाजन के समय देश में

होने वाले भीषण रक्तपात एवं भीषण अव्यवस्था का चित्रण हैं। यह उपन्यास हिन्दी साहित्य के सर्वोत्तम उपन्यासों में माना गया है।

'झूठा सच' के प्रकाशन ने सिद्ध कर दिया कि यशपाल बहुत विशाल फलक पर जीवन के विविध रूपों, आयामों, समस्याओं और जटिलताओं को अपने ढंग से प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। इसलिए इसे औपन्यासिक महाकाव्य की संज्ञा दी जा सकती है। देश-विभाजन की पृष्ठभूमि में इतनी बड़ी कृति की परिकल्पना और सामयिक, सामाजिक, राजनीतिक वातावरण को यथासम्भव ऐतिहासिक यथार्थ के रूप में चित्रित किया गया है।

यशपाल का नवीनतम उपन्यास 'मेरी तेरी उसकी बात' भारत के स्वतन्त्रता-पूर्व और स्वातन्त्र्योत्तर काल के सामाजिक-राजनीतिक जीवन पर आधारित है।

'अमिता' और 'दिव्या' शीर्षक ऐतिहासिक उपन्यासों को छोड़कर उनके शेष उपन्यास समाजवादी यथार्थ का चित्र प्रस्तुत करते हैं। 'दादा कामरेड' में पूंजीवाद, गांधीवाद और क्रान्तिकारियों के आतंकवाद का विरोध करते हुए समाजवाद का समर्थन किया गया है। स्त्री को वरण की स्वतन्त्रता देने का प्रश्न भी लेखक ने उठाया है।

'देशद्रोही' सन् 1941 की क्रान्ति से सम्बद्ध उपन्यास है। कलागत सतर्कता के बावजूद इसमें पात्रों को विभिन्न परिस्थितियों में फेंका गया है। इसकी अपेक्षा 'पार्टी कामरेड' साफ-सुथरा उपन्यास है। इसमें 'मनुष्य के रूप में परिवर्तनशील मानवीय रूप के मूल में आर्थिक समस्या की भूमिका स्वीकार की गयी है।

3. भीष्म साहनी

भीष्म साहनी (1915-2003 ई०) के कुल सात उपन्यास- 'झरोखे' (1967 ई०), 'कड़ियाँ' (1970 ई०), 'तमस' (1973 ई०), 'वसन्ती' (1980 ई०), 'मय्यादास की माड़ी' (1988 ई०) 'कुन्तो' (1993 ई०) 'नील नीलिमा नीलोफर' (2000 ई०) प्रकाशित हैं।

'झरोखे' में एक आर्य समाजी संस्कारों वाले मध्यवर्गीय परिवार में घटित छोटी-छोटी घटनाओं को स्मृति-चित्रों के रूप में सँजोया गया है। पूरे उपन्यास में मानव की जिजीविषा को उसकी शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'कड़ियाँ' में विपरीत संस्कारों वाले मध्यवर्गीय 'पति-पत्नी' की जीवन कथा कही गयी है। 'तमस' भीष्म साहनी का सर्वाधिक चर्चित उपन्यास है। इसमें लेखक ने 1947 ई० में हुए भीषण साम्प्रदायिक दंगे की पाँच दिनों की कहानी प्रस्तुत की है। इससे देश-विभाजन के पूर्व की सामाजिक मानसिकता और उसकी अनिवार्य परिणति की विभीषिका से पूरी तरह परिचित हो सकता है। 'वसन्ती' और 'नील नीलिमा नौलोफर' स्त्री केंद्रित उपन्यास हैं। 'मय्यादास की माड़ी' भी एक बहु चर्चित उपन्यास है। इसमें उन्नीसवीं शती के मध्य से बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध तक का इतिहास प्रस्तुत किया गया है।

4. फणीश्वर नाथ 'रेणु'

फणीश्वर नाथ 'रेणु' को हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ आंचलिक उपन्यासकार माना जा सकता है। 'रेणु' का पहला उपन्यास है 'मैला आँचल'। इसमें बिहार राज्य के पूर्णिया जिले के 'मेरी गंज' को कथा का केन्द्र बनाया गया है। इस उपन्यास में पूरा अंचल ही नायक बन गया है।

'परती परिकथा' में पूर्णिया जिले के ही परानपुर गाँव की कथा को केन्द्र बनाया गया है। इसमें 'रेणु' ने आज़ादी के बाद गाँवों में टूटते बिखरते सामंती अवशेषों और उनके बीच से उभरते नवीन जनवादी मूल्यों को स्वर देने का प्रयत्न किया है।

'दीर्घतपा' (1963 ई०), 'जुलूस' (1965 ई०), 'कितने चौराहे' (1966 ई०) और 'पल्टू बाबू रोड' (1979 ई०), 'रेणु' के अन्य उपन्यास हैं। 'रामरतन राय' (1971 ई०) 'रेणु' का अधूरा उपन्यास है। इनमें 'आंचलिकता' का वह रूप नहीं रह गया है जो 'मैला आँचल' या 'परती परिकथा' में है। 'दीर्घतपा' में बड़े-बड़े शहरों में सफेदपोशों द्वारा रुपया कमाने के लिए किये जाने वाले रूप-व्यापार का पर्दाफाश किया गया है। 'जुलूस' में पूर्वी बंगाल के आये शरणार्थियों की समस्याओं की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया गया है। 'कितने चौराहे' में आजादी के लिए आत्मोत्सर्ग करने वाले युवकों के संघर्ष का चित्रण किया गया है। इसमें 'रेणु' का अपना जीवन भी विम्बित है। 'पल्टू बाबू रोड' में कांग्रेसी शासन में फैलते भ्रष्टाचार को उजागर किया गया है।

6. इलाचन्द्र जोशी

इलाचन्द्र जोशी (1902-1982 ई०) के 'लज्जा' (1929 ई०), 'सन्यासी' (1940 ई०), 'पर्दे की रानी' (1942 ई०), 'प्रेत और छाया' (1944 ई०), 'निर्वासित' (1946 ई०), 'मुक्तिपथ' (1948 ई०), 'सुबह के भूले' (1951 ई०), 'जिप्सी' (1952 ई०), 'जहाज का पंछी' (1954 ई०), 'ऋतुचक्र' (1969 ई०),

'भूत का भविष्य' (1973 ई०), 'कवि की प्रेयसी' (1976 ई०) आदि कई उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। इनमें 'सन्यासी', 'पर्दे की रानी', 'प्रेत और छाया' तथा 'जहाज का पंछी' को विशेष ख्याति मिली है। जोशी जी ने मनोविश्लेषण को अपनी कला का साधन बनाया है। आप फ्रॉयड और मार्क्स दोनों के समन्वय में विश्वास करते हैं और इसी आधार पर समाज की स्वस्थ प्रगति की अनिवार्यता स्वीकार करते हैं।

'सन्यासी' आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। इसमें नायक नन्दकिशोर के अहंभाव का मनोविश्लेषण किया गया है। 'पर्दे की रानी' में नायिका निरंजना खूनी पिता और वेश्या माता की पुत्री है। यह जानकारी उसमें हीनता-ग्रन्थि उत्पन्न करती है और वह समाज के प्रति घृणा और प्रतिहिंसा का भाव रखने लगती है। 'प्रेत और छाया' में नायक पारसनाथ को पता चलता है कि उसकी माँ वेश्या थी। उसमें हीनता की भावना उत्पन्न होती है और वह समस्त नारी जाति को घृणा करने लगता है। इसप्रकार हिन्दी उपन्यासों में मनोविश्लेषण की प्रवृत्ति इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों की विशेषता हैं।

7. उपेन्द्रनाथ 'अश्क'

उपेन्द्रनाथ 'अश्क' (1910-1996 ई०) के कई उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। 'सितारों के खेल' (1940 ई०), 'गिरती दीवारें' (1947 ई०), 'गर्मराख' (1957 ई०), 'शहर में घूमता आइना' (1963 ई०), 'एक नन्हीं किन्दील' (1969 ई०), 'बाँधो न नाव इस ठाँव' (1974 ई०) और 'निमिषा' (1980 ई०) आपके बहुचर्चित उपन्यास हैं।

'सितारों के खेल' में लेखक ने 'नियति' को अधिक महत्त्व दिया है। 'गिरती दीवारें' 'अश्क' का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। कथा-नायक 'चेतन' के माध्यम से मध्यवर्ग का जीवन यथार्थ पर चर्चा किया गया है।

8. कमलेश्वर

कमलेश्वर (1932-2007 ई०) के प्रायः सभी उपन्यास छोटे-छोटे हैं जैसे कि- 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' (1957 ई०), 'डाक बँगला' (1959 ई०), 'लौटे हुए मुसाफिर' (1961 ई०), 'समुद्र में खोया हुआ आदमी' (1967 ई०), 'काली आँधी' (1974 ई०), 'तीसरा आदमी' (1976 ई०) 'आगामी अतीत' (1976 ई०), 'वही बात' (1980 ई०), 'सुबह दोपहर शाम' (1982 ई०), 'रेगिस्तान' (1988 ई०) आदि। कमलेश्वर का एक बड़ा उपन्यास है 'कितने पाकिस्तान' (2000 ई०)। इसमें पुराने नैतिक आदर्शों और आधुनिक व्यावहारिक मूल्यों की टकराहट और उससे उत्पन्न तनाव का यथार्थ चित्र अंकित किया गया है। 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' में उन्होंने आधुनिक परिवेश में कस्बे की ज़िन्दगी की अच्छी-बुरी स्थितियों का चित्रण किया है। 'डॉक बँगला' में मातृहीना 'इरा' का 'विमल' के प्रति आकृष्ट होकर पिता से अलग होने और उसके बाद जीवन-प्रवाह में अनेक लोगों से जुड़ने-बिछुड़ने और संघर्ष करने की कहानी कही गयी है। 'तीसरा आदमी' में पति-पत्नी के बीच अनिवार्य परिस्थितियों में आर्थिक दबाव के फलस्वरूप तीसरे आदमी के आने और अन्ततः पति के अप्रासंगिक हो जाने की त्रासदी और उससे उत्पन्न तनाव का चित्रण किया गया है।

9. निर्मल वर्मा

निर्मल वर्मा (1929-2005 ई०) के पाँच उपन्यास 'वे दिन' (1964 ई०), 'लालटीन की छत' (1974 ई०), 'एक चिथड़ा सुख' (1979 ई०), 'रात का रिपोर्टर' (1989 ई०) 'अंतिम अरण्य' (2000 ई०)- प्रकाशित हैं। उनकी रचनाओं में 'आधुनिकताबोध' के सारे सूत्र- 'अकेलेपन का बोध', 'महायुद्ध का संत्रास', 'जीवन की व्यर्थता का बोध', 'उदासी', 'तनाव', 'अनिश्चय' आदि-विद्यमान हैं। 'लालटीन की छत' में एक किशोरी के युवती बनने के बीच के अन्तराल की मनःस्थितियों-रहस्य स्मृति-चित्रों के सहारे किया गया है। 'रात का रिपोर्टर' निर्मल वर्मा का चौथा उपन्यास है। यहाँ 'रात का अँधेरा' आपातकाल का प्रतीक है। इस काल में व्यक्ति और समाज के भीतर समाये हुए गहरे संत्रास के व्यापक प्रभाव का चित्रण लेखक ने इस उपन्यास में किया है। 'अंतिम अरण्य' निर्मल वर्मा का पाँचवाँ उपन्यास है।

Critical Overview / अवलोकन

स्वतंत्रताप्राप्ति के बाद हिन्दी उपन्यासों की कथा-भूमि काफी विस्तृत और वैविध्य पूर्ण हो चुकी हैं। समाज में उपस्थित उपेक्षितों के प्रति सच्ची संवेदना और गहरी सहानुभूति देखी जा सकती है। इनमें अन्तरराष्ट्रीय परिवेश का चित्रण भी होने लगा है। स्वातन्त्र्योत्तर युग में हिन्दी उपन्यासों का टेकनीक की दृष्टि से भी अभूतपूर्व विकास हुआ है। आत्मकथात्मक शैली, पत्र- शैली, डायरी शैली, रिपोर्ताज शैली, रेखाचित्र शैली सभी में उपन्यास लिखे गये हैं।

Recap / पुनरावृत्ति

- देश की यथार्थ परिस्थितियों का चित्रण
- अधिकांश रूप से सामाजिक कुरीतियों का विरोध
- जैनेन्द्र का उपन्यास है 'झूठा-सच'
- जैनेन्द्र का प्रत्येक उपन्यास अन्तर्विरोधों का उपन्यास है
- मनोविश्लेषण की प्रवृत्ति इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों की विशेषता हैं
- कमलेश्वर का एक सर्वाधिक चर्चित उपन्यास है 'कितने पाकिस्तान'
- 'तमस' उपन्यास में भीष्म साहनी 1947 ई० में हुए भीषण साम्प्रदायिक दंगे की कहानी प्रस्तुत की है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 'तमस' उपन्यास किसने लिखा?
2. जैनेंद्र की तीसरी औपन्यासिक कृति 'त्यागपत्र' किस तरह की विधा है?
3. 'अज्ञेय' का पूरा नाम क्या है?
4. 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' किसका उपन्यास है?
5. 'अज्ञेय' का जन्म कब हुआ?
6. 'कितने पाकिस्तान' किसका उपन्यास है?
7. 'गिरती दीवारें' किसका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है?
8. 'अमिता' और 'दिव्या' किस प्रकार का उपन्यास है?

Answers/ उत्तर

1. भीष्म साहनी ने।
2. उपन्यास
3. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'
4. कमलेश्वर का
5. 7 मार्च, 1911 को।
6. कमलेश्वर का।
7. 'अश्क' का
8. ऐतिहासिक

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Assignments/ प्रदत्त कार्य

- अज्ञेय के उपन्यासों का विश्लेषणात्मक अध्ययन कीजिए?
- जैनेंद्र के उपन्यासों का विश्लेषणात्मक अध्ययन कीजिए?
- अज्ञेय के उपन्यासों की मुख्य समस्या क्या हैं?
- जैनेंद्र के उपन्यासों की मुख्य समस्या क्या हैं?
- यशपाल के उपन्यासों की मुख्य समस्या क्या हैं?

SGOU

इकाई 3

1942 के बाद का हिन्दी कहानी साहित्य, प्रमुख कहानी आन्दोलन, अकहानी, सचेतन कहानी, सहज कहानी, समांतर कहानी, सक्रिय कहानी, जनवादी कहानी और प्रमुख कहानीकार- अज्ञेय, जैनेन्द्र, अमरकांत, यशपाल, महीप सिंह, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव आदि (सामान्य परिचय)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 1942 के बाद की कहानी साहित्य की जानकारी प्राप्त करता है
- समांतर कहानी की जानकारी प्राप्त करता है
- सचेतन कहानी की जानकारी प्राप्त करता है
- सहज कहानी की जानकारी प्राप्त करता है
- सक्रीय कहानी की जानकारी प्राप्त करता है
- अकहानी की जानकारी प्राप्त करता है
- जनवादी कहानी की जानकारी प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

कहानी मौत के विरूद्ध ज़िन्दगी की जिद की कहानी होती है। अपने से हटकर दूसरे की सत्ता स्वीकार करने की नियति कहानी के साथ जन्म से ही जुड़ी हुई है। कहने की जरूरत नहीं कि कहानी लोकप्रिय साहित्य है। साहित्यिक माध्यम के रूप में यह प्रकृति से ही जनतांत्रिक है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

'कहानी' नाम की पत्रिका का प्रकाशन, विभिन्न कहानी आंदोलन, नयीकहानी, सचेतन कहानी, सहज कहानी, समांतर कहानी, सक्रिय कहानी, जनवादी कहानी

Discussion / चर्चा

प्रेमचन्दोत्तर कहानी का विकास

1936 ई० से लेकर 1950 तक के बीच हिन्दी कहानी को सर्वाधिक प्रेरणा प्रगतिशील आन्दोलन से मिली। सन् 1938 के अक्टूबर से 'कहानी' नाम की पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। सन् 50 तक एक प्रकार से हम संक्रान्ति की स्थिति में ही रहे और किसी नयी साहित्य-चेतना का स्पष्ट उभार प्रत्यक्ष नहीं हुआ; किन्तु उसके बाद स्थिति बदल गयी।

सन् 1954 ई० में 'कहानी' के पुनः प्रकाशन हुआ। इस को समृद्ध करने में जिन कथाकारों ने योग दिया उनमें मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, मार्कण्डेय, फणीश्वरनाथ 'रेणु', धर्मवीर भारती, हरिशंकर परसाई, अमरकान्त, अमृतराय, विष्णुप्रभाकर, भीष्म साहनी, उषा प्रियंवदा, मन्नू भंडारी, कृष्णा

सोबती, शिवप्रसाद सिंह, शैलेश मटियानी, कृष्णबलदेव वैद, निर्मल वर्मा, ज्ञानरंजन आदि उल्लेखनीय हैं। सन् 1954 ई० की 'आगे की कहानी' सन् 1960 ई० तक आते-आते नयीकहानी बन गयी।

सन् 1960 ई० से 'नयी कहानियाँ' नामक पत्रिका श्री भैरवप्रसाद गुप्त के सम्पादकत्व में दिल्ली से प्रकाशित होने लगी।

विभिन्न कहानी आन्दोलन

अकहानी

'नयीकहानी' की प्रतिष्ठा के साथ ही उसका विरोध भी आरम्भ हो गया। इस विरोध को आन्दोलन का रूप दिया गया और सन् 1960 के बाद हिन्दी-कहानी क्षेत्र में 'नयीकहानी' के स्थान पर अ-कहानी को प्रतिष्ठित किया गया। हिन्दी-कहानी के क्षितिज पर 'अ-कहानी' एक आन्दोलन के रूप में आयी। साठोत्तरी कहानी को डॉ. गंगाप्रसाद विमल ने पहले अ-कहानी के नाम से पुकारा। डॉ. रामदरश मिश्र ने अकहानी को स्पष्ट करते हुए लिखा है- 'अकहानी' का 'अ' वस्तु एवं मूल्य पर भी निषेध का स्वर मुखर करता है। 'वस्तु' के स्तर पर उसने सामाजिक संघर्षों से संबंधित विषयों को ग्रहण न करके यौन प्रसंगों को ही कहानी का विषय बनाया है। सभी मूल्यों का निषेध करते हुए साहित्यिक मूल्य केन्द्र बिन्दु बना लिया है।

इसके पक्षधरों में डॉ. गंगाप्रसाद विमल, जगदीश चतुर्वेदी, रवीन्द्र कालिया, दूधनाथ सिंह, प्रयाग शुक्ल, सुधा अरोड़ा, ज्ञान रंजन, रमेश बक्षी, श्रीकान्त वर्मा, विजयमोहन सिंह, विश्वेश्वर आदि थे। ध्यान देने की बात यह है कि 'अ-कहानी' आन्दोलन से हिन्दी कहानी ज़्यादा समृद्ध नहीं हुई।

सचेतन कहानी

नयीकहानी के विरोध में दूसरा आन्दोलन 'सचेतन- कहानी' के रूप में सामने आया। इसके पुरोधा डॉ. महीप सिंह हैं। 1964 ई० में 'आधार' पत्रिका के 'सचेतन कहानी विशेषांक' के प्रकाशन से इसका आरम्भ माना जा सकता है। 'सचेतन कहानी' आन्दोलन ने पश्चिम से आयातित जीवन-मूल्यों- निराशा, कुंठा, ऊब, अकेलापन, अनास्था आदि-का विरोध किया और भारतीय परिवेश के भीतर सहज जीवन स्थितियों को स्वीकार कर संघर्षशील चेतना की सक्रियता पर बल दिया। इस आन्दोलन में महीप सिंह के अतिरिक्त कमल जोशी, मधुकर सिंह, योगेश गुप्त, वेदराही, हिमांशु जोशी, मनहर चौहान आदि लेखकों ने सक्रिय भागीदारी निभायी। नयीकहानी के दायरे में जो नकारात्मक प्रवृत्तियाँ पनप रही थीं, उन्हीं का विरोध 'सचेतन कहानी' आन्दोलन में किया गया था।

सहज कहानी

'सचेतन कहानी' आन्दोलन बहुत जल्दी सामाप्त हो गया। सन् 1968 ई० में अमृतराय ने 'सहज कहानी' का नारा दिया। यह नारा आन्दोलन का रूप न ले सका। अमृतराय ने किसी भी प्रकार के बने-बनाये साँचे का विरोध किया और अपनी बात बलपूर्वक प्रस्तुत की, किन्तु उन्हें सहज कहानी लिखने वाले नये लेखक उपलब्ध नहीं हुए।

समांतर कहानी

सन् 1972 ई० के आस-पास नयीकहानी के सशक्त रचनाकार कमलेश्वर ने 'सारिका' के माध्यम से समांतर कहानी आन्दोलन चलाया। उन्होंने 'समांतर -1' में 'अरविंद', 'सिन्हा', 'इब्राहीम शरीफ', 'कामतानाथ', 'जितेन्द्र भाटिया', 'दामोदर सदन', 'निरुपमा सोबती', 'मधुकर सिंह', 'मृदुला गर्ग', 'सुधा अरोड़ा', 'शीला रोहेकर', 'विभुकुमार', 'श्रवणकुमार', 'सतीशजमाली', 'सुदीप', 'सनतकुमार', 'से० रा० यात्री', 'रमेश उपाध्याय' की कहानियाँ प्रकाशित कीं। 'समांतर कहानी' आन्दोलन ने कहानी में आम आदमी को प्रतिष्ठित करने पर बल दिया। इस आन्दोलन से जुड़े हुए रचनाकारों ने जीवन के विभिन्न संदर्भों में आप आदमी के संघर्ष को देखा और उसकी चिन्ताओं, तकलीफों एवं मजबूरियों को रेखांकित किया। कहना न होगा कि इस आन्दोलन को भी व्यापक समर्थन प्राप्त नहीं हुआ।

सक्रिय कहानी

सक्रिय कहानी की अवधारण सन् 1979 ई० में राकेश वत्स ने 'मंच' पत्रिका के माध्यम से की। उन्होंने कहा- "सक्रिय कहानी का और स्पष्ट मतलब है कि चेतनात्मक ऊर्जा और जीवन्तता की कहानी। उस समझ और अहसास की कहानी जो आदमी को बेवसी, निहत्थेपन और नपुंसकता से निजात दिलाकर स्वयं अपने अंदर की कमजोरियों के खिलाफ खड़ा होने के लिए तैयार करने की जिम्मेदारी अपने सिर लेती है।" सक्रिय कहानी एक बिंदु पर जनवादी कहानी के अति निकट है। यह बिंदु व्यवस्था विरोध का है। सक्रिय आंदोलन से संबद्ध कहानीकार आर्थिक सामाजिक शोषण का विरोध करते हैं। इसके लिए ये बर्तमान व्यवस्था को उत्तरदायी बतलाते हैं। सक्रिय कहानी से जुड़े कहानीकारों में रमेश बतरा, चित्रा मुद्गल, सच्चिदानन्द धूमकेतु, सुरेन्द्र सुकुमार, धीरेन्द्र अस्थाना आदि मुख्य हैं।

जनवादी कहानी

सन् 1977 ई० में 'दिल्ली विश्वविद्यालय' में जनवादी विचारमंच की स्थापना हुई। अक्टूबर इसी मंच के तत्त्वावधान में 1967 से 1977 ई० तक के हिन्दी-लेखकों का जनवादी साहित्य का मूल्यांकन किया गया। 1982 में दिल्ली में जनवादी लेखकमंच का प्रथम राष्ट्रीय अधिवेशन हुआ। इसी समय से कहानी- रचना के क्षेत्र में जनवादी आन्दोलन सक्रिय हुआ। जनवादी कहानी की परम्परा का आरम्भ प्रेमचन्द की 'कफ़न' और 'पूस की रात' जैसी कहानियों से माना गया। ज्ञानरंजन और काशीनाथ सिंह जैसे कहानीकारों ने इसे आगे बढ़ाया। वैचारिक धरातल पर जनवादी कहानी मार्क्सवाद को आधार बनाकर चलती है। इसमें मुख्यतः किसानों-मजदूरों, पीड़ितों, दलितों और असहायों का जीवन-संघर्ष चित्रित किया जाता है।

अज्ञेय

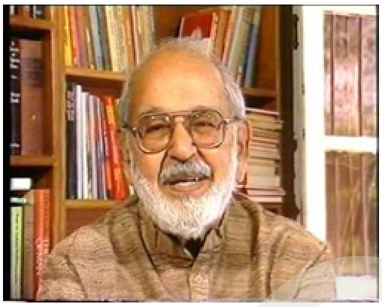

अज्ञेय का पूरा नाम सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय है। उनका जन्म 7 मार्च 1911 को उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले के कसया (कुशीनगर) में हुआ था। वे सन् 1929 में बी.एस. सी पूरा करके अंग्रेज़ी में एम.ए के लिए पढ़ते समय साहित्य में सक्रिय हो गये। अज्ञेय बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार है। अज्ञेय को आधुनिक हिन्दी के पथ-प्रदर्शक कहते हैं। उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार (1964, आँगन के पार द्वार), भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार (1978, कितनी नावों में कितनी बार) तथा 1983 में भारत-भारती पुरस्कार आदि मिले हैं।

महान कवि, प्रसिद्ध शैलीकार, कथा-साहित्य को एक महत्त्वपूर्ण मोड़ दिये गये कथाकार, श्रेष्ठ उपन्यासकार, ललित निबंधकार, समर्थ संपादक, सैनिक और सफल अध्यापक आदि विविध रूप में अज्ञेय का आदरणीय स्थान है। विपथगा (1937), (परंपरा 1944), अमर वल्लरी (1944), कड़ियाँ तथा अन्य कहानियाँ (1945), कोठरी की बात (1945), शरणार्थी (1948), जयदोल (1951), ये तेरे प्रतिरूप (1961), संपूर्ण कहानियाँ (1975) आदि उनका कहानी संग्रह है। अज्ञेय का निधन 4 अप्रैल 1987 को हुआ है।

प्रेमचन्द के पश्चात हिन्दी कहानीकारों में अज्ञेय का महत्वपूर्ण स्थान होता है। वे मध्यम वर्गीय परिवारों के जीवन के चित्रकार रहे थे। उन्होंने अपनी कहानियों में देश-काल और समाज को उतना स्थान नहीं दिया है, जितना चरित्र चित्रण को दिया है। जीवन की जटिलता का अंकन उनका प्रिय विषय रहा था। प्रेमचन्द, यशपाल आदि व्यक्ति से अधिक समाज को प्रमुखता दिया है तो अज्ञेय व्यक्ति के महत्व को स्थान दिया है। अज्ञेय आरंभ से अंत तक मनोवैज्ञानिक कहानीकार रहा है।

अज्ञेय की लेखनी से 67 उच्च स्तरीय कहानियाँ मिली है। उनकी आरंभकालीन कहानियाँ क्रांतिकारी भावना से ओतप्रोत है। उन्हें धीर, वीर, गंभीर कथाकार कहते हैं। उनकी कहानियों में क्रांति का उपज पौरुष, दृढ़ता, अचंचलता, साहस, बलिदान भावना, सर्वत्र समर्पण भावना, प्रगति की पिपासा आदि अनेक गुण एकसाथ मिलते हैं।

अज्ञेय स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेकर कई साल कारावास में पड़े थे। उस समय के जीवन उन्होंने छाया (1931), कोठरी की बात (1934), दरोगा अमीनचंद (1938), नवंबर दस (1957) जैसी कहानियों में चित्रित है। उनकी द्रोही, चिड़िया घर, लेटर बाक्स, कोठरी की बात, हजामत का साबुन जैसी कहानियाँ आत्मकथात्मक कोटि पर आती हैं।

अज्ञेय भाषा के धनी है। उन्होंने उसका जादू-सा उपयोग किया है। वैसे भावपक्ष और कला पक्ष की दृष्टि में अज्ञेय की कहानियाँ श्रेष्ठतम है। निष्कर्ष रूप में कह सकते है आधुनिक हिन्दी के कहानीकारों में अज्ञेय का स्थान शीर्षस्थ है।

जैनेंद्र कुमार

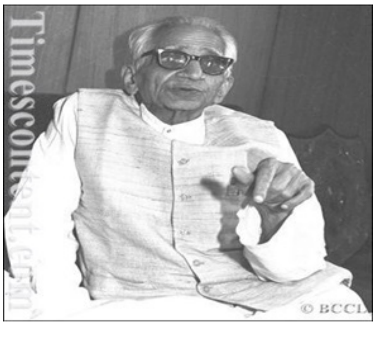

हिन्दी के अमर कहानीकार जैनेंद्र कुमार का जन्म 2 जनवरी 1905 को उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ के कौड़ियागंज में हुआ था। उनकी मृत्यु 24 दिसम्बर 1988 को हुई। बनारस विश्वविद्यालय की उच्च शिक्षा के दौरान जैनेंद्र कुमार साहित्य जगत पर

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

पदार्पण किये। विद्यार्थी जीवन में उन्हें असहयोग आंदोलन में भाग लेकर जेल जीवन भोगने पड़े। आगे वे साहित्य-जगत में सजीव हो गया। उन्हें भारत सरकार सन् 1966 में केंद्र साहित्य अकादमी पुरस्कार और 1971 में पद्मभूषण दे कर सम्मानित किया है। सन् 1973 में दिल्ली विश्वविद्यालय ने उनको डीलिट की उपाधि दे कर सम्मानित किया है।

जैनेंद्र कुमार अपनी कहानियों में पहले पहल दार्शनिक और बुद्धिजीवी के रूप में आये हैं, बाद में कहानीकार। जैनेंद्र, प्रेमचन्द युग और उसके बाद की नई कहानी की सेतु है। प्रेमचन्द अपने अल्पायु में जिस सामाजिक जीवन चित्रण अधूरा छोड़ चला गया, उसको जैनेंद्र कुमार ने पूरा किया है।

जैनेंद्र कुमार की कहानी व्यक्ति-मन के आंतरिक भाव चित्र है। उनमें समाज के चित्रण गौण है, मुख्य है वैयक्तिक चित्रण। वे व्यक्ति के मन को सूक्ष्म से सूक्ष्मता के साथ परखते हैं और अंत में निष्कर्ष पाठक-समक्ष पेश करते हैं। यह सच है कि व्यक्ति के जीवन में जितनी बातें प्रकट हो, उससे ज्यादा उसमें अप्रत्यक्ष रहता है। जैनेंद्र उसका खोजबीन मनोविश्लेषण पद्धति द्वारा करते हैं।

जैनेंद्र कुमार हिन्दी कहानी के सर्वोच्च मनोवैज्ञानिक कहानीकार है। उन्होंने कहानी रचना-प्रक्रिया के लिए मनोविज्ञान का जितना सहारा लिया है, उतना और किसी ने नहीं लिया है। उन्हें मानव मन संशोधन करने को मनोविज्ञान एक उपकरण रहा था। इधर-उधर फैली हुई छोटी-छोटी घटनाओं को एकजुट करने में जैनेंद्र कुमार सिद्धहस्त हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में वातावरण निर्माण में कम ध्यान रखा है, वे ज्यादा पात्रों के पीछे दौड़ते प्रतीत होते हैं। लगता है कि कहानियों में कहानीकार मुख्य पात्र के साथ सहयात्रा करते हैं।

भगवान बुद्ध के करुणा मनोभाव, गांधीजी के सत्य-अहिंसा सिद्धांत आदि के साथ-साथ दार्शनिकता एवं संस्कृति की महत्ता भी जैनेंद्र में उपलब्ध है। जैनेंद्र प्रगतिशील-क्रांतिकारी रचनाकार होने के कारण उनमें परंपरागत रीति-रिवाज़ का अभाव है। उन्हें निःसंदेह मानव पक्षपाती कहानीकार कह सकते हैं।

जैनेंद्र की कहानी की रीढ़ उसकी अलौकिकता एवं मनोवैज्ञानिकता है। मनोवैज्ञानिक भाव भूमि की ओर पाठक को ले जाने में उन्हें अपार एवं अपूर्व क्षमता है। उनकी खेल नामक कहानी इसका सबूत है। जिसकी मनोहर और सुरबाला में उन्होंने जितना मनोविज्ञान फूँका है, यह और किसी लेखक को संभव नहीं है।

पहले कह चुका है कि जैनेंद्र कुमार मनोवैज्ञानिकता की नूतन पद्धति के प्रयोक्ता है। वे मनोविज्ञान का प्रयोग स्थूल रूप में नहीं, अत्यंत सूक्षम रूप में किया है। जैनेंद्र अपनी कहानी में मनुष्य के मन की गूढ़ से गूढ़तम रहस्यों को उद्‌घाटित कर उसका विश्लेषण करते समय पाठक उससे अनभिज्ञ नहीं रहता है।

जैनेंद्र की कहानियों में मनोविज्ञान के साथ दार्शनिकता भी अंतर्लीन है। 'ईनाम', 'मास्टरजी' जैसी अपूर्व कहानियों में उन्होंने दार्शनिकता को यथार्थवाद से संजोए हैं। सशक्त सूक्ष्मता, अपार कौशल, अद्‌भुत सरलता, दार्शनिकता, मानवीय दृष्टि कोण आदि उनमें जोरों पर है।

जैनेंद्र का वस्तु निर्माण आश्चर्यजनक है। उनकी कथानक मानव हृदय में तत्क्षण विलय पा सकती है। स्त्री-पुरुष के मानसिक तनाव, कुंडा, मोह, मोह भंग, मनुष्य की छोटी-छोटी विकृतियाँ, परंपरा के टकराहट आदि अनेक महत्वपूर्ण घटनाएँ उनकी कहानी को सजीव बना देता है। इसलिए शब्द शिल्पी प्रेमचन्द ने जैनेंद्र को भारत का गोर्की कहा है।

जैनेंद्र कुमार ने लगभग 200 कहानियाँ लिखी है। यह जैनेंद्र की श्रेष्ठ कहानियाँ (आठ भाग) शीर्षक संग्रह में संकलित है। उनका पहला कहानी संग्रह 'फाँसी' का प्रकाशन सन् 1927 में हुआ था। 'पाजेब', 'फाँसी', 'दो चिड़ियाँ', 'ध्रुव यात्रा', 'एक रात', 'वातायन', 'नीलम देश की राजकुमारी', 'जैनेंद्र की कहानियाँ' (दस भाग), 'मेरी प्रिय कहानियाँ', 'नई कहानियाँ', 'स्पर्द्धा', 'एक दिन तथा एक रात' आदि जैनेंद्र कुमार के कहानी संग्रह है।

अमरकांत

अमरकान्त की प्रसिद्धि 'नयी कहानी' की प्रतिष्ठा के साथ ही हुई थी। अमरकान्त के कहानी-संग्रह हैं- 'जिन्दगी और जोंक', 'देश के लोग', 'मौत का नगर', 'मित्र मिलन', 'कुहासा', 'एक धनी व्यक्ति का बयान' (1997 ई०), 'सुख और दुःख का साथ' (2002 ई०)- प्रकाशित हैं। तीन कहानियों- 'जिन्दगी और जोंक', 'दोपहर का भोजन', 'डिप्टी कलक्टरी'- की विशेष चर्चा हुई है। अमरकान्त ने मुख्य रूप से निम्न मध्यवर्ग के जीवन-संदर्भो से अपनी कहानियों की सामग्री ली है। अमरकान्त की कहानियों की स्थितियाँ एक के बाद एक सहज रूप सामने आती हैं। आपकी भाषा जीवन-यथार्थ के अनुकूल होती है। इसलिए

कहानी का कथ्य पाठक के मन पर सीधा प्रभाव डालता है।

यशपाल

यशपाल प्रेमचन्द के सामाजिक यथार्थ को मार्क्सवादी दृष्टि कोण में प्रस्तुत किया गया महान कहानीकार है। यशपाल को सामाजिक यथार्थवादी कहानीकार कहते है। शोषण, भूख, अन्याय, अत्याचार, उत्पीड़न आदि सब उनकी कहानियों का विषय बना है।

यशपाल का जन्म 3 दिसंबर 1903 को पंजाब के फिरोजपुर छावनी में हुआ था। लाहौर नेशनल कॉलेज में पढ़ते समय भगतसिंह, सुखदेव, चंद्रशेखर आजाद जैसे देश स्नेही क्रांतिकारियों के संपर्क में आकर वे नौजवान भारत सभा से जुड़े गये। स्वतंत्रता संग्राम के सिलसिले में उन्होंने कई साल जेल की यातनाएँ सहन करने पड़े। लाहौर केंद्रीय जेल में विप्लव कन्या प्रकाशवती कपूर से हुई उनकी शादी इतिहास की अपूर्व घटनाओं में एक है।

'पिंजड़े की उड़ान' 1939 में प्रकाशित यशपाल का चर्चित कहानी संग्रह है। 'धर्मयुद्ध', 'पिंजरे की उड़ान', 'सच बोलने की भूल', 'फूलों का कुर्ता', 'ज्ञानदान', 'भस्मावृत्त', 'चिनगारी' आदि यशपाल के प्रमुख कहानी-संग्रह है।

यशपाल असामान्य प्रतिभाशाली है। सन् 1940 से 1976 तक उनका 16 कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी मृत्यु के पश्चात प्रकाशित संग्रह में 206 कहानियाँ संकलित हैं। इसके सिवा उन्होंने कई श्रेष्ठ उपन्यास, नाटक, एकांकी, निबंध आदि भी लिखकर अमरत्व पा चुके हैं। यशपाल 'विप्लव' नामक मासिका के प्रकाशक और संपादक रहे हैं। सन् 1970 में उन्हें पद्मभूषण उपाधि मिला है।

महीप सिंह

महीप सिंह 'सचेतन कहानी' आन्दोलन के पुरस्कर्ता के रूप में ख्यात हैं। अब तक महीप सिंह के कई संग्रह प्रकाशित हैं- 'सुबह के फूल' (1959 ई०), 'उजाले के उल्लू' (1964 ई०), 'घिराव' (1968 ई०), 'कुछ और कितना' (1973 ई०), 'कितने सम्बन्ध' (1979 ई०), 'दिल्ली कहाँ है' (1985 ई०), 'धूप की उँगलियों के निशान' (1992 ई०), 'सहमे हुए' (1998 ई०), 'ऐसा ही है' (2002 ई०) आदि। अब उनकी समग्र कहानियाँ तीन खण्डों में प्रकाशित हो गया है। पहला खण्ड 'सुबह की महक', दूसरा 'क्षणों का संकट', तीसरा 'सुबह का सन्नाटा' (2000 ई०) में।

महानगरीय जीवन की यांत्रिकता, मानवीय रिश्तों में आनेवाले बदलाव और उसकी पीड़ा, जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में व्याप्त भ्रष्टाचार, स्त्री-पुरुष के सहज यौन आकर्षण, दाम्पत्यजीवन की विसंगतियाँ और तनाव, साम्प्रदायिक संकीर्णता का विरोध, मानवीय मूल्यों के ह्रास और बढ़ती हुई अमानवीयता आदि अनेक स्थितियों और मनोवृत्तियों का चित्रण महीप सिंह ने एक सजग रचनाकार के रूप में किया है।

मोहन राकेश

मोहन राकेश 'नयीकहानी' के प्रवर्तकों में से एक हैं। आपकी कहानियों के कुल पाँच संग्रह प्रकाशित हुए हैं- 'इन्सान के खंडहर' (1950 ई०), 'नये बादल' (1957 ई०), 'जानवर और जानवर' (1958 ई०), 'एक और जिन्दगी' (1961 ई०), 'फौलाद का आकाश' (1966 ई०)- आदि। इन सभी कहानियों का एक संग्रह 1972 ई० में 'मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। सन् 1984 ई में इसी संग्रह में उनकी कुछ अप्रकाशित कहानियाँ भी सम्मिलित कर ली गयीं। मोहन राकेश ने व्यवस्था के खोखलेपन पर प्रहार भी किया है और विभाजन की त्रासदी का चित्रण भी। महानगरीय जिन्दगी की यांत्रिकता और उसके दबाव से व्यक्ति के अकेले पड़ते जाने की मानसिकता का चित्रण मोहन राकेश ने बड़ी सूक्ष्मता से किया है। इसी स्तर पर आपकी कहानियाँ आधुनिकताबोध की कहानियाँ मानी गयी हैं।

राजेन्द्र यादव

राजेन्द्र यादव 'नयीकहानी' के उन्नायकों में हैं। राजेन्द्र यादव की कहानियों के नौ संग्रह प्रकाशित हैं- 'देवताओं की मूर्तियाँ' (1952 ई०), 'खेल खिलौने' (1954 ई०), 'जहाँ लक्ष्मी कैद है' (1957 ई०), 'अभिमन्यु की आत्महत्या' (1959 ई०), 'छोटे-छोटे ताजमहल' (1962 ई०),। 'किनारे से किनारे तक' (1963 ई०), 'टूटना' (1966 ई०), 'अपने पार' (1968 ई०), 'ढोल और अन्य कहानियाँ' (1972 ई०), 'हासिल तथा अन्य कहानियाँ' (2006 ई०) आदि। राजेन्द्र यादव ने अपनी कहानियों में मध्यवर्ग के जीवन में बनते-बिगड़ते, जुड़ते-टूटते रिश्तों और उनसे उत्पन्न तनाव को महत्त्व दिया है। 'अपने पार', 'अनुपस्थित सम्बोधन', 'मेहमान' आदि कहानियों में मनोवैज्ञानिक सूत्र आसानी से ढूंढे जा सकते हैं।

Critical Overview / अवलोकन

इन आन्दोलनों से कहानी की जीवन्तता बनी रही। कहानी-साहित्य के विकास को आन्दोलनों से अलग करके देखा

जाय, तो उसमें परिवर्तन के तीन चरण स्पष्ट लक्षित होंगे। विकास का प्रथम चरण में रचनाकारों अनुभव की प्रामाणिकता और भोगे हुए यथार्थ को अधिक महत्त्व दिया है। दूसरा चरण में पहले दौर में स्थापित रूढ़ियों का विरोध किया गया है। मूल्यों को जीवन-स्थितियों के व्यापक संदर्भ से जोड़ने की कोशिश की गयी है। विकास के तीसरे चरण में स्थितियों के वस्तुपरक विश्लेषण की प्रवृत्ति बढ़ी है। रचना को वैचारिक आधार से समृद्ध किया गया है। सब मिलाकर देखा जाय, तो उपन्यासों की तुलना में कहानी-साहित्य अधिक जीवन्त और प्रेरणादायक दिखाई देगा।

Recap / पुनरावृत्ति

- आधुनिक हिन्दी के कहानीकारों में अज्ञेय का स्थान शीर्षस्थ है
- अज्ञेय स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेकर कई साल कारावास में पड़े थे
- 'छाया' (1931), 'कोठरी की बात' (1934), 'दरोगा अमीनचंद' (1938), 'नवंबर दस' (1957) आदि अज्ञेय की कहानियों हैं
- असगर वजाहत, मार्कंडेय, प्रदीप मांडव, नमिता सिंह तथा सूरज पालीवाल आदि जनवादी कहानी का प्रवर्तक है
- सक्रिय कहानीकारों में सुरेंद्र कुमार, विवेक निझावन, रमेश बतरा तथा सच्चिदानंद धूमकेतु आदि मुख्य हैं
- डॉ. महीप सिंह सचेतन कहानी का प्रवर्तक है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सचेतन कहानी का प्रवर्तक कौन है?
2. तीन सक्रिय कहानीकारों का नाम स्पष्ट कीजिए?
3. अज्ञेय की कहानियों का नाम लिखिए?
4. जनवादी कहानी का प्रवर्तक कौन है?
5. छाया कहानी कब लिखी?
6. 'कहानी' नाम की पत्रिका का प्रकाशन कब प्रारम्भ हुआ?
7. 'जिन्दगी और जोंक' किसकी कहानी-संग्रह है?
8. यशपाल का जन्म कब और कहाँ हुआ था?

Answers/ उत्तर

1. डॉ. महीप सिंह।
2. सुरेंद्र कुमार, विवेक निझावन, रमेश बतरा।
3. छाया (1931), कोठरी की बात (1934), दरोगा अमीनचंद (1938)
4. असगर वजाहत, मार्कंडेय, प्रदीप मांडव, नमिता सिंह तथा सूरज पालीवाल
5. 1931
6. सन् 1938 अक्टूबर से
7. अमरकान्त के
8. 1903 को पंजाब के फिरोजपुर में

Assignments/ प्रदत्त कार्य

- आधुनिक कहानी की विकास यात्रा और कहानी आंदोलन।
- सचेतन कहानी आंदोलन और महीप सिंह का योगदान?
- सक्रिय कहानी आंदोलन की विशेषता क्या है?
- अकहानी आंदोलन के बारे में टिप्पणी लिखें।
- 'कहानीकार मोहन राकेश' के बारे में टिप्पणी लिखें।

SGOU

इकाई 4

हिन्दी के महिला कथाकारः- मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, कृष्णा अग्निहोत्री, उषाप्रियंवदा, चित्रा मुद्‌गल, नासिरा शर्मा, मधु कांकरिया, अनामिका, अलका सरावगी, मृदुला गर्ग, ममता कालिया, क्षमा शर्मा, मैत्रेयी पुष्पा (सामान्य परिचय)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- हिन्दी के महिला कथाकार की जानकारी प्राप्त करता है
- मन्नू भंडारी की कहानी कला का सामन्य परिचय प्राप्त करता है
- चित्रामुद्‌गल की कहानी कला का सामन्य परिचय प्राप्त करता है
- नासिरा शर्मा की कहानी कला का सामन्य परिचय प्राप्त करता है
- ममता कालिया की कहानी कला का सामन्य परिचय प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

भारतीय साहित्य जगत में आधुनिक युग के प्रारंभ से ही नारी लेखन को प्रधानता दी जाने लगी। बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान अपनी रचना धर्मिता के साथ उभरकर आई। इसके प्रभाव स्वरूप स्वाधीनता के पश्चात साहित्य जगत में विशेषतः कथा साहित्य के क्षेत्र में अनेक नवोदित महिला रचनाकारों ने अपना विशेष योगदान दिया। इन्होंने नारी मुक्ति अभियान को अधिक महत्व दिया। इसके साथ-साथ अस्मिता के संघर्ष से शुरू हुए लेखन में मानव जीवन के सभी पहलुओं पर भी प्रकाश डाला गया। इन सभी में मूल रूप से नारी जीवन को ही प्रधानता दी गई। जिसमें नारी चेतना, शोषण, आपसी भेदभाव, आदि सवालों के साथ दलित आदिवासी एवं मज़दूर समाज के वर्ण वर्ग संबंधी मज़दूर या भूमिहीन किसान औरतें आदि के चित्र लेखिकाओं की कलम से उभरकर आई।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

नारी विमर्श, असहाय नारियों की दरिद्रता, नारियों की संघर्ष और मानसिकता, आवेग-प्रधान कहानियाँ, परम्परा से विच्छिन्न आधुनिक नारि

Discussion / चर्चा

भारतीय नारी विमर्श पश्चिम के नारीवाद से प्रेरित है। नारी विमर्श का लक्ष्य मुख्यतः नारी को उसकी प्रगतिशीलता से परिचित करवा कर उन्हें अपने हक और अधिकारों के प्रति जागरूक बनाना है।

इसी दिशा की ओर कदम बढाती हुई महिला उपन्यासकारों ने अपनी कलम को इस दिशा की ओर मोड़ा।

हिन्दी साहित्य में महिला साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय नारी के विभिन्न समस्याओं को स्वर प्रदान किया। अपनी लेखनी के माध्यम से अनेक महिला साहित्यकारों ने परंपरा एवं रूढ़ियों को तोड़ने की कोशिश की।

मन्नू भण्डारी

मन्नू भण्डारी को 'नयीकहानी' के प्रकाशन के साथ विशेष ख्याति मिली थी। 'मैं हार गई' (1957 ई०), 'यही सच है' (1966 ई०), 'एक प्लेट सैलाब' (1968 ई०), 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' (1968 ई०), 'त्रिशंकु' (1978 ई०) आदि आपके प्रसिद्ध कहानी-संग्रह हैं। मन्नू भण्डारी ने अपनी कुछ कहानियों में मजदूर वर्ग की असहाय नारियों की दरिद्रता, संघर्ष और मानसिकता का बड़ा ही मार्मिक चित्र खींचा है। रानी माँ का चबूतरा ऐसी ही मार्मिक कहानी है।

कृष्णा सोबती

कृष्णा सोबती अपनी लम्बी कहानी 'मित्रो मरजानी' (इसे लघु उपन्यास भी कहा गया है) के प्रकाशन के साथ हिन्दी-कथा साहित्य में सहसा चर्चित हो उठी थीं। 'बादलों के घेरे' (1980 ई०) आपका एक और कहानी-संग्रह है। इसकी प्रायः सभी कहानियाँ 'नयीकहानी' के दौर की हैं। इसकी एक कहानी 'सिक्का बदल गया' भारत-पाक विभाजन के दर्द को उसकी पूरी- गहनता में उकेरने वाली कहानी है। आपकी कहानियाँ मानवीय मूल्यों के टूटने के दर्द की कहानियाँ हैं। परिवेश का यथार्थ चित्रण, पंजाब की धरती की गंध तथा पात्रों की खुली साहसिक मानसिकता आपकी कहानियों की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

कृष्णा अग्निहोत्री

कृष्णा अग्निहोत्री के कई कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं- 'टीन के घेरे' (1970 ई०), 'गलियारे' (1974 ई०) 'याही बनारसी रंग बा' (1983 ई०), 'जिन्दा आदमी' (1986 ई०), 'जै सियाराम' (1993 ई०), 'सर्पदंश' (1997 ई०), 'अपने-अपने कुरुक्षेत्र' (2001 ई०), 'यह क्या जगह है दोस्तों' (2007 ई०), 'जीना मरना' (2010 ई०) आदि। कृष्णा अग्निहोत्री की कहानियाँ मूलतः अनुभव-प्रसूत हैं। उनके पीछे किसी विचारधारा का अनुशासन नहीं है। आवेग-प्रधान होने के कारण आपकी कहानियों का शिल्प-पक्ष दुर्बल हो गया है। आपकी कहानियों में भोगा हुआ यथार्थ उभर आता है।

उषाप्रियंवदा

उषा प्रियंवदा नयीकहानी के दौर की बहुचर्चित कहानीकार हैं। आपकी कहानी 'वापसी' एक समय आलोचकों के मन-मस्तिष्क पर छा गयी थी। इसमें अवकाश ग्रहण करने के बाद गजाधर बाबू का अपने ही घर में फालतू या पराया हो जाने का बोध और उससे उत्पन्न पीड़ा ने पाठकों को विचलित कर दिया था। आपके कई कहानी-संग्रह प्रकाशित हैं- 'जिन्दगी और गुलाब के फूल' (1961 ई०), 'फिर बसन्त आया' (1961 ई०), 'एक दूसरा' (1966 ई०), 'कितना बड़ा झूठ' (1972 ई०) आदि। आपकी अधिकांश कहानियाँ ऐसी शिक्षित युवतियों की कहानियाँ हैं, जो स्वच्छन्द जीवन व्यतीत करते हैं।

चित्रा मुद्‌गल

चित्रा मुद्‌गल के प्रकाशित कहानी-संग्रह हैं- 'जहर ठहरा हुआ' (1980 ई०), 'लाक्षागृह' (1982 ई०), 'अपनी वापसी', (1983 ई०), 'इस हमाम में, एवं ग्यारह लम्बी कहानियाँ' (1987 ई०), 'जगदम्बाबाबू गाँव आ रहे हैं' (1992 ई०), 'जिनावर' (1996 ई०), 'भूख' (2001 ई०) लपटें (2002 ई०) आदि। चित्रा मुद्‌गल की कहानियों में आज की बिखरी हुई जिन्दगी की तसवीर देखी जा सकती है।

नासिरा शर्मा

नासिरा शर्मा के आठ कहानी-संग्रह- 'शामी कागज' (1980 ई०), 'पत्थर गली' (1986 ई०), 'संगसार' (1993 ई०), 'इब्ने मरियम' (1994 ई०), 'सबीना के चालीस चोर' (1997 ई०), 'खुदा की वापसी' (1998 ई०), 'इनसानी नस्ल' (2001 ई०), 'दूसरा ताजमहल' (2002 ई०)- प्रकाशित हैं। नासिरा शर्मा देश-काल, धर्म, जाति, सम्प्रदाय के भेदों से ऊपर उठकर एक दिल और एक दिमाग वाले इनसान के दुःख-दर्द, उत्थान-पतन को आकार देने वाली कहानीकार हैं। हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी, फारसी आदि कई भाषाओं की मर्मज्ञ नासिरा शर्मा का रचना-संसार व्यापक मानवीय संवेदना का संसार है।

मधु कांकरिया

मधु कांकरिया के तीन कहानी संग्रह- 'अन्तहीन मरुस्थल' (1999 ई०), 'बीते हुए' (2004 ई०), 'और अन्त में ईशु' (2006 ई०) प्रकाशित हैं। वर्तमान जीवन-सन्दर्भों के अनेक आयामों को उजागर करने वाली आपकी कहानियाँ पाठक की सोच को रचनात्मक दिशा प्रदान करने वाली हैं।

अलका सरावगी

अलका सरावगी परम्परा से विच्छिन्न आधुनिक नारियों की पीड़ा को रेखांकित करने के लिए जानी जाती हैं। आपके दो कहानी-संग्रह- 'कहानी की तलाश में' (1995 ई०), 'दूसरी कहानी' (2002)- प्रकाशित हैं। वस्तुतः अलका सरावगी की ख्याति के आधार उनके उपन्यास हैं, कहानियाँ नहीं। कहानी-लेखिका के रूप में आप अपने प्रयोग-काल से ही गुजर रही हैं।

मृदुला गर्ग

मृदुला गर्ग प्रेम और काम-सम्बन्धों का आधुनिक दृष्टि से खुला विश्लेषण करने वाली एक सशक्त कहानीकार के रूप में चर्चित हैं। 'कितनी कैदें' (1975 ई०), 'टुकड़ा टुकड़ा आदमी' (1977 ई०), 'डेफोडिल जल रहे हैं' (1978 ई०), 'ग्लेशियर से' (1980 ई०), 'उर्फ सैम' (1986 ई०), 'समागम' (1996 ई०), 'मेरे देश की मिट्टी अहा' (2001 ई०) आदि आपके प्रकाशित कहानी-संग्रह हैं। इधर आपकी कहानियों में हास्य, व्यंग्य और फंतासी की प्रवृत्ति बढ़ी है। मृदुला गर्ग की कहानियाँ बहुत कुछ आपके जीवनानुभव और सोच की कहानियाँ हैं।

ममता कालिया

ममता कालिया यथार्थधर्मी कहानी लेखिका हैं। आपकी कहानियों में यह बात विशेष रूप से उभर कर सामने आती है कि आज भी नारी उत्पीड़न-मुक्त नहीं हुई है। उसके जीवन-संघर्ष के संदर्भ और क्षेत्र बढ़ गये हैं, किन्तु उसके कष्टों का अन्त नहीं हुआ है। 'छुटकारा' (1969 ई०), 'सीट नं 6' (1978 ई०), 'एक अदद औरत' (1979 ई०), 'प्रतिदिन' (1983 ई०), 'उसका यौवन' (1985 ई०), 'बोलने वाली औरत' (2000 ई०), 'मुखौटा' (2002 ई०), 'निर्मोही' (2006 ई०), 'खुदकिस्मत' (2010 ई०) आदि आपके प्रसिद्ध कहानी-संग्रह हैं।

मैत्रेयी पुष्पा

मैत्रेयी पुष्पा 'इदन्नमम' और 'चाक' जैसे उपन्यासों के माध्यम से सहसा अपनी विशिष्ट पहचान कायम कर लेने वाली कथा-लेखिका हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने कहानियों के क्षेत्र में भी अच्छी ख्याति अर्जित कर ली है। अब तक आपके तीन कहानी-संग्रह- 'चिन्हार' (1991 ई०), 'ललमनियाँ' (1996 ई०), 'गोमा हँसती है' (1998 ई०)- प्रकाशित हो चुके हैं। मैत्रेयी की कहानियों में यों तो समकालीन जीवन यथार्थ के विविध परिदृश्य उभरते हैं और हम संक्रमणकालीन समाज के अन्तर्विरोधों का साक्षात्कार करते हैं। 'चिन्हार' की 'सरजू', 'फैसला' की 'वसुमती', 'सिस्टर' की 'डोरोथी', 'सेंध' की 'कलावती', 'अब फूल नहीं खिलते' की 'झरना', 'ललमनियाँ' की 'मौहरो', 'गोमा हँसती है' की 'गोमा' (गोमती) सभी हमें

Critical Overview / अवलोकन

कहानीकारों की रचना-दृष्टि अधिक वैज्ञानिक और सूक्ष्म हो गयी है। हिन्दी-कहानी अब प्रेमचन्द-युग से बहुत आगे निकल आयी है। प्रेमचन्द के बाद जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, यशपाल, 'अश्क' आदि लेखकों ने उसे नयी जमीन दी थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अनेक आन्दोलनों के दौर से गुजरती हुई अब वह यथार्थ से सीधा साक्षात्कार करने में समर्थ है। आज का कहानीकार जानता है कि औद्योगिक सभ्यता, पूँजीवादी संस्कृति और यंत्रीकरण के बढ़ते प्रभाव और दबाव के बीच मानवीय संवदेना और मूल्यों की रक्षा करने का उसका दायित्व आसान नहीं रह गया है। अपने अनुभव और ज्ञान की इस पूँजी के बल पर आगे बढ़ते हुए महिला कहानीकार के हाथों कहानी का भविष्य सुरक्षित है।

Recap / पुनरावृत्ति

- नासिरा शर्मा की कहानी सामाजिक यथार्थ का दस्तवेज है
- नई कहानी की महिला कथाकारों में उषा प्रियंवदा शीर्षस्थ है
- ज़िंदगी और गुलाब के फूल, मेरी प्रिय कहानियाँ, वनवास, एक कोई दूसरा, कितना बड़ा झूठ, संपूर्ण कहानियाँ, शून्य आदि उषा प्रियंवदा के कहानी संग्रह है
- वापसी, मछलियाँ और प्रतिध्वनि आदि उषा प्रियंवदा के कहानियाँ हैं

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. नासिरा शर्मा कहानी-संग्रह- 'शामी कागज' किसका है?
2. 'सबीना के चालीस चोर' किस प्रकार की रचना है?
3. पत्थर गली किसकी कहानी है?
4. 'टुकड़ा टुकड़ा आदमी' कहानी संग्रह किसका है?
5. ममता कालिया की एक कहनी का नाम लिखिए?
6. मैत्रेयी पुष्पा की 'इदन्नमम' किस प्रकार की रचना है?
7. भारतीय नारी विमर्श किस से प्रेरित है?
8. हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी, फारसी आदि कई भाषाओं की मर्मज्ञ साठोत्तर महिला कहानीकार कौन है?

Answers/ उत्तर

1. नासिरा शर्मा
2. कहानी।
3. नासिरा शर्मा की
4. मृदुला गर्ग की
5. छुटकारा
6. कहानी
7. पश्चिम के नारीवाद से
8. नासिरा शर्मा

Assignments/ प्रदत्त कार्य

- नासिरा शर्मा की कहनियों की विशेषतायें।
- महिला कहानिकारों की कहानियों में चित्रित नारी समस्या।
- नासिरा शर्मा की कहानी 'खुदा की वापसी' की नायिका की विशेषता क्या है?
- ममता कालिया की कहनियों की विशेषता क्या है?
- कहानीकार मैत्रेयी पुष्पा पर टिप्पणी लिखिए।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Reference सन्दर्भ ग्रंथ सूची

संदर्भ ग्रंथ

1. मेरी प्रिय कहानियाँ - भीष्म साहनी।
2. युग और साहित्य - शान्तिप्रिय द्विवेदी।
3. समकालीन कहानी, दिशा और दृष्टि - श्रीपतराय।
4. साठोत्तरी हिन्दी कहानी - डॉ. जितेन्द्र वत्स।
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।

अधिक अध्ययन के लिए -

1. निर्मला - प्रेमचन्द।
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
3. प्रेमचन्द - डॉ. रामविलास शर्मा।
4. प्रेमचन्द एक साहित्यिक विवेचन - डॉ. नन्ददुलारे वाजपेयी।
5. प्रेमचन्द और उनका युग - डॉ. रामविलास शर्मा।
6. प्रेमचन्द और भारतीय समाज - डॉ. नामवर सिंह।
7. प्रेमचन्द एक तलाश - श्रीराम त्रिपाठी।
8. प्रेमचन्द विरासत का सवाल - डॉ. शिवकुमार मिश्र।
9. मेरी प्रिय कहानियाँ - भीष्म साहनी।
10. युग और साहित्य - शान्तिप्रिय द्विवेदी।
11. समकालीन कहानी, दिशा और दृष्टि - श्रीपतराय।
12. साठोत्तरी हिन्दी कहानी - डॉ. जितेन्द्र वत्स।
13. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
14. कहानी पच्चीस साल की - राजकुमार।
15. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास - रामस्वरूप चतुर्वेदी।
16. समकालीन कहानी का पहचान - मधुरेश।
17. कहानी का वर्तमान - जानकी प्रसाद शर्मा।
18. समकालीन कहानी का समाज शास्त्र - देवेन्द्र चौबे।
19. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र।
20. हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास - हजारी प्रसाद द्विवेदी।
21. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. कपूर टंडन।
22. हिन्दी साहित्य का समग्र इतिहास - डॉ. रमेशचंद्र शर्मा।

BLOCK - 05

नाटक व एकांकी साहित्य

-1942 के बाद

इकाई 1

1942 के बाद के हिन्दी नाटक का विकास

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- हिन्दी साहित्य में 1942 बाद के नाटक के उद्‌भव और विकास से परिचय प्राप्त करता है
- हिन्दी साहित्य में 1942 के बाद के प्रमुख नाटककारों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करता है
- हिन्दी साहित्य में 1942 के बाद के नाटक में चित्रित सामाजिक स्थिति से परिचय प्राप्त करता है
- स्वातन्त्र्योत्तर युग के हिन्दी नाटकों की प्रगति से परिचय प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

हिन्दी साहित्य में 1942 बाद के नाटकों में आधुनिक यथार्थवादी धारा का प्रादुर्भाव हुआ। प्राचीन सांस्कृतिक आदर्शों के द्वारा राष्ट्रीयता का उद्‌घोष होने लगा। उसके साथ-साथ समन्वय और सन्तुलन की भावना का भी आविर्भाव होने लगा। हिन्दी-नाटक के विषय और शिल्प, दोनों में बदलाव भी आने लगा।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

- अधिकाधिक यथार्थ की ओर उन्मुखता।
- पुनरुत्थान एवं पुनर्जागरण की लहर।
- पुनर्जागरण की शक्तियों का प्रभाव।
- चेतना के स्तर पर भावुक, आवेशात्मक, आदर्शवादी, प्रवृत्तियाँ।
- नैतिकता के कठोर बन्धन।
- वैचारिक धरातल पर प्रकृतवाद सुलभ जीवन के क्रांतिव्यंजक सम्बन्ध।
- स्वतंत्रता के बाद सामाजिक यथार्थ और समस्या के प्रति जागरूकता।

Discussion / चर्चा

1942 के बाद के हिन्दी नाटक अधिकाधिक यथार्थ की ओर उन्मुख दिखाई पड़ते हैं। परन्तु भारत के सामने एक विशिष्ट उद्देश्य था राष्ट्र की स्वाधीनता की प्राप्ति और विदेशी शासकों के अत्याचारों से मुक्ति प्राप्त करना, फलस्वरूप व्यापक स्तर पर पुनरुत्थान एवं पुनर्जागरण की लहर फैल गई। इस समूचे काल में पुनर्जागरण की शक्तियों का प्रभाव होने के कारण चेतना के स्तर पर भावुक, आवेशात्मक, आदर्शवादी, प्रवृत्तियों से आक्रांत होना नाटककारों के लिए स्वाभाविक था। यही कारण है कि प्रसादोत्तर काल तक किंचित परिवर्तनों के साथ सभी रचनाकारों की दृष्टि मूलतः आस्था, मर्यादा एवं गौरव के उच्चादर्शों से मंडित रही। भारतेन्दु ने अपनी अद्‌भुत व्यंग्यशक्ति एवं समाज-विश्लेषण की पैनी दृष्टि से सामाजिक यथार्थ का चित्रण किया। परन्तु उनकी मूल चेतना सुधारवादी आग्रहों का परिणाम होने के कारण आस्थामूलक थी। द्विवेदी युग में भी दो दशकों के अनवरत साहित्यिक अनुशासन आदर्शवादी मर्यादा एवं नैतिकता के कठोर बन्धन के कारण यथार्थ के

स्वर मद्धिम पड़ गए। प्रसाद युगीन नाटकों की मूलधारा भी राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक आदर्श चेतना से सम्बन्धित थी परन्तु खल पात्रों की चारित्रिक दुर्बलताओं तथा सद्पात्रों की जीवन चरित्र-सृष्टि में यथार्थ चेतना को नकारा नहीं जा सकता। 19वीं शताब्दी में पश्चिमी नाट्य साहित्य में इब्सन् एवं शॉ द्वारा प्रवर्तित यथार्थवादी नाट्यान्दोलन ने भारतीय नाट्य साहित्य की गतिविधियों को भी प्रेरित एवं प्रभावित किया। लक्ष्मी नारायण मिश्र ने समस्या प्रधान नाटकों का सूत्रपात करके बुद्धवादी यथार्थ को प्रतिष्ठित करने का दावा किया है। परन्तु सिद्धांत एवं प्रयोग में पर्याप्त अन्तर पाते हुए हम देखते हैं कि एक ओर वैचारिक धरातल पर प्रकृतवाद सुलभ जीवन के क्रांतिव्यंजक सम्बन्ध उभरते हैं, वहीं दूसरी ओर समाधान खोजते हुए परम्परा के प्रति भावुकता-सिक्त दृष्टि भी पाई जाती है। 'भावात्मकता और बौद्धकता' का घपला होने के कारण उनके नाटकों का मूल स्वर यथार्थ से बिखर जाता है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व अन्य युगीन सामाजिक समस्याओं के साथ राष्ट्र की मुक्ति का प्रश्न सभी नाटककारों की चेतना पर छाया हुआ था। स्वाधीन भारत से उन्हें अनेक प्रकार की मीठी अपेक्षाएँ थीं, परन्तु विडम्बना यह है कि स्वाधीनता प्राप्ति के बाद जीवन समस्याओं से आक्रांत, बोझिल और जटिल हो उठा। परिवेश के दबाव से ही यथार्थ बोध की शुरुआत हुई।

आलोच्य-युग में कुछ पुराने खेमे के नाटककार यथा:- सेठ गोबिन्ददास, लक्ष्मी नारायण मिश्र, हरिकृष्ण प्रेमी, गोविन्द वल्लभ पंत, उदयशंकर भट्ट, जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द' आदि नाट्य साहित्य को समृद्ध करते रहे। सेठ गोविन्ददास के 'कर्ण' (1942), शशि गुप्त (1942) आदि पौराणिक नाटकों और 'हिंसा और अहिंसा' (1940), सन्तोष कहाँ (1941) आदि सामाजिक नाटकों की रचना की। हरिकृष्ण प्रेमी के 'छाया' (1941) और बन्धक (1940), सामाजिक नाटक हैं। दोनों नाटकों में आर्थिक शोषण एवं विषमता का यथार्थ मुखरित है। ऐतिहासिक नाटकों में 'आहुति' (1940), स्वप्नभंग (1940), विषपान (194५), साँपों की सृष्टि, उद्धार आदि उल्लेखनीय हैं। 'अमृत-पुत्री' (1978) एक नवीनतम ऐतिहासिक नाटक हैं। गोबिन्द वल्लभ पंत ने आलोच्य युग में 'अन्तःपुर का छिद्र' (1940), 'सिन्दूर बिन्दी' (1946) और 'ययाति' (1951) नाटकों की रचना की। पन्त जी ने 'कला के लिए कला' की भावना से प्रेरित होकर नाटकों की रचना अवश्य की है, किन्तु उनके नाटक उद्देश्य से रहित नहीं हैं। उन्होंने जीवन की गहरी उलझनों एवं समस्याओं को बड़ी सूक्ष्मता से चित्रित किया है। पंत ने यद्यपि प्रसाद-युग की परम्परा का निर्वाह किया है, किन्तु उनके परवर्ती नाटकों में सामाजिक चेतना अधिकाधिक मुखर होती गई है। लक्ष्मीनारायण मिश्र ने 'गरूड़ध्वज' (1945), 'नारद की वीणा', 'वत्सराज' (1950) 'दशाश्वमेघ' (1950), 'वितस्ता की लहरें' (1953), 'जगद-गुरु', चक्रव्यूह (1953), कवि भारतेन्दु (1955), 'मृत्युज्य' (1958) 'चित्रकूट', 'अपराजित', 'धरती का हृदय' आदि नाटकों की रचना की। सभी नाटकों में वर्तमान युग के शिक्षित व्यक्तियों की समस्याओं, उनकी संशयात्मक मनः स्थिति, उनकी कुंठाओं और मानसिक विकृतियों का स्वाभाविक और मनोविश्लेषणात्मक चित्रण किया गया है। उदयशंकर भट्ट के नाटकों में 'राधा' (1961), 'अन्तहीन-अन्त' (1942) 'मुक्तिपथ' (1944) 'शक विजय' (1949), 'कालीदास' (1950) 'मेघदूत' (1950), 'विक्रमोर्वशी' (1950), 'क्रांतिकारी' (1953), 'नया समाज' (1955), पार्वती (1962), 'मत्स्यगंधा' (1976), आदि हैं। भट्ट जी के ऐतिहासिक और पौराणिक नाटकों की मूल प्रेरणा राष्ट्रीयता है। इसमें इतिहास और मिथक के बीच में यथार्थ और समस्या का अहसास भी दिखाई देता है। सामाजिक नाटकों के माध्यम से भट्ट जी ने वर्तमान जीवन के व्यक्तिगत एवं समाजगत संघर्षों एवं समस्याओं का यथार्थ चित्रण किया है। जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द का 'समर्पण' (1950) और 'गौतम नन्द' (1952) ख्याति प्राप्त रचनाएँ हैं। इनके अतिरिक्त कई अन्य साहित्यकारों ने भी नाटक के क्षेत्र में अवतरण किया, किन्तु उन्हें विशेष सफलता नहीं मिली। इनमें बैकुण्ठनाथ दुग्गल, वृन्दावनलाल वर्मा, सीताराम चतुर्वेदी, चतुरसेन शास्त्री, जगन्नाथ प्रसाद मिलिन्द आदि उल्लेखनीय हैं।

इसी काल में स्वतंत्रता के बाद हिन्दी नाटक में परिवर्तन की एक नई स्थिति दिखाई देती है। प्रसादोत्तर नाटक के पहले चरण में यथार्थवादी प्रवृत्ति से अनुप्राणित हुआ और उसके साथ ही समस्यामूलक नाटक का आविर्भाव हुआ। किन्तु स्वतंत्रता के बाद सामाजिक यथार्थ और समस्या के प्रति जागरूकता के साथ-साथ नाटक के क्षेत्र में, कथ्य और शिल्प के कई नए आयाम उभरे। इसके अतिरिक्त स्थूल यथार्थ के प्रति नाटककार के दृष्टिकोण में भी अन्तर आया।

Critical Overview / अवलोकन

स्वतंत्रता के बाद हिन्दी नाटक में परिवर्तन की एक नई स्थिति दिखाई देती है। हिन्दी नाटकों में भावुकता, रसात्मकता और आनन्द के स्थान पर तर्क और बौद्धकता का समावेश

मिलता है। हिन्दी-नाटक के विषय और शिल्प में भी बदलाव आया है। स्वतंत्रता के बाद सामाजिक यथार्थ और समस्या के प्रति जागरूकता के साथ-साथ नाटक के क्षेत्र में, कथ्य और शिल्प के कई नए आयाम उभरते नज़र आता है।

Recap / पुनरावृत्ति

- इस युग के नाटकों में आधुनिक यथार्थवादी धारा का प्रादुर्भाव हो चुका था
- प्राचीन - सांस्कृतिक आदर्शों के द्वारा राष्ट्रीयता का उद्घोष इस युग के नाटककारों का प्रमुख लक्ष्य था
- सांस्कृतिक पुनरुत्थान में प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों और नयी यथार्थवादी चेतना में समन्वय और सन्तुलन परिलक्षित होता है
- हिन्दी नाटकों में भावुकता, रसात्मकता और आनन्द के स्थान पर तर्क और बौद्धिकता का समावेश किया
- बुद्धिवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए भी वे परम्परा के मोह से मुक्त नहीं हो पाए
- युगीन मूल्यगत अन्तर्विरोधी चेतना समान रूप से उनके प्रत्येक नाटकों में देखी जा सकती है
- नाटकों का केन्द्रीय विषय स्त्री-पुरुष सम्बन्ध एवं सेक्स है। राष्ट्रोद्धार, विश्व-प्रेम आदि
- इब्सन की नाट्य पद्धति का अनुसरण कर किसी भी अंक में बाह्यतः कोई दृष्य विभाजन नहीं रखा गया है यद्यपि दृष्य-परिवर्तन की सूचना यत्र-तत्र अवश्य दे दी जाती है
- प्रेम, विवाह और सेक्स के क्षेत्र में विघटित जीवन मूल्यों की अभिव्यक्ति के लिए शिल्पगत नवीनता को अपनाया है
- हिन्दी नाटक के विषय और शिल्प, दोनों में बदलाव आया है
- वस्तु विन्यास की दृष्टि से इनके नाटक सुगठित, स्वाभाविक, सन्तुलित एवं चुस्त बन पड़े हैं
- उच्च-मध्य वर्गीय समाज की रूढ़ियों, दुर्बलताओं, उनके जीवन में व्याप्त 'कृत्रिमता', दिखावे और ढोंग का पर्दाफाश करना उनके नाटकों का मूलभूत कथ्य है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 1942 बाद के नाटककारों का प्रमुख लक्ष्य क्या था?
2. प्रसादोत्तर नाटक के पहले चरण में कौन-सी प्रवृत्ति से अनुप्राणित हुआ है?
3. 'नारद की वीणा' नाटक के रचयिता कौन है?
4. सेठ गोविन्ददास के पौराणिक नाटकों का नाम?
5. आलोच्य-युग के कुछ पुराने खेमे के नाटककार के नाम लिखिए।
6. 'छाया' किसका नाटक है?
7. कला कला के लिए भाव से नाटक लिखने वाला नाटककार कौन थे?
8. 'मेघदूत' के रचनाकार कौन है?

Answers/ उत्तर

1. प्राचीन सांस्कृतिक आदर्शों के द्वारा राष्ट्रीयता का उद्घोष इस युग के नाटककारों का प्रमुख लक्ष्य था।
2. प्रसादोत्तर नाटक के पहले चरण में यथार्थवादी प्रवृत्ति से अनुप्राणित हुआ है।
3. लक्ष्मीनारायण मिश्र
4. 'कर्ण' और 'शशि गुप्त'
5. आलोच्य-युग के पुराने खेमे के नाटककारों में सेठ गोविन्ददास, लक्ष्मी नारायण मिश्र, हरिकृष्ण प्रेमी, गोविन्द वल्लभ पंत, उदयशंकर भट्ट, जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द' आदि प्रमुख है।
6. हरिकृष्ण प्रेमी
7. सुमित्रानंतन पंत
8. उदयशंकर भट्ट

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. समकालीन हिन्दी नाटकों की प्रवृत्तियों से परिचय दीजिये।
2. स्वातन्त्र्योत्तर युग के हिन्दी नाटकों की प्रगति पर पर्चा लिखिए।
3. समझाइए कि सन् 1942 के बाद हिन्दी-नाटक में विषय और शिल्प दोनों में बदलाव आया है।
4. हिन्दी साहित्य में 1942 बाद के नाटकों में आधुनिक यथार्थवादी धारा का प्रादुर्भाव होने लगा, व्यक्त कीजिए।
5. सन् 1942 के बाद हिन्दी नाटकों का केन्द्रीय विषयों पर प्रकाश डालिए।

SGOU

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

इकाई 2

प्रमुख नाटककार मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, जगदीश चन्द्र माथुर, स्वदेश दीपक, प्रताप सहगल, मोहनदास नैमिशराय-(सामान्य परिचय)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 1942 बाद के हिन्दी-नाटक के प्रमुख नाटककारों से परिचय प्राप्त करता है।
- 1942 बाद के हिन्दी-नाटक के प्रमुख नाटककारों की रचनाओं से परिचय प्राप्त करता है।
- 1942 बाद के हिन्दी-नाटकों में अभिव्यक्त सामाजिक-सांस्कृतिक पहलुओं से अवगत होता है।

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

पश्चिम में दो महायुद्धों के बाद नाटक के क्षेत्र में कथ्य और शिल्प के अनेक प्रयोग हुए। इसके साथ ही युद्ध की परिस्थितियों के कारण जीवन मूल्यों में भी जो बड़ा भारी परिवर्तन आया उसकी अभिव्यक्ति भी नाटक में हुई। भारत में समानान्तर सामाजिक परिस्थिति तो नहीं आई किन्तु पश्चिम की विचारधारा का उस पर प्रभाव पड़े बिना न रहा। नई कविता और नई कहानी उससे अनुप्राणित थी ही, हिन्दी नाटक को भी उससे एक दिशा मिली। ऐसी स्थिति में आधुनिक भाव-बोध को उजागर करने का प्रयास हुआ और धर्मवीर भारती, लक्ष्मी नारायण लाल, मोहन राकेश आदि नाटककारों ने उसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

Keywords / मुख्य बिन्दु

‘आषाढ़ का एक दिन’, ‘लहरों के राजहंस’, ‘कोणार्क’ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, मानवीय सत्य की आस्था

Discussion / चर्चा

मोहन राकेश

हिन्दी नाटक विधा को समसामयिक बनाने वाले नाटककार मोहन राकेश का नाम भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और जयशंकर प्रसाद के बाद आदर से लिया जाता है। उनकी जन्म तिथि पर यह आलेख उनके रचना संसार पर विहंगम दृष्टि डालता है। हिन्दी में नाटक विधा को समसामयिक बनाने और नयी दिशा देने वाले प्रसिद्ध नाटककार, निबंधकार और कहानीकार मोहन राकेश का जन्म 8 जनवरी 1925 ई. को पंजाब के अमृतसर में हुआ था।

उनके पिता श्री करमचन्द गुगलानी अधिवक्ता थे तथा साहित्य और कला के प्रेमी थे। जिसका प्रभाव मोहन राकेश के जीवन पर पड़ा। उन्होंने लाहौर के ओरियण्टल कॉलेज से स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद पंजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी और संस्कृत विषयों में एम.ए. किया। फिर मुम्बई, शिमला, जालन्धर तथा दिल्ली विश्वविद्यालयों में अध्यापन किया। किंतु अध्यापन में उनका दिल नहीं लगा।

सन् 1962-63 ई. में टाइम्स औफ इंडिया की मासिक कहानी पत्रिका ‘सारिका’ के सम्पादक हुए। लेकिन कुछ समय बाद उसे भी छोड़कर स्वतन्त्र लेखन करने लगे। सन् 1963 से 1972 में मृत्युपर्यंत स्वतंत्र लेखन ही करते रहे। ‘नाटक की भाषा’ पर शोधकार्य करने के लिए उन्हें नेहरू फैलोशिप मिली। लेकिन 3 दिसम्बर 1972 को दिल्ली में असामयिक मृत्यु होने के कारण

वह महत्वपूर्ण कार्य अधूरा रह गया।

हालांकि मोहन राकेश एक उत्कृष्ट नाटककार के रूप में प्रसिद्ध हैं, लेकिन उन्होंने साहित्य की अन्य विधाओं-उपन्यास, कहानी, निबंध, यात्रावृत्त, आत्मकथा और डायरी लेखन आदि पर भी बहुत अच्छा लिखा है। आधुनिक हिन्दी गद्य को नयी दिशा प्रदान करने वाले साहित्यकारों में मोहन राकेश का नाम अग्रणी पंक्ति में लिया जाता है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र और जयशंकर प्रसाद के बाद हिन्दी नाटकों में मोहन राकेश का युग रहा। हालाँकि बीच में और नाटककार भी हुए जिन्होंने आधुनिक हिन्दी नाटक विधा को सुदृढ़ किया किन्तु मोहन राकेश का लेखन सबसे अलग है। उन्होंने हिन्दी नाटक को अँधेरे बन्द कमरों से बाहर निकाला और उसे युगों के रूमानी ऐन्द्रजालिक सम्मोहन से उबारकर एक नए दौर के साथ जोड़कर दिखाया।

पंजाबी मातृभाषी होकर भी उन्होंने हिन्दी में नाटक लिखे हैं। किन्तु वे समकालीन भारतीय नाट्य प्रवृत्तियों को भी जताते हैं। उन्होंने हिन्दी नाटक को अखिल भारतीय स्तर ही नहीं प्रदान किया वरन् उसे विश्व नाटक की सामान्य धारा से जोड़ा। मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' तथा 'लहरों के राजहंस' में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि होने के बावजूद आधुनिक मनुष्य के अंतर्द्वंद और संशयों की गाथा कही गयी है। एक नाटक की पृष्ठभूमि जहां गुप्तकाल है तो दूसरा बौद्धकाल।

'आषाढ़ का एक' दिन में सफलता और प्रेम में एक को चुनने के द्वन्द्व से जूझते कालिदास के चरित्र के जरिये मोहन राकेश रचनाकार और आधुनिक मनुष्य के मन की पहेलियों को सामने रखते हैं। वहां प्रेम में टूटकर भी प्रेम को नहीं टूटने देनेवाली इस नाटक की नायिका के रूप में हिन्दी साहित्य को एक अविस्मरणीय पात्र दिया है। राकेश के कालिदास विशिष्ट होकर भी खल की भांति दिखते हैं। 'आधे-अधूरे' की सावित्री बिन्नी किन्नी कभी स्वयं से खीझती है तो कभी आसपास की ज़िन्दगी से जूझते हैं।

'लहरों के राजहंस' में और भी जटिल प्रश्नों को उठाते हुए जीवन की सार्थकता, भौतिक जीवन और अध्यात्मिक जीवन के द्वन्द, दूसरों के द्वारा अपने मत को दुनिया पर थोपने का आग्रह जैसे विषय उठाये गए हैं। उनके नाटकों को रंगमंच पर मिली शानदार सफलता इस बात का गवाह है कि नाटक और रंगमंच के बीच कोई खाई नहीं है। उनका तीसरा और सबसे लोकप्रिय नाटक 'आधे-अधूरे' है, जिसमें नाटककार ने मध्यवर्गीय परिवार की दमित इच्छाओं, कुंठाओं और विसंगतियो को दिखाया है।

इस नाटक की पृष्ठभूमि आधुनिक मध्यवर्गीय समाज है। वर्तमान जीवन के टूटते हुए संबंधों, मध्यवर्गीय परिवार के कलहपूर्ण वातावरण विघटन, सन्त्रास, व्यक्ति के आधे-अधूरे व्यक्तित्व तथा अस्तित्व का सजीव चित्रण हुआ है। मोहन राकेश का यह नाटक, अनिता औलक की कहानी 'दिन से दिन' का नाट्यरूपांतरण है।

मोहन राकेश ने अपनी रचनाओं में सरल, सहज, व्यावहारिक, संस्कृतनिष्ठ एवं परिमार्जित खड़ीबोली का प्रयोग किया है। कहीं-कहीं दैनिक जीवन में प्रचलित उर्दू एवं अँग्रेजी के शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। उनकी भाषा सजीव, रोचक और प्रवाहपूर्ण है। उनकी रचनाएँ प्रमुखतः वर्णनात्म्क,विवरणात्मक भावात्मक तथा चित्रात्मक शैलियों में हैं।

नाटकः- आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस, आधे-अधूरे, पैरों तले की जमीन (अधूरा, जिसे कमलेश्वर ने पूरा किया)

धर्मवीर भारतीः (27 दिसंबर 1926, 4 सितंबर 1997)

डॉ.धर्मवीर भारती आधुनिक हिन्दी साहित्य के प्रमुख लेखक, महान कवि, श्रेष्ठ नाटककार और उच्च सामाजिक विचारक थे। वे एक समय की प्रख्यात सप्ताहिक पत्रिका 'धर्मयुग' के प्रधान संपादक भी थे।

डॉ. धर्मवीर भारती को 1972 में पद्मश्री से सम्मानित किया गया। उनका उपन्यास 'गुनाहों का देवता' सदाबहार रचना मानी जाती है। 'सूरज का सातवां घोड़ा' को कहानी कहने का अनुपम प्रयोग माना जाता है, जिस पर विख्यात सिनेमाकार श्याम बेनेगल ने इसी नाम की फिल्म बनायी। 'अंधा युग' राकेश का प्रसिद्ध नाटक है। इब्राहीम अलकाजी, राम गोपाल बजाज, अरविन्द गौड़, रतन थियम, एम के रैना, मोहन महर्षि और कई अन्य भारतीय रंगमंच निर्देशकों ने इसका मंचन किया है।

धर्मवीर भारती का जन्म 25 दिसंबर 1926 को इलाहाबाद के अतर सुइया मुहल्ले में एक कायस्थ परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री चिरंजीव लाल वर्मा और माँ का श्रीमती चंदादेवी था। स्कूली शिक्षा डी. ए वी हाई स्कूल में हुई और उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय में। प्रथम श्रेणी में एम. ए करने के बाद डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के निर्देशन में 'सिद्ध साहित्य'

पर शोध-प्रबंध लिखकर उन्होंने पी.एच.डी. प्राप्त की।

घर और स्कूल से प्राप्त आर्यसमाजी संस्कार, इलाहाबाद और विश्वविद्यालय का साहित्यिक वातावरण, देश भर में होने वाली राजनैतिक हलचलें, बाल्यावस्था में ही पिता की मृत्यु और उससे उत्पन्न आर्थिक संकट- इन सबने उन्हें अति संवेदनशील और तर्कशील बना दिया। उन्हें जीवन में दो ही शौक थे- अध्ययन और यात्रा। भारती के साहित्य में उनके विशद अध्ययन और यात्रा-अनुभवों का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है।

डॉ. धर्मवीर भारती को आर्यसमाज की चिंतन और तर्कशैली भी प्रभावित करती है और रामायण, महाभारत और श्रीमद्भागवत, प्रसाद और शरत्चन्द्र का साहित्य आदि उन्हें विशेष प्रिय था। आर्थिक विकास के विचार में मार्क्सवादी सिद्धांत उनके आदर्श थे, परंतु मार्क्सवादियों की अधीरता और मताग्रहता उन्हें अप्रिय थे। 'सिद्ध साहित्य' उनके शोध का विषय था, उनके सटजिया सिद्धांत से वे विशेष रूप से प्रभावित थे। पश्चिमी साहित्यकारों में शीले और आस्करवाइल्ड उन्हें विशेष प्रिय थे। भारती को फूलों का बेहद शौक था। उनके साहित्य में भी फूलों से संबंधित बिंब प्रचुर मात्रा में मिलते हैं।

आलोचकों में भारती जी को प्रेम और रोमांस का रचनाकार माना जाता है। उनकी कविताओं, कहानियों और उपन्यासों में प्रेम और रोमांस का तत्व स्पष्ट रूप से मौजूद है। परंतु उसके साथ-साथ इतिहास और समकालीन स्थितियों पर भी उनकी पैनी दृष्टि रही है जिसके संकेत उनकी कविताओं, कहानियों, उपन्यासों, नाटकों, आलोचना तथा संपादकीयों में स्पष्ट देखे जा सकते हैं। उनकी कहानियों और उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन के यथार्थ के चित्रा हैं। 'अंधा युग' में स्वातंत्रयोत्तर भारत में आई मूल्यहीनता के प्रति गहरा चिंता है। उनका बल पूर्व और पश्चिम के मूल्यों, जीवन-शैली और मानसिकता के संतुलन पर है, वे न तो किसी एक का अंधा विरोध करते हैं न अंधा समर्थन, परंतु क्या स्वीकार करना और क्या त्यागना है, इसके लिए व्यक्ति और समाज की प्रगति को ही आधार बनाना होगा।

डॉ.भारती की दृष्टि में वर्तमान को सुधारने और भविष्य को सुखमय बनाने के लिए आम जनता के दुःख - दर्द को समझने और उसे दूर करने की आवश्यकता है। दुःख तो उन्हें इस बात का है कि आज 'जनतंत्र' में 'तंत्र' शक्तिशाली लोगों के हाथों में चला गया है और 'जन' की ओर किसी का ध्यान ही नहीं है। अपनी रचनाओं के माध्यम से इसी 'जन' की आशाओं, आकांक्षाओं, विवशताओं और कष्टों को अभिव्यक्ति देने का प्रयास उन्होंने किया है।

सन् 1947 में 'संगम' के सम्पादक श्री इलाचंद्र जोशी में सहकारी संपादक नियुक्त हुए। वे दो वर्षों तक वहाँ काम करने के बाद हिन्दुस्तानी अकादमी में अध्यापक नियुक्त हुए। सन् 1960 तक वहाँ कार्य किया। प्रयाग विश्वविद्यालय में अध्यापन के दौरान 'हिन्दी साहित्य कोश' के सम्पादन में सहयोग दिया। आपने 'निकष' पत्रिका निकाली तथा 'आलोचना' का सम्पादन भी किया। उसके बाद 'धर्मयुग' में प्रधान सम्पादक पद पर बम्बई आ गये। सन् 1997 में डॉ. भारती ने अवकाश ग्रहण किया। सन् 1999 में युवा कहानीकार उदय प्रकाश के निर्देशन में साहित्य अकादमी दिल्ली के लिए डॉ. भारती पर एक वृत्त चित्र का निर्माण भी हुआ है।

- एकांकी व नाटकः नदी प्यासी थी, नीली झील, आवाज़ का नीलाम आदि।
- पद्य नाटकः अंधा युग (1954)

जगदीशचन्द्र माथुरः

जगदीशचन्द्र माथुर जी के प्रारंभिक नाटकों में कौतूहल और स्वच्छंद प्रेमाकुलता देखने को मिलता है। 'भोर का तारा' उनका विख्यात एकांकी है, जिसमें कवि शेखर की भावुकता पर्यावरण में घटित करने या रचने का मोह भी प्रारंभ से मिलता है। परंतु समसामयिक को अनुभव के रूप में अनुभूत करके उसकी प्रामाणिकता को संस्कृति के माध्यम से सिद्ध करने का जो आग्रह उनके नाटकों में हैं उसकी रचनात्मक संभावना का प्रमाण 'कोणार्क' में है। परंपरा को माध्यम और संदर्भ के रूप में प्रयोग करने की कला में माथुर सिद्दहस्त हैं। परंतु इसका तात्पर्य यह नहीं कि यही उनका सब कुछ है, बल्कि उन्होंने 'रीढ़ की हड्डी' के जैसे नाटक भी लिखे हैं जिनका संबंध समाज के भीतर के बदलते रिश्तों और मानवीय संबंधों से है। 'शारदीया' के सारे नाटकों में समस्या को व्यापक परिप्रेक्ष्य में रखकर देखने का आभास अवश्य है। परंतु समस्या मात्र का परिवृत्ति इतना छोटा है कि वह किसी व्यापक सत्य का आधार नहीं बन पाती। वस्तुतः माथुर छायावादी संवेदना के रचनाकार हैं। यह संवेदना 'भोर का तारा' से लेकर 'पहला राजा' तक में कमोबेश मिलती है। यह अवश्य है कि यह छायावादिता नाटक के विधागक संस्कार और यथार्थ के प्रति गहरी संसक्ति के कारण 'कोणार्क' और 'पहला राजा' में काफ़ी संस्कारित हुई है।

'कोणार्क' उत्तम नाटक है। इतिहास, संस्कृति और

समकालीनता मिलकर निरवधिकाल की धारणा और मानवीय सत्य की आस्था को परिपुष्ट करते हैं। घटना की तथ्यता और नाटकीयता के बावजूद महाशिल्पी विशु की चिंता और धर्मपद का साहसपूर्ण प्रयोग, व्यवस्था की अधिनायकवादी प्रवृत्ति से लड़ने और जूझने की प्रक्रिया एवं उसकी परिणति का संकेत इस नाटक को महत्वपूर्ण रचना बना देता है। कल्पना की रचनात्मक सामर्थ्य और संस्कृति का समकालीन अनुभव 'कोणार्क' की सफल नाट्य कृति का कारण है। 'कोणार्क' के अंत और घटनात्मक तीव्रता तथा परिसमाप्ति पर विवाद संभव है, परंतु उसके संप्रेषणात्मक प्रभाव पर प्रश्न चिन्ह संभव नहीं है।

'पहला राजा' नाटक के रचना-विधान और वातावरण को 'माध्यम' और 'संदर्भ' के रूप में प्रयोग करके लेखक ने व्यवस्था और प्रजाहित के आपसी रिश्तों को मानवीय दृष्टि से व्याख्यायित करने का प्रयास किया है। स्पुतनिक, अपोलो आदि के प्रयोग के कारण समकालीनता का अहसास गहराता है। पृथु, उर्वी, कवष आदि का प्रयास और उसका परिणाम आदि सब मिलकर नाटक की समकालीनता को बराबर बनाए रखते हैं। पृथ्वी की उर्वर शक्ति, पानी और फावड़ा-कुदाल आदि को उपयोग रचना के काल को स्थिर करता है। 'परंपराशील नाट्य' महत्वपूर्ण समीक्षा-कृति है। इसमें लोक नाट्य की परंपरा और उसकी सामर्थ्य के विवेचन के अलावा नाटक की मूल दृष्टि को समझाने का प्रयास किया गया है। रामलीला, रासलीला आदि से संबद्ध नाटकों और उनकी उपादेयता के संदर्भ में परंपरा का समकालीन संदर्भ में महत्व और उसके उपयोग की संभावना भी विवेच्य है। 'दस तसवीरें' और 'इन्होंने जीना जाना है' रचनाकार के मानस पर प्रभाव डालने वाले व्यक्तियों की तस्वीरें और जीवनियाँ हैं, जिनका महत्व उनके रेखांकन और प्रभावांकन की दृष्टि से अक्षुण्ण है।

जगदीशचंद्र माथुर को याद करना, सूचना संचार माध्यमों में हुई क्रांति को याद करना है। उनकी स्मृति को लेकर राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली ने एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय सेमिनार आयोजित किया। इसकी वजह थी कि जगदीशचंद्र माथुर हिन्दी के बहुत महत्वपूर्ण नाटककार थे। यों तो जयशंकर प्रसाद के बाद नाटक-लेखन के क्षेत्र में लक्ष्मी नारायण मिश्र एक बड़ा नाम हैं। वे इतिहास के परिप्रेक्ष्य में प्रसाद की परंपरा से अलग हटकर प्रयोगशील नाटक लिखने की पहल जगदीशचंद्र माथुर ने अपने अप्रतिम नाटक 'कोणार्क' से की। वे एक सिद्धहस्त एकांकीकार भी थे। उनकी प्रयोगशीलता का सफल प्रमाण यही है कि उनके सम्पूर्ण नाटक 'कोणार्क' में एक भी नारी पात्र नहीं है, फिर भी वह बेहद सफलतापूर्वक मंचित होकर दर्शकों का चहेता मंच नाटक बना रहा है। और आज भी वह कई संदर्भों में चर्चा का केंद्र बना रहता है। यह मामूली बात नहीं है क्योंकि 'कोणार्क' नाटक की रचना आज से लगभग छह दशक पहले हुई थी।

स्वदेश दीपकः

स्वदेश दीपक (जन्म 1943) प्रसिद्ध नाटककार, उपन्यासकार और लघु-कथा लेखक हैं। दीपक 1960 के दशक के मध्य से हिन्दी साहित्यिक परिदृश्य पर सक्रिय रहे हैं और उन्हें कोर्ट मार्शल के लिए जाना जाता है, जो एक पथप्रदर्शक नाटक है। कोर्ट मार्शल उन्होंने 1991 में प्रकाशित किया था। दीपक की सबसे हालिया पुस्तक मैंने मांडू नहीं देखा है, जो संस्मरणों का एक खंड है। दीपक का काम भारत के सभी प्रमुख साहित्यिक पत्रिकाओं में छपा है और उनके नाम पर 15 से अधिक प्रकाशित शीर्षक हैं। उनके कई कार्यों का मंचन और टेलीविजन कार्यक्रमों में निर्माण किया गया है।

कोर्ट मार्शल के प्रकाशन के बाद स्वदेश दीपक को देश के बेहतरीन समकालीन नाटककारों में से एक के रूप में व्यापक रूप से पहचाना गया। यह नाटक भारतीय सेना के प्रचलित समाज में जातिवाद की जड़ों पर बहुत प्रहार करता है। जाने-माने भारतीय थिएटर निर्देशक रंजीत कपूर, शिल्पी मारवाह, अरविंद गौर, उषा गांगुली, अभिजीत चौधरी आदि द्वारा भारत में साल 2014 तक कोर्ट मार्शल का लगभग 4000 बार मंचन किया जा चुका है। इसका भारत की कई क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद किया गया है।

स्वदेश दीपक कोर्ट मार्शल को अपना सबसे प्रसिद्ध काम मानते हैं, लेकिन सर्वश्रेष्ठ नहीं। उनके अन्य प्रमुख नाटकों में सबसे उदासी कविता, जलता हुआ रथ (दरथ इन फ्लेम्स), और काल कोठरी (द डार्क सेलर) शामिल हैं। दीपक का पहला नाटक नाटक बाल भगवान 1988 का है।

- नाटक बाल भगवान / नाट्यशाला बाल (1989)
- कोर्ट मार्शल/मार्शल (1991)
- जलता हुआ रथ (1998)
- सबसे उदास कविता/बुद्धि कविता (1998)
- काल कोठरी / काल कट (1999)

प्रताप सहगलः

प्रताप सहगल हिन्दी के कवि, नाटककार, कहानीकार

और आलोचक हैं। प्रताप सहगल का जन्म 10 मई 1945 को झंग, पश्चिम पंजाब (अब पाकिस्तान) में हुआ। इन्होंने हिन्दी विषय से स्नातकोत्तर की शिक्षा प्राप्त कर ज़ाकिर हुसैन स्नातकोत्तर (सांध्य) महाविद्यालय (दिल्ली विश्वविद्यालय) के हिन्दी विभाग में प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुए और इसी महाविद्यालय से एसोसिएट प्रोफेसर के पद से सेवानिवृत हुए। देश भर में महत्वपूर्ण नाट्य निर्देशकों यथा सतीश आन्द, रवि बासवानी, राजा बुंदेला, सुभाष सहगल तथा अखिलेश अखिल द्वारा बार बार मंचन, अंवेषक तथा रंग बसंती बहु-चर्चित, बहु प्रशंसित अंवेषक का परिषद रंग मंडल द्वारा 2003 में, फिर इसी वर्ष संगीत नाटक अकादमी के रंग-स्वर्ण समारोह में शामिल और इसी नाटक से चंडीगढ़ में राष्ट्रीय नाट्य समारोह की शुरुआत अनेक नाटक दूरदर्शन एवं रेडियो पर प्रसारित अनेक रचनाओं का भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में अनुवाद, प्रकाशित, प्रसारित तथा ये कई स्वयं सेवी संस्थाओं से सम्बद्ध हैं।

नाटक

- अंवेषक (1992)
- चार रूप्रांत (1992)
- रंग-बसंती (1984)
- मौत क्यों रात भर नहीं आती (1988)

मोहनदास नैमिशरायः

दलित साहित्य को स्थापित करने और उसे शिखर तक ले जाने में अविस्मरणीय भूमिका निभाने वाले मोहनदास नैमिशराय का जन्म 5 सितम्बर 1949 को मेरठ (उत्तर प्रदेश) में हुआ। शिक्षा प्राप्ति के पश्चात कुछ समय वे मेरठ के एक कॉलेज में प्रवक्ता रहे। अपना पूरा जीवन दलित पत्रकारिता एवं साहित्य को समर्पित कर चुके नैमिशराय ने अनेक राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में दलितों से जुड़े मुद्दों और समस्याओं को उठाया। वे जितने निडर पत्रकार रहे, उतने ही बेबाक और प्रखर साहित्यकार भी। भाषायी तेवर उनके साहित्य को अलग पहचान देते हैं। वे सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक विसंगतियों और धार्मिक पाखण्डों पर बड़ी ही निर्दयता से प्रहार करते हैं। उनकी आत्मकथा अपने-अपने पिंजरे (पहला भाग), अपने-अपने पिंजरे (दूसरा भाग) दो खण्डों में प्रकाशित हुई हैं। उनके दो दर्जन से अधिक रेडियो नाटक हिन्दी रेडियो नाटक में संकलित हैं। उन्होंने बच्चों के लिए भी बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर, ज्योतिबा फुले, सावित्री बाई फुले, झलकारी बाई आदि की संक्षिप्त जीवनियाँ लिखी। वे लगभग 6 वर्षो तक डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान (भारत सरकार) में सम्पादक रहे। कई वर्षो तक बयान पत्रिका का सफलता पूर्वक सम्पादन करने वाले नैमिशराय डॉ. अम्बेडकर स्मृति पुरस्कार 1993, वाणिज्य हिन्दी ग्रन्थ पुरस्कार 1995, डॉ. अम्बेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार 1998, डॉ. अम्बेडकर इंटरनेशनल मिशन पुरस्कार (कनाडा) 1998, गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार 2006, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा साहित्य भूषण पुरस्कार-2015 से सम्मानित हो चुके है। अपने उत्कृष्ट सामाजिक एवं साहित्यिक योगदान के कारण डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान, महू (म.प्र.) द्वारा भी उन्हें 2010 में विशेष रूप से सम्मानित किया गया है।

सन् 1980 के दशक में नैमिशराय की नियुक्ति दृश्य एवं श्रव्य निदेशालय में 'डेमोंस्ट्रेटर' के पद पर हुई थी। परिणामस्वरूप वे फिल्म, वृत्तचित्र, टी. वी. सिरियल तथा रेडियो नाटक लेखन से जुड़े थे। इस सिलसिले में उन्होंने सौ से अधिक रेडियो नाटकों की स्क्रिप्ट लिखी थी। इनमें से महत्त्वपूर्ण सत्ताईस रेडियो नाटकों का 'हिंदी रेडियो नाटक' इस पुस्तक में समावेश किया है। इस पुस्तक में संकलित सभी नाटक सामाजिक समस्याओं को उजागर करते हैं। परिणामस्वरूप इन नाटकों की प्रासंगिकता आज भी है और भविष्य में भी रहेगी।

नाटक

- अदालतनामा
- हैलो कामरेड

Critical Overview / अवलोकन

स्वतंत्रता के बाद हिन्दी नाटक ने पाश्चात्य प्रभाव से जो नये आयाम ग्रहण किए उनकी प्रथम अभिव्यक्ति धर्मवीर भारती के 'अन्धायुग' में प्रकट हुई है। व्यवस्था के संदर्भ में समाज एवं व्यक्ति के बाह्य एवं आंतरिक यथार्थ का चित्रण करना नये नाटककारों के नाटकों का केन्द्रीय कथ्य लगता है। हिन्दी नाटकों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाकर 'मोहन राकेश' ने एक नये युग की स्थापना की है। उनका 'आषाढ़ का एक दिन' (1956), 'लहरों के राजहंस' (1963) तथा 'आधे-अधूरे' (1969) नाटक निश्चय ही ऐसे आलोक स्तम्भ हैं जो सुदूर भविष्य में भी हिन्दी-नाटक को एक नवीन गति-दिशा प्रदान करते रहेंगे। मानवीय सम्बन्धों में विघटन के कारण टूटते हुए व्यक्ति के आभ्यंतर यथार्थ का चित्रण करना इन नाटकों का केन्द्रीय कथ्य एवं मूल स्वर है।

Recap / पुनरावृत्ति

- मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' तथा 'लहरों के राजहंस' ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखा हुआ नाटक है
- लहरों के राजहंस में और भी जटिल प्रश्नों को उठाते हुए जीवन की सार्थकता,भौतिक जीवन और अध्यात्मिक जीवन के द्वन्द, दूसरों के द्वारा अपने मत को दुनिया पर थोपने का आग्रह है
- जगदीशचंद्र माथुर के अप्रतिम नाटक है 'कोणार्क'
- 'कोणार्क' उत्तम नाटक है। वह इतिहास, संस्कृति और समकालीनता मिलकर निरवधिकाल की धारणा और मानवीय सत्य की आस्था को परिपुष्ट करते हैं
- 'कोर्ट मार्शल' नाटक भारतीय सेना के प्रचलित समाज में जातिवाद की जड़ों पर बहुत प्रहार करता है
- आलोचकों में भारतीजी को प्रेम और रोमांस का रचनाकार माना है
- 'आधे-अधूरे' नाटक की पृष्ठभूमि आधुनिक मध्यवर्गीय समाज है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. धर्मवीर भारती के अंधा युग किस कोटि के नाटक है?
2. मोहन राकेश के किन्हीं दो नाटकों का नाम बताइए।
3. 'आधे-अधूरे' नाटक की पृष्ठभूमि क्या है?
4. स्वदेशदीपक भारतीय सेना की पृष्ठभूमि पर आधारित लिखा हुआ नाटक कौन सा है?
5. 'लहरों के राजहंस' नाटक की पृष्ठभूमि क्या है?
6. पथप्रदर्शक नाटक के रूप में ख्याति प्राप्त मोहनराकेश का नाटक कौन-सा है?
7. 'धर्मयुग' पत्रिका के प्रधान संपादक कौन है
8. भारतेंदु हरिश्चंद्र और जयशंकर प्रसाद के बाद हिन्दी नाटकों में किसका युग रहा है?

Answers/ उत्तर

1. पद्य नाटक।
2. आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस, आधे-अधूरे, पैर तले की जमीन।
3. 'आधे-अधूरे' नाटक की पृष्ठभूमि आधुनिक मध्यवर्गीय समाज है।
4. 'कोर्ट मार्शल'।
5. 'लहरों के राजहंस' नाटक की पृष्ठभूमि आधुनिक मध्यवर्गीय समाज है।
6. कोर्ट मार्शल
7. धर्मवीर भारती
8. मोहन राकेश

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. समकालीन नाटककारों पर लेख लिखिए।
2. व्यक्त कीजिए कि 'लहरों के राजहंस' नाटक की पृष्ठभूमि आधुनिक मध्यवर्गीय समाज है।
3. 'आधे-अधूरे' नाटक की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालिए।
4. नाटककार मोहनदास नैमिशराय पर पर्चा लिखिए।
5. 1942 के बाद के नाटककार के नाटकों की विशेषता पर टिप्पणी तैयार कीजिए।

SGOU

इकाई 3

1942 के बाद के एकांकी साहित्य का विकास

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 1942 के बाद के एकांकी साहित्य से परिचय प्राप्त करता है
- 1942 के बाद के एकांकी साहित्य का विकास को समझता है
- 1942 के बाद के एकांकीकार और उनके साहित्य से परिचय प्राप्त करता है
- 1942 के बाद के एकांकी साहित्य में अभिव्यक्त सामाजिक स्थिति से अवगत होता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

हिन्दी एकांकी की विविध विधाओं को लेकर प्रारम्भ होता है। 1942 के बाद के एकांकी साहित्य स्वतंत्र एवं सचेष्ट भाव से लिखे गए हैं। 1942 के बाद तक पहुँचते-पहुँचते एकांकी का स्वरूप, शिल्प आदि में बदलाव आने लगा। 1942 के बाद के एकांकियों में सामाजिक बाह्याडम्बर, स्त्री-पुरुष सम्बन्ध, यौन विषयक समस्याओं एवं प्राचीन अप्रगतिशील मान्यताओं का चित्रण किया गया है। एकांकी में विषय की अपेक्षा शिल्प को विशेष स्थान देने लगा है। ध्वनि नाटक भी इस के बीच अधिक संख्या में लिखने लगे हैं।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

- बौद्धिक उत्सुकता।
- मानसिक विश्लेषण।
- अंतर्द्वंद्व की अभिव्यक्ति।
- हास्य तथा चुटीले व्यंग्य।
- संवादों की कसावट।
- मार्मिक स्थलों का चयन।
- यथार्थ प्रस्तुतीकरण के प्रति आग्रह।
- मनोवैज्ञानिक कार्यव्यवहार।
- सामान्य नायक की स्वीकृति।
- रंग संकेत।
- प्रेम, विवाह, घृणा, क्रूरता, हत्या।
- पौराणिक आख्यान।
- लोकगाथात्मक एवं लोकविश्रुत वीरों तथा राजाओं के कृत्य।
- सामाजिक कुरीतियाँ।
- वर्गसंघर्ष।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

- देशभक्ति।
- हिंदु-मुसलमान-भ्रातृत्व।
- सत्याग्रह।

Discussion / चर्चा

सन् 1942 के बाद तक पहुँचते-पहुँचते एकांकी का स्वरूप, शिल्प आदि पूरी तरह स्थिर हो जाते हैं, उनका प्रामाणिक रूप सामने आता है। इससे पहले तो वह अपना सही रूप तलाशने में लगा था। इस युग के एकांकीकारों का दृष्टिकोण प्रगतिवादी था। पूंजीवाद के विरोध के स्वर मुखर होने लगे थे। इस काल में एकांकियों को राजकीय प्रोत्साहन मिला। डॉ. रामकुमार वर्मा के 'रेशमी टाई' एकांकी संग्रह से इस युग का सूत्रपात हुआ, यह पहले ही बताया जा चुका है। इसके अतिरिक्त वर्मा जी के 'ऐक्ट्रेस', 'रजनी की रात', 'एक तोले अफीम की कीमत', 'परीक्षा', 'नहीं का रहस्य', 'कहाँ से कहाँ', 'चारुमित्रा', 'दस मिनट' आदि एकांकी प्रसिद्ध हैं। पहाड़ी का 'युग युग द्वारा शक्तिपूजा'; भुवनेश्वर के 'शैतान', 'स्ट्राइक', 'असर', 'ताँबे के कीड़े'; भगवतीचरण वर्मा के 'संदेह का अंत', 'दो कलाकार', 'सबसे बड़ा आदमी'; उपेंद्रनाथ अश्क कृत 'जोंक', 'समझौता', 'घड़ी', 'छठा बेटा', 'लक्ष्मी का स्वागत', 'विभा', 'तौलिये', 'आदिमार्ग'; उदयशंकर भट्ट के 'दो अतिथि', 'वर निर्वाचन', 'मुंशी अनोखेलाल', 'असली नकली', 'नेता', 'सेठ भालचंद', 'मनुमानव', 'आदिम युग'; सेठ गोविंददास रचित 'विटेमन', 'अधिकार लिप्सा', 'वह मरा क्यों', 'हंगर स्ट्राइक', 'कंगाल नहीं', 'ईद और होली'; पांडेय बेचन शर्मा उग्र के 'राम करे सो होय', 'मियाँ भाई', 'अफजल वध'; वृंदावनलाल वर्मा कृत 'पीले हाथ', 'सगुन' 'जहाँदार शाह', 'कश्मीर का काँटा', 'मानव'; एस.पी. खत्री के 'चौराहा', 'माँ', 'मछुए की माँ', 'ठाकुर का घर', 'बंदर की खोपड़ी'; विष्णु प्रभाकर के 'माँ का हृदय', 'संस्कार और भावना', 'रक्तचंदन', 'माँ बाप'; जगदीशचंद्र माथुर के 'भोर का तारा', 'रीढ़ की हड्डी', मकड़ी का जाला', 'कलिंगविजय', 'खंडहर'; लक्ष्मीनारायण मिश्र का 'एक दिन'; सद्‌गुरुशरण अवस्थी के 'मुद्रिका', 'कालीवध'; गणेशप्रसाद द्विवेदी के 'सोहाग की बिंदी', 'दूसरा उपाय ही क्या है', 'शर्मा जी', 'सर्वस्व समर्पण' आदि प्रमुख एकांकी इसी काल की देन हैं।

इस युग के एकांकी स्वतंत्र एवं सचेष्ट भाव से लिखे गए हैं। अतः विषय की अपेक्षा शिल्प उनमें विशेष है। बौद्धिक उत्सुकता, मानसिक विश्लेषण, अंतर्द्वंद्व की अभिव्यक्ति, हास्य तथा चुटीले व्यंग्य, संवादों की कसावट, मार्मिक स्थलों का चयन, यथार्थ प्रस्तुतीकरण के प्रति आग्रह, मनोवैज्ञानिक कार्यव्यवहार, पद्य का लगभग अभाव, सामान्य नायक की स्वीकृति, रंगसंकेत आदि उत्तरोत्तर बढ़ते गए हैं। युग की विभिन्न एवं विविध अभिरुचियों के अनुसार इस समय के एकांकियों के विषय भी अनेक रहे हैं, जिनमें प्रेम, विवाह, घृणा, क्रूरता, हत्या, पौराणिक आख्यान, लोकगाथात्मक एवं लोकविश्रुत वीरों तथा राजाओं के कृत्य, सामाजिक कुरीतियाँ, वर्गसंघर्ष, देशभक्ति, हिंदु-मुसलमान-भ्रातृत्व, सत्याग्रह, यौनाकर्षण आदि प्रमुख हैं। ध्वनि नाटक भी इस बीच अधिक संख्या में लिखे गए हैं।

हिन्दी एकांकी की विविध विधाओं को लेकर प्रारम्भ होता है जिनमें मंच एवं ध्वनि एकांकी के अलावा 'ओपेन एयर एकांकी', 'चित्र एकाकी' (टेलिविजन पर दिखाए जानेवाले) 'गली एकांकी' आदि सम्मिलित किए जा सकते हैं। डॉ. लक्ष्मीनारायण कृत 'बसन्त ऋतु का नाटक', 'मम्मी ठकुराइन', 'राजरानी'; देवराज दिनेश के 'समस्या सुलझ गई', 'तुलसीदास', 'रिश्वत के अनेक ढंग'; जयनाथ नलिन रचित 'भक्तों की दीनता'; सत्येंद्र शरत कृत 'नवजोती की नई हिरोइन'; विनोद रस्तोगी का 'बहू की विदा'; चिरंजीत के 'चक्रव्यूह' 'ढोल की पोल', (ध्वनि नाटक), पाँच प्रहसन् (संकलन); [रेवतीशरण शर्मा] कृत 'तलाक'; विमला लूथरा का 'अपना घर'; ज्ञानदेव अग्निहोत्री का 'रोटीवाली गली'; कृष्णकिशोर श्रीवास्तव के 'सत्यकिरण', 'मछली के आँसू', 'आस्तीन के साँप'; इंदुशेखर का 'महल्ले की आबरू'; स्वामीनाथ कृत 'आई.ए.एस.'; राजेंद्रकुमार शर्मा के 'पर्दा उठने से पहले', 'रेत की दीवार', 'अटैची केस', अरुण रचित 'रेलगाड़ी के डिब्बे', 'भोर की किरणें'; श्रीकृष्ण कृत 'माँ जी', 'तरकश के तीर'; मक्ता शुक्ल के 'पर्दे और परछाइयाँ'; 'भीतरी छाया', कुमार राजेंद्र कृत 'आदमखोर' (ओपेन एयर एकांकी); कंचनकुमार लिखित 'सूअर बाड़े का जमादार' (गली एकांकी) आदि इस खेवे की प्रमुख रचनाएँ हैं।

इस काल में कुछ बेमानी (ऐब्सर्ड) एकांकी भी लिखे गए हैं जिनमें सत्यदेव दुबे कृत 'थोड़ी देर पहले और थोड़ी देर

बाद'; धर्मचंद्र जैन का 'चेहरों के चेहरे'; मोहन राकेश का बीज नाटक 'शायद' आदि उल्लेख्य हैं। डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, मोहन राकेश, विष्णु प्रभाकर, गंगाधर शुक्ल, विनोद रस्तोगी, उपेन्द्रनाथ अश्क, कमलेश्वर तथा मनोहर चौहान ने इधर बहुत से चित्र एकांकी भी प्रस्तुत किए हैं। संगीत नाटक एकेडेमी सन् 1958 में दिल्ली में स्थापित हुई। 'तरंग', 'रंगयोग', 'बिहार थियेटर' 'रंग भारती' आदि 'नाट्य कला' से संबंधित कई पत्रिकाओं के प्रकाशन द्वारा एकांकी को बल मिला। मोहन राकेश का नाम इस काल के एकांकीकारों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इस प्रकार हिन्दी एकांकी आज अपने यौवन पर है।

Critical Overview / अवलोकन

साहित्य के अन्य विधाओं के समान हिन्दी में एकाँकी की विकास भी क्रमिक रूप में हुई। अन्य साहित्य रूपों के तुलना में एकाँकी साहित्य किसी के पीछे नहीं है। यह प्रगति के पीछे प्रसाद, रामकुमार वर्मा, सेठ गोविंददास, उदयशंकर भट्ट, जगदीश चंद्र माधुर, हरिकृष्ण प्रेमी, लक्ष्मी नारायण मिश्र, भगवती चरण वर्मा, विष्णु प्रभाकर, डॉ. रामकुमार वर्मा, मोहन राकेश, वृंदावन लाल वर्मा जैसे महान रचनाकारों के सहयोग प्रशंसनीय है।

Recap / पुनरावृत्ति

- हिन्दी एकांकी में अपने समय की विभिन्न समस्याओं, परिस्थितियों पर तर्क-वितर्क
- विचित्र एवं क्रांतिकारी परिस्थितियों ने विषय, शैली और दृष्टिकोण को नया मोड़ दिया
- पाश्चात्य नाट्य शैलियों एवं विकसित प्रवृत्तियों से प्रभावित होना
- एकांकीकारों ने परम्परागत एकांकी-तत्त्वों का निर्वाह करने के साथ-साथ अभिनव शिल्प-रूपों को भी स्थान दिया
- विषय की दृष्टि से एकांकी को मात्र मनोरंजन की वस्तु न बनाकर उसमें मानव जीवन की सामयिक समस्याओं एवं विरूपताओं का चित्रण
- एकांकी आदर्शवाद के एकांगी घेरे से निकल कर यथार्थवाद की ओर बढ़ा
- कृत्रिमता की बजाय स्वाभाविक और सहज जीवन को प्रतिबिम्बित करने वाले एकांकी
- एकांकियों में नाटकीय अभिनय के स्थान पर सरल अभिनयात्मक संकेत
- परम्परागत रंगमंच-विधान सम्पूर्ण रूप से परिवर्तित होना
- सहजता, सरलता, स्वाभाविकता एवं यथार्थ के दर्शन
- शिल्प विधान के अनावश्यक आडम्बर बन्धन से इस युग का एकांकी साहित्य मुक्त
- एकांकी केवल साहित्यिक विधा ही न रह गयी
- इस युग में रंगमंच की स्थापना के साथ उसके स्वरूप में भी अन्तर परिलक्षित हुआ
- मनोवैज्ञानिक एकांकी की प्रवृत्ति का जन्म
- इस काल में कुछ बेमानी (ऐब्सर्ड) एकांकी भी लिखे गए हैं
- प्रसादोत्तर युग में पहुंचकर, हर दृष्टि से एकांकी साहित्य का एक स्वतंत्र अस्तित्व परिलक्षित होता है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. एकांकी साहित्य का स्वतंत्र अस्तित्व कब परिलक्षित हुआ है?
2. युगीन एकांकीकार के नाम से कौन जाने जाते थे?
3. डॉ.रामकुमार वर्मा के एकांकियों का आधार क्या है?
4. 'तुलसीदास' एकांकी के रचनाकार कौन है?
5. प्रसादोत्तर युग में पहुँचकर एकांकी में क्या बदलाव आया है?
6. 'बसन्त ऋतु का नाटक' किसकी रचना है?
7. 'तुलसीदास' किसका एकांकी है?
8. टेलिविजन पर दिखाए जानेवाले एकांकियों को क्या कहा जाता है?

Answers/ उत्तर

1. प्रसादोत्तर युग में पहुंचकर, हर दृष्टि से एकांकी साहित्य का एक स्वतंत्र अस्तित्व परिलक्षित होता है।
2. भुवनेश्वर युगीन एकांकीकार के नाम से जाने जाते हैं।
3. डॉ. रामकुमार वर्मा ने जीवन की वास्तविकताको अपने एकांकियों का आधार बनाया।
4. डॉ. लक्ष्मीनारायण।
5. एकांकी आदर्शवाद के एकांकी घेरे से निकल कर यथार्थवाद की ओर बढ़ा।
6. डॉ. लक्ष्मीनारायण
7. देवराज दिनेश
8. 'ओपेन एयर एकांकी' या 'चित्र एकाकी'

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. प्रसादोत्तर युग में जीवन की वास्तविकताको अपने एकांकियों का आधार बनाया- स्पष्ट कीजिए।
2. हिन्दी एकांकी के विकास में रामकुमा वर्मा का स्थान समझाइए।
3. 'प्रसादोत्तर युग में पहुंचकर हर दृष्टि से एकांकी साहित्य का एक स्वतंत्र अस्तित्व परिलक्षित होता है'- समझाइए।
4. प्रसाद के एकाँकियों में भावपक्ष और कलापक्ष पर आलेख तैयार कीजिए।

इकाई 4

हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार: रामकुमार वर्मा, उदयशंकर भट्ट, सेठ गोविन्ददास आदि-(सामान्य परिचय)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार से परिचय प्राप्त करता है
- हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार की रचनाओं से परिचय प्राप्त करता है
- हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार की रचनाओं में प्रतिफलित सन्दर्भो से परिचय प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

आधुनिक हिन्दी एकांकी के जनक के रूप में रामकुमार वर्मा का आगमन हुआ। डॉ. रामकुमार वर्मा हिन्दी की लघु नाट्य परंपरा को एक नया मोड़ देने वाले रचनाकार। एकांकी लेखक के रूप में हिन्दी साहित्य-सृजन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका। विषय की दृष्टि से उदयशंकर भट्ट की एकांकी समस्या प्रधान और हास्य-व्यंग्य पूर्ण, भागों में विभाजित।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

- डॉ. रामकुमार वर्मा को हिन्दी एकांकी के जनक कहे जाते हैं।
- डॉ. रामकुमार वर्मा नाट्य कला के विकास की संभावनाओं के नए पाट खोलना।
- नाटककार के रूप में डॉ. रामकुमार वर्मा मनोविज्ञान के अनेकानेक स्तरों पर मानव-जीवन की विविध संवेदनाओं को स्वर दिया।
- सामाजिक, राजनीतिक और मानवीय सरोकारों ने भी उनके व्यक्तित्व को गढ़ने में सहयोग।
- उदयशंकर भट्ट को नाटक और एकांकी के क्षेत्र में विशेष ख्याति मिलना।
- सेठ गोविन्द दास महात्मा गांधी द्वारा संचालित सभी आन्दोलनों में भाग लिया।

Discussion / चर्चा

डॉ. रामकुमार वर्मा

हिन्दी की लघु नाट्य परंपरा को एक नया मोड़ देने वाले डॉ. रामकुमार वर्मा आधुनिक हिन्दी साहित्य में 'एकांकी सम्राट' के रूप में समादृत हैं। उन्होंने हिन्दी नाटक को एक नया संरचनात्मक आदर्श सौंपा। नाट्य कला के विकास की संभावनाओं के नए पाट खोलते हुए नाट्य साहित्य को जन जीवन के निकट पहुँचा दिया। नाटककार और कवि के साथ-साथ उन्होंने समीक्षक, अध्यापक तथा हिन्दी साहित्येतिहास-लेखक के रूप में भी हिन्दी साहित्य-सृजन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। नाटककार के रूप में उन्होंने मनोविज्ञान के अनेकानेक स्तरों पर मानव-जीवन की विविध संवेदनाओं को स्वर दिया तो छायावादी कवियों की कतार में खड़े होकर रहस्य और अध्यात्म की पृष्ठभूमि में अपने काव्यात्मक संस्कारों को विकसित कर रहस्यमय जगत के स्वप्नों में सहृदय को प्रवेश कराया।

हिन्दी एकांकी के जनक कहे जाने वाले डॉ. वर्मा का जन्म

मध्य प्रदेश के सागर जिले में 17 सितंबर, 1905 को और निधन सन् 1990 में हुआ। पिता की राजकीय वृत्ति के कारण वे विभिन्न नगरों में स्थानांतरित होते रहे। उनकी प्रारंभिक शिक्षा मध्य प्रदेश के विभिन्न स्थानों में हुई। विभिन्न स्थानों पर घूमते हुए उनकी अनुभव संपदा बढ़ती रही। शैक्षिक जीवन में ही उनके भीतर साहित्यिक और रंगमंचीय अभिरुचि पैदा हो गई थी। साथ ही तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक और मानवीय सरोकारों ने भी उनके व्यक्तित्व को गढ़ने में सहयोग दिया। मात्र सोलह वर्ष की आयु में महात्मा गांधी के राष्ट्रव्यापी असहयोग आंदोलन का उन पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि उन्होंने शैक्षिक प्रांगण से बाहर निकलकर खादी पीठ पर लादकर बेची तथा प्रभात फेरी में राष्ट्रीय चेतना से संपन्न स्वरचित गीत गाए और ओजस्वी भाषण दिए कुछ समय पश्चात वे फिर विद्यालय में प्रविष्ट हुए। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए वे प्रयाग विश्वविद्यालय गए। स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करने के बाद वे वहीं हिन्दी विभाग में प्राध्यापक नियुक्त हुए और विभागाध्यक्ष के पर पर पहुँचे। जीवन की विपरीत परिस्थितियों में भी धैर्य और संतुलन तथा निराशा और अवसाद के क्षणों में भी स्मित मुसकान एवं गंभीरता के साथ विनम्रता उनके व्यक्तित्व के कुछ खास रंग हैं, जिन्होंने उनके कलात्मक स्वरूप को भी एक विशिष्ट सज्जा दी।

कवि, नाटककार और आलोचक के रूप में डॉ. रामकुमार वर्मा ने अपने साहित्य सृजन के लिए नए आयाम खोजे। कविता में वे साधक की भूमिका में आए। अपने जीवनानुभवों से नाटकों की विषय-वस्तु तैयार की। चिंतन-मनन की तटस्थ अभिव्यक्ति ने उनके आलोचकीय व्यक्तित्व की मुद्राएँ तय कीं। इन सभी रूपों में उन्होंने हिन्दी साहित्य को जो कृतियाँ सौंपी वे इस प्रकार हैं- एकांकी संग्रह- 'पृथ्वीराज की आँखें', 'रेशमी टाई', 'चारुमित्रा', 'विभूति', 'सप्तकिरण', 'रूपरंग', 'रजतरश्मि', 'ऋतुराज', 'दीपदान', 'रिमझिम', 'इंद्रधनुष', 'पांचजन्य', 'कौमुदी महोत्सव', 'मयूर पंख', 'खट्टे-मीठे एकांकी', 'ललित एकांकी', 'कैलेंडर का आखिरी पन्ना', 'जूही के फूल'। नाटक-'विजय पर्व', 'कला और कृपाण', 'नाना फड़नवीस', 'सत्य का स्वप्न'। काव्य-'चित्ररेखा', 'चंद्रकिरण', 'अंजलि', 'अभिशाप', 'रूपराशि', 'संकेत', 'एकलव्य', 'वीर हम्मीर', 'कुल-ललना', 'चित्तौड़ की चिता', 'निशीथ', 'नूरजहां शुजा', 'जौहर', 'आकाशगंगा', 'उत्तरायण', 'कृतिका'। गद्य-गीत संग्रह-'हिमालय'। आलोचना एवं साहित्येतिहास-'कबीर का रहस्यवाद', 'इतिहास के स्वर', 'साहित्य समालोचना', 'साहित्य शास्त्र', 'अनुशीलन', 'समालोचना समुच्चय', 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' एवं 'हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास'। संपादन-'कबीर ग्रन्थावली'।

डॉ. वर्मा के साहित्यिक व्यक्तित्व को नाटककार और कवि के रूप में अधिक प्रमुखता मिली सन् 1930 में रचित 'बादल की मृत्यु' उनका पहला एकांकी है, जो फेंटेसी के रूप में अत्यंत लोकप्रिय हुआ। भारतीय आत्मा और पाश्चात्य टेकनीक के समन्वय से उन्होंने हिन्दी एकांकी कला को निखार दिया। उन्होंने ऐतिहासिक और सामाजिक दो तरह के एकांकी नाटकों की सृष्टि की। ऐतिहासिक नाटकों में उन्होंने भारतीय इतिहास से स्वर्णिम पृष्ठों से नाटकों की विषय-वस्तु को ग्रहण कर चरित्रों की ऐसी सुदृढ़ रूप रेखा प्रस्तुत की जो पाठकों में उच्च चारित्रिक संस्कार भर सके और सामयिक जीवन की समस्याओं को समाधान की दिशा दे सके। उनके नाटक भारतीय संस्कृति और राष्ट्रीय उद्‌बोधन के स्वर बखूबी समेटे हुए हैं। गर्व के साथ वे कहते हैं, 'ऐतिहासिक एकांकियों में भारतीय संस्कृति का मेरुदंड-नैतिक मूल्यों में आस्था और विश्वास का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है।' उनके सामाजिक एकांकी प्रेम और सेक्स की समस्याओं से संबंधित हैं। ये एकांकी मानसिक अंतर्द्वंद की आधार भूमि पर यथार्थवादी कलेवर में समाज और जीवन की वस्तु-स्थिति तक पहुँचते हैं। पर इन एकांकियो में लेखक की आदर्शवादी सोच इतनी गहरी है कि वे आदर्शवादी झोंक में यथार्थ को मनमाना नाटकीय मोड़ दे बैठते हैं। इसलिए उनके स्त्री पात्र शिक्षा और नए संस्कारों के बावजूद प्रेम और जीवन के संघर्ष में जीवन का मोह त्यागकर प्रेम के लिए उत्सर्ग कर बैठते हैं मानो उत्सर्ग या प्राणांत ही सच्चे प्रेम की कसौटी हो। आधुनिक पात्रों पर भी लेखक ने अपनी आदर्शवादी सोच को थोप दिया है।

कविता के क्षेत्र में डॉ. वर्मा ने एक आध्यात्मिक साधक की भूमिका के रूप में प्रेम को आराधना-साधना का माध्यम बनाकर उसी के आधार पर रहस्यवादी शैली की प्रेमाभिव्यंजना की। रहस्यवाद की चरम अभिव्यक्ति यथार्थवदी जीवन में किस तरह संभव है, इसे भी खोजा। वैयक्तिक अनुभूतियों को उद्घाटित करनेवाली उनकी कविताएँ रागात्मिका-वृत्ति के साथ-साथ बौद्धिक और दार्शनिक गहराइयों में भी उतरने का उपक्रम करती हैं। नवीन खोजों के आधार पर तर्क की जटिल समस्याओं से सुलझकर जो सत्य आलोचना के माध्यम से उनकी रचनाओं में कलमबद्ध हुआ वह भी अपने-आप में महत्वपूर्ण है।

भाषा की दृष्टि से डॉ. वर्मा एक कुशल और सजग शब्द-शिल्पी हैं। नाटकों में चित्रधर्मिता के समावेश ने भाषा में गहन प्रभावान्विति पैदा की तो काव्यात्मक स्तर पर उनकी भाषा ने अधिक कल्पनाशील, रमणीय और देशकाल की सीमाओं से परे काव्यानुभव को रचा। लेकिन भाषा की अतिरिक्त साज-संवार के मोह में गढ़े गए दीर्घ संवादों ने प्रायः उनके नाटकों के स्वाभाविक प्रवाह को अवरूद्ध भी किया।

डॉ. रामकुमार वर्मा ने अपनी विचारधारा और दर्शन की अनुभूतियों से समग्र युग, जीवन और दर्शन को एक सूत्र में पिरोने की कोशिश की। एकांकी साहित्य के विकास और वृद्धि में उन्होंने जो योगदान दिया इसके लिए वे हमेशा याद किए जाएँगे।

उदय शंकर भट्ट

उदय शंकर भट्ट का जन्म ३ अगस्त सन् 1898 को अपने ननिहाल, इटावा (उत्तर प्रदेश) में हुआ था। उनके पूर्वज गुजरात के निवासी थे और वहाँ से आकर उत्तर प्रदेश मैं बस गए थे। उनके परिवार का वातावरण साहित्य कौर संस्कृतनिष्ठ था अतः साहित्य अभिरुचि उनमें बचपन से ही उत्पादन हो गई थी। 14 वर्ष की अवस्था में ही उनके माता पिता का देहावसान हो गया था।

काशी हिंदू विश्वविद्यालय से बी.ए, पंजाब से शास्त्री परीक्षा पास किया। सन् 1913 में उनके माता पिता का देहावसान हो गया था। बहुत दिनों तक वे लाहौर में हिन्दी एवं संस्कृत के अध्यापक रहे तथा स्वतंत्रता आंदोलन में भी आप भाग लेते रहे। देश के विभाजन के बाद वे लाहौर से दिल्ली आ गए और आकाशवाणी के परामर्शदाता और निदेशक रहे। नागपुर एवं जयपुर में रेडियो केंद्रों पर भी उन्होंने सेवा की। सेवानिवृत्त होकर वे कहानी, उपन्यास, आलोचना, एवं नाटक लिखते रहे तथा 22 फरवरी सन् 1966 को उनका निधन हो गया। 'समस्याओं का अंत', 'परदे के पीछे', 'अभिनव एकाकी', 'अन्त्योदय', 'चार एकाकी', 'धूप शिखा', 'वापसी' आदि भट जी के प्रमुख एकांकी है।

उदयशंकर भट्ट ने कविता, उपन्यास, नाटक और एकांकी लिखे हैं। नाटक और एकांकी के क्षेत्र में उन्हें विशेष ख्याति मिली है। विषय की दृष्टि से उनके एकांकियों को पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, प्रतीकात्मक, समस्या प्रधान और हास्य व्यंग्यपूर्ण भागों में विभाजित किया जा सकता है। इनमें वैदिक युग से लेकर आज तक कि भारतीय जीवन धारा की संवेदना को चित्रित करने का प्रयास किया गया है। शिल्प की दृष्टि से भट्टजी के एकांकी रंगमंच और रेडियो दोनों दृष्टियों से सफल है। उन्होंने नाटकीय तकनीक में अनेक प्रयोग भी किए हैं। उनके रेडियो गीतिनाट्य बहुत सफल और लोकप्रिय हुए हैं।

उदयशंकर भट्टजी बहुमुखी प्रतिभा के धनी एकांकीकार थे। उनकी नाट्य कला युगानुरूप साहित्यिक प्रगति के अनुसार मोड़ लेती रही। उन्होंने रेडियो की दृष्टि से गीति-नाट्य प्रयोग किए। उनके गीति-नाट्यप्रयोग को भी भारी सफलता मिली। उन्होंने पौराणिक कथाओं के आधार पर भी नाटीय-रचना प्रारंभ की तथा युगानुरूप नवीन मान्यता एवं नाट्य-शैलियों को अपने एकांकियों में सन्निविष्ट किया। उन्होंने पौराणिक एकांकी, हास्य प्रधान एकांकी तथा समस्या प्रधान एकांकी, एकांकी साहित्य को प्रदान किए।

प्रमुख एकांकी हैं: समस्या का अन्त, धूमशिखा, वापसी, परदे के पीछे, अभिनव एकांकी, आज का आदमी, आदिम युग, स्त्री का हृदय, अन्त्योदय तथा चार एकांकी। भट्ट जी के प्रथम ऐतिहासिक नाटक 'विक्रमादित्य' में पश्चिमी शैली तथा दूसरी रचना 'दाहर' अथवा 'सिंह पल' में दुःखान्त पद्धति है। 'मुक्तिबोध' और 'शंका विजय' ऐतिहासिक नाटक, 'अम्बा' और 'सागर विजय' पौराणिक नाटक, 'कमला' और 'अन्तहीन अन्त' सामाजिक नाटक हैं तथा 'नया समाज' आधुनिक वर्ग का चित्र प्रस्तुत करनेवाला नाटक है। इसके अतिरिक्त भट्ट जी ने कविता, उपन्यास आदि विधाओं पर भी लिखा है।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी भट्ट जी का साहित्यिक जीवन काव्य-रचना से आरम्भ हुआ। सन् 1922 ई. से आपने नाटकों की रचना प्रारम्भ की और आजीवन नाट्य-सृजन में लगे रहे। आपने एकांकी विधा को नयी दिशा प्रदान की। रंगमंच एवं रेडियो-प्रसारण दोनों ही क्षेत्रों में आपके एकांकी सफल सिद्ध हुए हैं। किसी भी समस्या को जीवन्त रूप में प्रस्तुत कर देना भट्ट जी के एकांकियों की सर्वप्रमुख विशेषता है। आपकी नाट्य-कला देश की साहित्यिक प्रगति के साथ-साथ नया मोड़ लेती रही। भट्ट जी के एकांकी पौराणिक, हास्यप्रधान, समस्याप्रधान और सामाजिक विषयों पर आधारित हैं।

सेठ गोविंद दासः सेठ गोविंद दास, स्वतंत्रता सेनानी, सांसद तथा हिन्दी के साहित्यकार थे। उन्हें साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में सन् 1961 में पद्म भूषण से सम्मानित किया गया था। भारत की राजभाषा के रूप में हिन्दी के वे प्रबल समर्थक थे।

सेठ गोविन्द दास का जन्म 16 अक्टूबर, 1896 को सम्पन्न मारवाड़ी परिवार में हुआ था। इनके दादा गोकुल दास ने पारिवारिक व्यवसाय को उल्लेखनीय बुलन्दियों तक पहुँचाया। उनके पिता जीवन दास ने विलासी जीवन व्यतीत किया। गोविन्द दास ने घर पर ही शिक्षा ग्रहण की। उन्होंने बीस वर्ष की आयु में सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया। सन् 1923 में वे केन्द्रीय सभा के लिए चुने गये। उन्होंने महात्मा गांधी द्वारा संचालित सभी आन्दोलनों में भाग लिया तथा अनेक बार जेल गये। सेठ गोविंद दास हिन्दी के अनन्य साधक, भारतीय संस्कृति में अटल विश्वास रखने वाले, कला-मर्मज्ञ एवं विपुल मात्रा में साहित्य-रचना करने वाले, हिन्दी के उत्कृष्ट नाट्यकार ही नहीं थे, अपितु सार्वजनिक जीवन में अत्यंत स्वच्छ, नीति-व्यवहार में सुलझे हुए, सेवाभावी राजनीतिज्ञ भी थे। सेठ गोविंद दास, अंग्रेजी भाषा, साहित्य और संस्कृति ही नहीं, नृत्य, घुड़सवारी का जादू भी इन पर चढ़ा।

गांधी जी के असहयोग आंदोलन का तरुण गोविंद दास पर गहरा प्रभाव पड़ा और वैभवशाली जीवन का परित्याग कर वे दीन-दुखियों के साथ सेवकों के दल में शामिल हो गए तथा दर-दर की ख़ाक छानी, जेल गए, जुर्माना भुगता और सरकार से बगावत के कारण पैतृक संपत्ति का उत्तराधिकार भी गंवाया।

राजनीतिज्ञ के अलावा, सेठ गोविन्द दास एक जाने-माने रचनाकार भी थे। उन्होंने हिन्दी में सौ से अधिक पुस्तकों की रचना की। सेठ गोविन्द दास के नाटक का विषय भारतीय पौराणिक कलाओं और इतिहास की सम्पूर्ण अवधि को आच्छादित करता है। सेठ जी पर देवकीनंदन खत्री के तिलस्मी उपन्यासों 'चन्द्रकांता संतति' की तर्ज पर उन्होंने 'चंपावती', 'कृष्णलता' और 'सोमलता' नामक उपन्यास लिखे, वह भी मात्र सोलह वर्ष की किशोरावस्था में है।

सन् 1917 में सेठ जी का पहला नाटक 'विश्व प्रेम' छपा। उसका मंचन भी हुआ। प्रसिद्ध विदेशी नाटककार इब्सन से प्रेरणा लेकर आपने अपने लेखन में आमूल-चूल परिवर्तन कर डाला। उन्होंने नई तकनीक का प्रयोग करते हुए प्रतीक शैली में नाटक लिखे। 'विकास' उनका स्वप्न नाटक है। 'नवरस' उनका नाट्य-रूपक है। हिन्दी में मोनो ड्रामा पहले-पहल सेठ जी ने ही लिखे।

हिन्दी भाषा की हित-चिंता में तन-मन-धन से संलग्न सेठ गोविंद दास हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अत्यंत सफल सभापति सिद्ध हुए। हिन्दी के प्रश्न पर इन्होंने कांग्रेस की नीति से हटकर संसद में दृढ़ता से हिन्दी का पक्ष लिया। सेठ भारतीय संस्कृति के प्रबल अनुरागी तथा हिन्दी भाषा के प्रबल पक्षधर थे। सेठ गोविन्द दास को साहित्य एवं शिक्षा के क्षेत्र में सन् 1961 में पद्म भूषण से सम्मानित किया गया था। सेठ गोविंद दास का निधन 18 जून, 1974 को हुआ था।

Critical Overview / अवलोकन

मौलिक एकांकियों की परंपरा को आगे बढ़ाने का श्रेय सर्व प्रथम डॉ. रामकुमार वर्मा को है। डॉ.वर्मा के एकांकियों को विषय की दृष्टि से सामाजिक एवं ऐतिहासिक वर्ग में रखा जा सकता है। अपने जीवन की तात्कालिक यथार्थता के स्थान पर चिरन्तन सत्य का चित्रण किया है। उनका दृष्टि कोण आदर्शवादी है। उनके एकांकियों में भावात्मकता की भी प्रधानता है। भट्ट जी के एकांकियों का क्षेत्र पर्याप्त व्यापक है, उनमें जीवन के विभिन्न पहलुओं का चित्रण मार्मिक रूप में हुआ है। सेठ गोविन्ददास ने ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं सामयिक आदि सभी विषयों पर कलम चलाई है। उनके नाटकों एवं एकांकियों की संख्या सौ से भी ऊपर है। उनका दृष्टिकोण आदर्शवादी एवं सुधारवादी है। अतः उनमें समस्याओं का चित्रण प्रचारात्मक ढंग से होता है। इस प्रकार इन तीनों एकांकिकारों ने अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया है।

Recap / पुनरावृत्ति

- प्रस्तुत युग के प्रमुख एकांकीकार डा. रामकुमार वर्मा ने तो अनेक सामाजिक समस्या प्रधान एकांकियों की रचना करके हिन्दी एकांकी साहित्य को बहुमूल्य धरोहर प्रदान की है
- रामकुमार वर्मा ने जीवन की वास्तविकता को अपने एकांकियों का आधार बनाया
- इनमें लेखक ने युगीन सामाजिक रूढ़ियों, परम्पराओं, विरूपताओं विकृतियों, एवं अज्ञानताओं का बड़ा ही प्रभावोत्पादक किन्तु व्यंग्यात्मक चित्र उपस्थित किया है

- भाषा की दृष्टि से डॉ. वर्मा एक कुशल और सजग शब्द-शिल्पी हैं
- डॉ. रामकुमार वर्मा ने जीवन और दर्शन को एक सूत्र में पिरोने की कोशिश की
- सेठ गोविंद दास हिन्दी के अनन्य साधक, भारतीय संस्कृति में अटल विश्वास रखने वाले, कला-मर्मज्ञ एवं विपुल मात्रा में साहित्य-रचना करने वाले, हिन्दी के उत्कृष्ट नाट्यकार थे
- उनके नाटकों का कैनवास भारतीय पौराणिक कलाओं और इतिहास की सम्पूर्ण अवधि को आच्छादित करता है
- उदयशंकर भट्टजी बहुमुखी प्रतिभा के धनी एकांकीकार थे
- शिल्प की दृष्टि से भट्टजी के एकांकी रंगमंच और रेडियो दोनों दृष्टियों से सफल है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. भाषा की दृष्टि से डॉ. रामकुमार वर्मा किस तरह का रचनाकार हैं?
2. गोविंद दास पर किसका गहरा प्रभाव पड़ा है ?
3. सेठ गोविंद दास को पद्म भूषण सम्मान कब मिला था?
4. उदयशंकर भट्टजी के ऐतिहासिक नाटक कौन-कौन सा है?
5. शिल्प की दृष्टि से उदयशंकर भट्टजी के एकांकी की विशेषता क्या है?
6. सेठ गोविंद दास के नाटकों का कैनवास की विशेषता क्या है?
7. सेठ गोविंद दास के पहला नाटक कौन-सा है?

Answers/ उत्तर

1. भाषा की दृष्टि से डॉ. वर्मा एक कुशल और सजग शब्द-शिल्पी हैं।
2. गांधी जी के असहयोग आंदोलन का तरुण गोविंद दास पर गहरा प्रभाव पड़ा।
3. सन् 1961 में
4. 'मुक्तिबोध' और 'शंका विजय'
5. शिल्प की दृष्टि से भट्टजी के एकांकी रंगमंच और रेडियो दोनों दृष्टियों से सफल है।
6. उनके नाटकों का कैनवास भारतीय पौराणिक कलाओं और इतिहास की सम्पूर्ण अवधि को आच्छादित करता है।
7. सेठ गोविंद दास के पहला नाटक 'विश्व प्रेम' है।

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. हिन्दी के प्रमुख एकांकीकार पर पर्चा लिखिए।
2. उदयशंकर भट्ट के व्यक्तित्व और वकृतित्व की आलोचनात्मक अध्ययन।
3. एकांकिकार के रूप में रामकुमार वर्मा का स्थान।
4. एकांकिकार उदय शंकर भट्ट।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

5. शिल्प की दृष्टि से भट्टजी के एकांकी रंगमंच और रेडियो दोनों दृष्टियों से सफल है।
6. सेठ गोविंद दास की बहुमुखी व्यक्तित्व।
7. भाषा की दृष्टि से डॉ. वर्मा एक कुशल और सजग शब्द-शिल्पी हैं।
8. आपकी दृष्टि में हिन्दी के सबसे श्रेष्ठ एकांकिकार कौन है, क्यों?

Reference/ सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. हिन्दी नाटक-उद्‌भव और विकास - दशरथ ओझा।
2. आधुनिक नाट्य विमर्श - जयदेव तनेजा।
3. प्रसाद का कथा साहित्य - गिरीश रस्तोगी।
4. आज की कला - प्रकाश गुप्त।
5. आधुनिक हिन्दी नाटक और रंगमंच - नेमीचन्द्र जैन।

BLOCK - 06

हिन्दी निबंध तथा अन्य विधाएँ (1942 के बाद)

SGOU

इकाई 1

1942 के बाद के निबंध साहित्य का विकास

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 1942 के बाद के हिन्दी में निबंध साहित्य के विकास के बारे में समझता है
- 1942 के बाद के हिन्दी में निबंध साहित्य के सामाजिक स्थितियों से अवगत होता है
- समकालीन हिन्दी निबंध की प्रवृत्तियों से परिचय प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

वर्तमान निबंध की विशेषता विषय एवं शैली की नवीनता है। वर्तमान हिन्दी निबंध देशातीत एवं कालातीत है। समकालीन संदर्भ में निबंध-लेखक का अनिवार्य गुण होना चाहिए विषय पर पांडित्य एवं उसे प्रभावशाली ढंग में लिखने की निपुणता। निबंध की भाषा ललित होना चाहिए।

Key Themes / मुख्य प्रसंग

- विषय एवं शैली की नवीनता वर्तमान निबंध की विशेषता है।
- वर्तमान हिन्दी निबंध देशातीत एवं कालातीत मालूम होती है।
- वर्तमान काल में अन्य साहित्य विधाओं से हिन्दी निबंध विधा अधिक महत्व पा चुकी हैं।
- आजकल साहित्यिक निबंधों से अधिक सामाजिक तथा राजनीतिक विषयों के निबंध ज्यादा है। ऐसे निबंधों को पाठक अधिक पसंद करते हैं।
- समकालीन समाज में ऐसा कुछ निबंध लेखक है, जो विषय व सच्चाई को अपने धर्म व राजनीति के अनुकूल परिवर्तन कर देता है।
- डॉ. नगेन्द्र, डॉ. रामविलास शर्मा, डॉ. गुलाव राय, डॉ. नामवर सिंह, डॉ. इन्द्ननाथ मदान, प्रभाकर माचेव आदि आधुनिक हिन्दी के उल्लेखनीय निबंधकार है।

Discussion / चर्चा

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात शुक्ल युग के बाद के दौर में एक बार फिर निबंधों में वैयक्तिकता का समावेश हुआ और वह विचारों को प्रकट करने का प्रमुख एवं सशक्त माध्यम बना है। उसका आकार भी छोटा हुआ है। भाषा बोलचाल की-सी होने लगी है। उसमें तत्सम शब्दों के स्थान पर तद्भव और देशी शब्दों का प्रयोग अधिक होने लगा है। निबंध के विषयों में विविधता बढ़ने लगी है। शुक्ल युग के बाद के दौर में निबंध लेखन की कई शैलियों ने अपनी अलग पहचान बनायी। इस युग में तीन प्रमुख शैलियों ने निबंध लेखन को उत्कर्ष पर पहुँचाया। ललित निबंध, व्यंग्य निबंध और वैचारिक निबंध शैलियाँ।

वैचारिक निबंधः- शुक्ल जी के बाद भी हिन्दी वैचारिक निबंधों की परंपरा बराबर बनी रही। इस दौर के वैचारिक

निबंधों में विचार की स्पष्टता और तर्कपूर्ण चिंतन के साथ विचारधारात्मक आग्रह भी व्यक्त हुए। जैनेन्द्र कुमार, डॉ. संपूर्णानंद, रामविलास शर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, नगेंद्र आदि के निबंधों से उनकी वैचारिक दृष्टि का परिचय मिलता है। इन निबंधकारों ने अपने निबंधों के लिये समसामयिक विषय चुने।

रामविलास शर्मा (1912-2000ई०)

उनका जन्म 10 अक्तुबर (1912ई०) उन्नाव जिला (उ.प्र.) में हुआ और निधन 30 मई (2000ई०) में। रामविलास शर्मा के महत्वपूर्ण निबंध संग्रहःप्रगति और परंपरा (1949ई०), साहित्य और संस्कृति (1949ई०), भाषा साहित्य और संस्कृति (1954ई०), प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ (1954ई०), लोक जीवन और साहित्य (1955ई०), स्वाधीनता और राष्ट्रीय साहित्य (1956ई०), विराम चिह्न (1957ई०), परम्परा का मूल्यांकन (1981ई०), भाषा युग-बोध और कविता (1981ई०), कथा विवेचन और गद्य-शिल्प (1982ई०), आस्था और सौंदर्य (1961ई०), साहित्य-स्थाई मूल्य और मूल्यांकन (1968ई०), परम्परा का मूल्यांकन (1981ई०), भाषा युग-बोध और कविता (1981ई०), कथा विवेचन और गद्य-शिल्प (1982ई०) भारतेंदु युग और हिन्दी भाषा की विकास परंपरा (1985ई०)।

डॉ. नगेन्द्र (1915-1999ई०)

इनका जन्मः 9 मार्च (1915ई०) अतरौली, अलीगढ़ (उ.प्र.) में हुआ था और निधनः 27 औक्तुबर (1999ई०) नई दिल्ली में। डॉ. नगेन्द के प्रमुख निबंध संग्रहःविचार और अनुभूति (1949ई०)

रामवृक्ष बेनीपुरी (1899-1968ई०)

इनका जन्मः 23 दिसंबर, (1899ई०) में और निधनः (1968ई०) में हुआ। रामवृक्ष बेनीपूरी महान विचारक, चिन्तक, मनन करने वाले क्रान्तिकारी साहित्यकार, पत्रकार, संपादक थे। वे हिन्दी साहित्य के शुक्लोत्तर युग के प्रसिद्ध साहित्यकार थे। रामवृक्ष बेनीपुरी के महत्वपूर्ण निबंध संग्रहः-माटी की मुरते- (1941-45ई०), गेहूँ और गुलाब- (1948-50ई०), वन्देवाणी और विनायकी (1953- 54ई०)।

ललित निबंधः- ललित निबंध में लालित्य अर्थात् सरस शैली के उत्कर्ष पर विशेष बल होता है। निबंधकार अपने भावों और विचारों को इस रूप में प्रस्तुत करना चाहता है जो सरस, अनुभूतिजन्य, आत्मीय और रोचक लगे। जिसमें भाषा शुष्क न हो बल्कि उसमें कल्पनाशीलता, सहजता और सरसता हो। ललित निबंधकार गहरे विश्लेषण, उबाऊ वर्णन, जटिल वाक्य-रचना से बचता है। ललित निबंधों में रचनाकार के व्यक्तित्व की छाप पडती है। ललित निबंधकारों में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र आदि प्रमुख निबंधकार उल्लेखनीय हैं।

हजारी प्रसाद द्विवेदी (1907-1979ई०)

ये ललित निबंधकार है। इनका जन्मः (19 अगस्त 1907ई०) बलिया जिला (उ.प्र.) में और निधनः 19 मई, 1979ई० में हुआ। बचपन का नामः वैद्यनाथ द्विवेदी था और उपनामः व्योमकेश दरवेश, आधुनिक वाणभट्ट। इन्होंने लगभग 200 सौ निबंध लिखें। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के बाद हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ निबंधकार है। इनका प्रथम निबंध- 'बसंत आ गया' (1942ई०) में लिखा गया। हजारी प्रसाद द्विवेदी के महत्वपूर्ण निबंध संग्रहः

'अशोक के फूल' (1948ई०) यह निबंध और निबंध संग्रह दोनों है। इस संग्रह में 21 निबंध है।, 'कल्पलता' (1951ई०) इसमें निबंधों की संख्या 21 है।, 'मध्यकालीन धर्म साधना' (1952ई०) निबंध संग्रह है। इसमें निबंधों की संख्या 20 है। विचार और वितर्क (1957ई०) इसमें निबंधों की संख्या 28 है। विचार प्रवाह (1959ई०) इसमें कूल निबंधों की संख्या 21 है। कुटज (1964ई०) इसमें निबंधों की संख्या 16 है। ('कुटज' निबंध भी है इसका प्रकाशन वर्ष 1960ई० में हुआ), साहित्य सहचर (1965ई०) निबंध संग्रह है। इसमें निबंधों की संख्या 12 है।, आलोक पर्व (1972ई०) इसमें निबंधों की संख्या 14 है। आलोक पर्व के लिए 1973ई० में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। हजारी प्रसाद द्विवेदी के समस्त निबंधों का प्रकाशन 'हजारी प्रसाद ग्रंथावली' के नाम से हो चुका है। इसमें 11 खडं है इस ग्रंथावली में इनके 194 निबंध है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों का वर्गीकरणः

संस्कृति निबंध- संस्कृतियों का संगम, भारत की सांस्कृतिक समस्या, भारतीय संस्कृति की देन। साहित्यिक निबंध- मनुष्य की सर्वोत्तम कृति साहित्य, साहित्य का नया कदम, साहित्य की मौलिकता का प्रश्न। भाषा संबंधित निबंध- संस्कृत और हिन्दी, हिन्दी प्रचार की समस्या। शास्त्रीय निबंध- काव्यकला, रस क्या है, रस का व्यावहारिक अर्थ, आलोचना का स्वतंत्र मान। प्रकृति विषयक निबंध- आम फिर बौरा गए, शिरीष के फूल, अशोक के फूल। ज्योतिष से संबंधित निबंध- भारतीय फलित ज्योतिष।

व्यंग्य निबंधः- हिन्दी व्यंग्य निबंधों का प्रारंभ भारतेंदु युग में हुआ था। उस दौर में स्वयं भारतेंदु ने तथा प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट आदि ने कई व्यंग्य निबंध लिखे, लेकिन बाद में व्यंग्य निबंध लिखने की परंपरा शिथिल हो गयी। यद्यपि आचार्य रामचंद्र शुक्ल, बाबू गुलाब राय, रामविलास शर्मा आदि के निबंधों में व्यंग्य और विनोद का भाव दिखायी पडता है किंतु अधिकांश निबंधकारों में वह बात नहीं थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद व्यंग्य निबंध के नये युग की शुरुआत हुई। इसका श्रेय हरिशंकर परसाई को है जिन्होंने व्यंग्य को एक स्वतंत्र साहित्य-रूप की तरह प्रतिष्ठित किया।

हरिशंकर परसाई (1924-1995ई०)

इनका जन्मः 22 अगस्त (1924ई०) होशंगाबाद में हुआ था और निधनः 10 अगस्त (1995ई०) में। हरिशंकर परसाई के महत्वपूर्ण निबंध संग्रहः पगडंडियों का ज़माना (1966ई०), जैसे उनके दिन फिरे (1963ई०), सदाचार का ताबीज (1967ई०), शिकायत मुझे भी है (1970ई०), ठिठुरता हुआ गणतंत्र (1970ई०), वैष्णव का फिसलन (1967ई०), विकलांग श्रद्धा का दौर (1980ई०), भूत के पाँव पीछे (1983ई०), बेईमानी की परत (1983ई०), सुनों भाई साधो (1983ई०), तुलसीदास चन्दन घिसे (1986ई०), कहत कबीर (1987ई०), हँसते हैं रोते है (1993ई०), तबकी बात और थी (1993ई०), ऐसा भी सोचा जाता है (1993ई०), पाखण्ड का अध्यात्म (1998ई०), आवारा भीड़ के खतरे (1998ई०), निंदा रस।

1942 के बाद के हिन्दी निबंध लेखन की परंपरा अत्यंत समृद्ध है। शुक्लोत्तर युग में साहित्यिक, भावप्रवण, चिंतनप्रधान उच्चकोटि के निबंध लिखने वाले लेखकों में अज्ञेय, कन्हैलाल मिश्र, प्रभाकर माचवे, शिवप्रसाद सिंह, गजानन माधव मुक्तिबोध, धर्मवीर भारती, रघुवीर सहाय आदि प्रमुख हैं।

Critical Overview / अवलोकन

आजकल हिन्दी निबंधों की दुनिया में कोई भी विषय अनभिज्ञ नहीं रहता है। निबंध का पूर्व रूप संदर्भ, रचना, प्रस्ताव, लेख है। तथ्यपरक एवं विकसित रूप प्रबंध, लघु प्रबंध एवं शोध प्रबंध है। जिस प्रकार वाक्य का विस्तृत रूप प्रोक्ति है उसी प्रकार निबंध का विस्तृत एवं व्यापक रूप प्रबंध है जिसमें व्यवस्थित क्रमानुसार ठीक से परस्पर एक दूसरे से बंधे हुए अनेक निबंध होते हैं। विचारों के बिखराव को रोकना या व्यवस्थित रूप से बांधकर विशिष्ट रूप देना निबंध कहलाता है। निबंध में उस व्यवस्था पर विशेष बल दिया गया है जहाँ विचार व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत हो जाता है।

Recap / पुनरावृत्ति

- 1942 के बाद के निबंधों में साहित्यिक और आलोचनात्मक निबंधों की प्रधानता है
- शुक्ल युग के बाद के दौर में निबंध लेखन की कई शैलियों ने अपनी अलग पहचान बनायी
- इन निबंधों में विषय विविधता पर्याप्त है
- नवीन शिल्प विधान भी है
- इन युग में संवेदनशीलता और सामाजिकता पर निबंध लिखे गए
- सम-सामयिक समस्याओं का चित्रण है
- मनोविश्लेष्णात्मक निबंध भी लिखे गए
- विद्वानों ने निबंध की कुछ विशेषताएँ बतायी है। यह विशेषताओं का पालन न होती तो निबंध अनुपयोगी और अनावश्यक रचना बनेगी
- निबंध का पूर्व रूप संदर्भ, रचना, प्रस्ताव, लेख है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. सदाचार का ताबीज किसकी रचना है?
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी के बचपन का नाम क्या था?
3. विराम चिह्न किसकी रचना है?
4. डॉ. नगेन्द्र के निबंध संग्रह का नाम क्या है?
5. किस तरह के निबंधों को पाठक अधिक पसंद करते हैं?
6. वर्तमान हिन्दी निबंधों की विशेषता क्या है?
7. निबंध की भाषा कैसी होनी चाहिए?
8. निबंधकार भाषा पर क्यों ज़ोर देते हैं?

Answers/ उत्तर

1. हरिशंकर परसाई
2. वैद्यनाथ द्विवेदी
3. रामविलास शर्मा
4. विचार और अनुभूति
5. सामाजिक तथा राजनीतिक विषयों के निबंध ज्यादा है।
6. विषय एवं शैली की नवीनता वर्तमान निबंध की विशेषता है।
7. निबंध की भाषा ललित होनी चाहिए।
8. निबंधकार भाषा पर इसलिए अधिक बल देता है कि निबंध की शक्ति अच्छी भाषा पर अधिष्ठित है।

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. 1942 के बाद के हिन्दी निबंध साहित्य के उद्‌भव एवं विकास का परिचय दीजिए।
2. आतंकवाद- विषय में एक निबंध तैयार कीजिए।
3. उच्च शिक्षा में मुक्त विश्वविद्यालयों की आवश्यकता- विषय में एक निबंध लिखिए।
4. वर्तमान काल में अन्य साहित्य विधाओं से हिन्दी निबंध विधा अधिक महत्व पा चुकी हैं।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

इकाई 2

प्रमुख निबंधकार

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- 1942 के बाद के हिन्दी निबंध साहित्य के प्रमुख निबंधकारों से परिचय प्राप्त करता है
- प्रमुख निबंधों से परिचय प्राप्त करता है
- निबंधों में चित्रित विविध विषयों से अवगत होता है
- व्यंग्य निबंधकार और उनके निबधों से परिचय प्राप्त करता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

1942 के बाद के निबंधों में बौद्धिक संवेदना का प्रखर चिंतन हुआ है। इस समय के निबंधकारों में अज्ञेय आधुनिक हिन्दी साहित्य के अत्यंत विशिष्ट निबंधकार है। व्यंग्य निबंधकारों में हरिशंकर परसाई जी एक ऐसे व्यंगकार है, जिन्होंने समाज, राजनीति, धर्म के क्षेत्र में व्याप्त पाखण्ड पर करारी चोट की।

Key Themes/ मुख्य प्रसंग

- अज्ञेय
- रामविलास शर्मा
- नगेन्द्र
- अमृतराय
- मुक्तिबोध
- धर्मवीर भारती
- हरिशंकर परसाई
- नामवर सिंह

Discussion / चर्चा

अज्ञेय

अज्ञेय आधुनिक हिन्दी साहित्य के अत्यंत विशिष्ट लेखक रहे हैं। वह आधुनिक दृष्टि और अनुभव से संपन्न एक विचारक, कवि के रूप में सर्वमान्य हैं। अज्ञेय को नई कविता का शालाका पुरुष कहा जाता है। कविता, उपन्यास, कहानी के अतिरिक्त अज्ञेय ने अनेक महत्वपूर्ण निबंधों की भी रचना की है। इनके निबंध को तीन भागों में विभक्त किया जाता है- एक साहित्य चिंतन संबंधी विचारात्मक निबंध, दो यात्रा परक निबंध और तीन आत्मव्यंजक निबंध। सबरंग और कुछ राग, आलवाल, भवंती, अंतरा, लिखी कागज कोरे, अद्यतन जोगलिखी, धार और किनारे अज्ञेय के महत्वपूर्ण निबंध संग्रह हैं। इनके निबंधों में बौद्धिक संवेदना का प्रखर चिंतन और भाषा का सौंदर्य पूर्णरूप देखने को मिलता है। अज्ञेय ने हिन्दी निबंध को सांस्कृतिक संवेदना के संप्रेषण का माध्यम

बनाया और प्रमाणित किया कि व्यक्तित्व संपन्नता और अहं का विसर्जन कविता की ही तरह निबंध का मौलिक गुण भी है। बौद्धिक और रागात्मक संवेदना में गहरे रचे हुए अज्ञेय के निबंध सच्चे अर्थों में निबंध कहे जा सकते हैं, जिनमें बंधन और मुक्ति का सार्थक अद्वैत दिखाई देता है।

अज्ञेय के निबंधों उनका एवं समृद्ध व्यक्तित्व झलकता हुआ प्रतीत होता है। अज्ञेय के पास देश विदेश का व्यापक अनुभव है। वे पश्चिमी साहित्य एवं संस्कृति से भलीभांति परिचित हैं और उनका उतना ही सरोकार भारतीय परंपरा से भी था। विदेश साहित्य, संस्कृति और विचार दर्शन का प्रभाव भी इनके निबंधों में देखने को मिलता है। गहरी रागात्मकता, तटस्थता और प्रखर चिंतन इनके निबंधों की विशेषता है। अज्ञेय की भाषा में उपयुक्त शब्द चयन, व्यवस्थित वाक्य रचना, विशेषणों का सभिप्राय प्रयोग और विचलन, नए उपमानों और प्रतीकों की खोज, मिथकों की नई व्याख्या और मुहावरे के सार्थक प्रयोग आपके निबंधों की विशिष्टता है। निजीपन और प्रांजलता आपके साहित्य में सर्वत्र देखने को मिलती है।

अज्ञेय के निबंधों में मूल्यों की खोज की चिंता दिखाई देती है। भाषा को लेकर जितना गहरा विश्लेषण इनके निबंधों में मिलता है, वैसा आधुनिक साहित्य में दुर्लभ है। कला साहित्य और संस्कृति उनके निबंधों के मुख्य विषय हैं। इन्हें प्रयोगधर्मा साहित्यकार कहा गया है। और यह प्रयोगधर्मिता उनके निबंध में भी सर्वत्र देखने को मिलती है। अज्ञेय के निबंधों में आत्मा व्यंजना की तटस्थता और मूल्यचिंता का विलक्षण संयोग देखने को मिलता है। इनके निबंध ने हिन्दी निबंध विधा को नया रचनात्मक संस्कार दिया है। व्यंग्य, लाक्षणिकता और बिम्बविधायनी शक्ति के कारण इनके निबंधों की भाषा अत्यंत समृद्ध है।

अपनी बात को बहुत ही तर्कपूर्ण तरीके से अज्ञेय ने रखा है। अज्ञेय इन्हीं अर्थों में एक विशिष्ट रचनाकार हैं कि बातों के कहने के ना जाने कितने ढंग उन्हें मालूम हैं,इसी कारण उन्होंने हिन्दी साहित्य में नए प्रयोगों का मार्ग प्रशस्त किया।

रामविलास शर्मा:

डॉ. रामविलास शर्मा हिन्दी प्रगतिवादी समीक्षा-पद्धति के एक प्रमुख स्तम्भ थे। रामविलास शर्मा का जन्म 10 अक्टूबर, 1912 ई. में उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में उच्चगाँव सानी में हुआ था। उन्होंने 'लखनऊ विश्वविद्यालय' से अंग्रेज़ी में एम.ए. किया और फिर पी-एच.डी. की उपाधि सन् 1938 में प्राप्त की। सन् 1938 से ही आप अध्यापन क्षेत्र में आ गए। 1943 से 1974 तक रामविलास शर्मा ने 'बलवंत राजपूत कालेज', आगरा में अंग्रेज़ी विभाग में कार्य किया और अंग्रेज़ी विभाग के अध्यक्ष रहे। इसके बाद कुछ समय तक 'कन्हैयालाल माणिक मुंशी हिन्दी विद्यापीठ', आगरा में निदेशक पद पर भी रहे।

डॉ. रामविलास शर्मा ने अपने उग्र और उत्तेजनापूर्ण निबन्धों से हिन्दी समीक्षा को एक गति प्रदान की है। इन्होंने सम्पूर्ण साहित्य नये और पुराने को मार्क्सवादी दृष्टिकोण से देखने-परखने का प्रस्ताव बड़ी क्षमता के साथ किया है। शर्मा जी ने सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों समीक्षा-पद्धतियों से अपने विचारों को पुष्ट करने का यत्न किया है। 'समालोचक' नामक एक पत्र भी इनका प्रकाशित हुआ। उनका लेखन काफ़ी हद तक ऐसे पूर्वाग्रहों से मुक्त है। इन्होंने इतिहास को समझने की जो दृष्टि दी, वह अल्पसंख्यक, दलित और स्त्री के नजरिए से तो इतिहास को परखती ही है, साथ ही साम्राज्यवादी यूरो-केंद्रित इतिहास-दृष्टि का खंडन भी करती है। रामविलास जी इस बात पर आश्चर्य प्रकट करते हैं कि पता नहीं कैसे लोग औपनिवेशिक और साम्राज्यवादी दृष्टिकोण से लिखे गए इतिहास पर विश्वास करते हैं? इसके लिए वे अशिक्षा को जिम्मेदार ठहराते हुए लिखते हैं, 'अग्रेजी राज ने यहाँ शिक्षण व्यवस्था को मिटाया, हिंदुस्तानियों से एक रुपए ऐंठ तो उसमें से छदाम शिक्षा पर खर्च किया। उस पर भी अनेक इतिहासकार अंग्रेज़ों पर बलि-बलि जाते हैं।'

रामविलास जी अंग्रेज़ों को उस हद तक प्रगतिशील भी नहीं मानते, जितना अन्य विद्वान् मानते हैं। अंग्रेज़ों की प्रगतिशील भूमिका पर प्रश्नचिह्न लगते हुए ये लिखते हैं कि 'अंग्रेज़ उदारपंथियों के आदर्श प्रजातंत्र संयुक्त राज्य अमरीका में ग़ुलामों से खेती कराके बड़ी-बड़ी रियासतें कायम की गई थीं। ग़ुलामों के व्यापार से लाभ उठानेवालों में अंग्रेज़ सौदागर सबसे आगे थे। यह ग़ुलामी प्रथा न तो पूँजीवादी थी, न सामंती थी; समाजशास्त्र के पंडित उसे सामंतवाद से भी पिछड़ी हुई प्रथा मानते हैं। इस प्रथा का विकास और प्रसार करके अंग्रेज़ सौदागरों ने कौन-सा प्रगतिशील काम किया कहना कठिन है।' स्पष्ट है कि रामविलास जी अंग्रेज़ों की प्रगतिशील भूमिका का मूल्यांकन तथ्यों की कसौटी पर करते हैं, इसीलिए वे उन्हें उतने प्रगतिशील नहीं लगते जितने अन्य विद्वानों को लगते हैं। शायद इसी कारण से डॉ रामविलास शर्मा अंग्रज़ों की प्रगतिशील भूमिका का समर्थन करने के बजाय अपने लेखन में

उन भारतीय तत्वों को उभारने का प्रयास करते हैं जो अंग्रज़ों से भिन्न और कहीं अधिक प्रगतिशील थे।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के बाद डॉ. रामविलास शर्मा ही एक ऐसे आलोचक के रूप में स्थापित होते हैं, जो भाषा, साहित्य और समाज को एक साथ रखकर मूल्यांकन करते हैं। उनकी आलोचना प्रक्रिया में केवल साहित्य ही नहीं होता, बल्कि वे समाज, अर्थ, राजनीति, इतिहास को एक साथ लेकर साहित्य का मूल्यांकन करते हैं। अन्य आलोचकों की तरह उन्होंने किसी रचनाकार का मूल्यांकन केवल लेखकीय कौशल को जाँचने के लिए नहीं किया है, बल्कि उनके मूल्यांकन की कसौटी यह होती है कि उस रचनाकार ने अपने समय के साथ कितना न्याय किया है। इतिहास की समस्याओं से जूझना मानो उनकी पहली प्रतिज्ञा हो। वे भारतीय इतिहास की हर समस्या का निदान खोजने में जुटे रहे। उन्होंने जब यह कहा कि आर्य भारत के मूल निवासी हैं, तब इसका विरोध हुआ था। उन्होंने कहा कि आर्य पश्चिम एशिया या किसी दूसरे स्थान से भारत में नहीं आए हैं, बल्कि सच यह है कि वे भारत से पश्चिम एशिया की ओर गए हैं।

नगेन्द्रः

डॉ. नगेन्द्र जी ने अपनी प्रखर कलम के द्वारा हिन्दी निबन्ध साहित्य की गरिमा को अद्वितीय बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वाहित की। उनके द्वारा कृत 'मेरा व्यवसाय' और 'साहित्य सृजन' शीर्षक इस निबन्ध लेखक की आत्मपरक शैली का प्रतीक है। इस रचना में नगेन्द्र जी ने अपने आपको अपनी ही दृष्टि से देखा तथा परखा है। यह निबन्ध अध्यापकों-अध्यापिकाओं के लिये विशेषतः उपादेय है। डॉ. नगेन्द्र का यह मानना था कि 'अध्यापक वृत्तितः व्याख्याता और विवेकशील होता है। ऊँची श्रेणी के विद्यार्थियों और अनुसन्धाताओं को काव्य का मर्म समझाना उसका व्यावसायिक कर्तव्य व कर्म है।' उन्होंने यह भी लिखा है कि 'अध्यापन का, विशेषकर उच्च स्तर के अध्यापन का, साहित्य के अन्य अंगों के सृजन से सहज सम्बन्ध न हो, परन्तु आलोचना से उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध है।' कक्षा के मंच पर अध्यापक किसी साहित्यिक समस्या को लेकर स्वयं निर्णय ले सके तथा शिक्षार्थी वर्ग की निर्णय शक्ति का विकास कर सके। यह निश्चय ही अध्यापक के धर्म की परिधि कहलाती है।

डॉ. नगेन्द्र के निबन्धों की भाषा शुद्ध, परिष्कृत, परिमार्जित, व्याकरण सम्मत तथा साहित्यिक खड़ी बोली है। गद्य भाषा की प्रमुख विशेषता यह है कि वह विषयानुरूप अपना स्वरूप बदलती चलती है। निबन्धों में सर्वत्र भाषा का रूप साफ सुथरा, शिष्ट, मधुर एवं समर्थ लक्षित होता है। भारत भूषण अग्रवाल ने नये शब्दों के निर्माण की दृष्टि से डॉ. नगेन्द्र का अवदान सर्वोपरि माना है। नगेन्द्र जी सामान्यतः गम्भीर तथा चिन्तन-प्रधान निबन्धकार के रूप में जाने जाते हैं। साहित्यिक आलोचनात्मक निबन्ध लेखन के आधार पर उन्होंने साहित्य की प्रभूत सेवाएँ की हैं। उनके निबन्धों में विचार-गाम्भीर्य, चिन्तन की मौलिकता तथा शैली की रोचकता का सहज समन्वय लक्षित होता है।

डॉ. नगेन्द्र की निबन्ध लेखन की शैली में भावों एवं विचारों को अभिव्यक्ति प्रदान करने की अद्भुत क्षमता लक्षित होती है। उनकी लेखन शैली अंग्रेज़ी साहित्य से प्रभावित रही है। इसका कारण यह है कि वह अंग्रेज़ी साहित्य से सम्पूर्णतः प्रभावित और प्रेरित होकर हिन्दी साहित्य की साधना के मार्ग पर चले थे। उनके 'निबन्ध साहित्य' में निम्नलिखित शैलियों का व्यवहार सम्यक रूपेण लक्षित होता है।

अमृतराय

अमृतराय प्रसिद्ध उपन्यासकार, निबन्धकार, समीक्षक तथा अनुवादक थे। वे कहानी सम्राट कहे जाने वाले प्रेमचंद के छोटे पुत्र थे। पिता की तरह अमृतराय मूलतः कहानीकार व उपन्यासकार थे। श्रेष्ठ अनुवादक व जीवनीकार के रूप में भी उनकी ख्याति थी। इसके साथ ही एक व्यंग्यकार और समालोचक के रूप में भी वे जाने जाते थे। प्रेमचंद की जीवनी 'कलम का सिपाही' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से उन्हें सम्मानित किया गया था। नाट्य-लेखन में भी सक्रिय रहे। अंग्रेज़ी, बंगला और हिन्दी पर अमृतराय को समान अधिकार प्राप्त था।

अमृतराय का जन्म सन् 1921 में उत्तर प्रदेश के वाराणसी (वर्तमान बनारस) में हुआ था। वे प्रसिद्ध लेखक और उपन्यासकार प्रेमचन्द के सुपुत्र थे। प्रगतिशील साहित्यकारों में अमृतराय महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। अमृतराय का विवाह सुभद्रा कुमारी चौहान की बेटी सुधा चौहान से हुआ था। इनकी पत्नी सुधा ने सुभद्रा कुमारी चौहान तथा अपने पिता लक्ष्मण सिंह जी की संयुक्त जीवनी 'मिला तेज से तेज' नामक शीर्षक से लिखी थी।

'साहित्य में संयुक्त मोर्चा', 'सुबह का रंग', 'लाल धरती', 'नई समीक्षा', 'नागफनी का देश', 'हाथी के दांत',

‘अग्निशिखा’, ‘फाँसी के तख्ते से’, ‘कस्बे का एक दिन’, ‘गीली मिट्टी’, ‘कठघरे’, ‘जंगले’, ‘सहचिंतन’, ‘भटियाली’, ‘आधुनिक भावबोध की संज्ञा’, ‘बतरस’, ‘चतुरंग’, ‘सारंग’ और ‘धुआं’।

धर्मवीर भारती:

धर्मवीर भारती का जन्म 25 दिसंबर 1926 को इलाहाबाद के ‘अतरसुइया’ नामक मोहल्ले में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री. चिरंजीवलाल वर्मा और माता का नाम श्रीमती चंदादेवी था। भारती के पूर्वज पश्चिमी उत्तर प्रदेश में शाहजहाँपुर ज़िले के ‘ख़ुदागंज’ नामक क़स्बे के ज़मीदार थे। पेड़, पौधों, फूलों और जानवरों तथा पक्षियों से प्रेम बचपन से लेकर जीवन पर्यन्त रहा। संस्कार देते हुए बड़े लाड़ प्यार से माता पिता अपने दोनों बच्चों धर्मवीर और उनकी छोटी बहन वीरबाला का पालन कर रहे थे कि अचानक उनकी माँ सख्त बीमार पड़ गयीं दो साल तक बीमारी चलती रही। बहुत खर्च हुआ और पिता पर कर्ज़ चढ़ गया। माँ की बीमारी और कर्ज़ से वे मन से टूट से गये और स्वयं भी बीमार पड़ गये।

धर्मवीर भारती जी एक प्रतिभाशाली कवि, कथाकार एवं नाटककार थे। अपने द्वारा रचित कहानियों और उपन्यासों में इन्होने सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्यायों को उठाते हुए बड़े ही जीवन्त रूप में प्रस्तुत किया है, अपनी भाषा में परिमार्जित खड़ी बोली का प्रयोग किया साहित्य में इनके इतने अधिक योगदान के कारण साहित्य जगत की विभिन्न प्रकार की पुरस्कारों से नवाजा गया, इनकी लेखन शैली इतनी खुबसूरत थी की जिस भी साहित्यिक विधा को इनका स्पर्श हुआ वह विधा अमर हो गयी! ‘गुनाहों का देवता’ जैसा सशक्त उपन्यास लिखकर इन्होंने अपनी लेखनी का बखुबी परिचय हिन्दी साहित्य को दिया। ठेले पर हिमालय, सकहनी अनकहनी, पश्यंती, साहित्य विचार और स्मृति आदि उनकी अमर ग्रंथ है।

हरिशंकर परसाई:

हरिशंकर परसाई का जन्म 22 अगस्त 1924 ई. को मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के जमानी नामक गाँव में हुआ था। परसाई के पिता का नाम जुमक लालू प्रसाद एवं माता जी का नाम चम्पा बाई था। बचपन में ही इनके माता-पिता की मृत्यु हो गयी थी। फलतः इनका जीवन बड़ी ही कठिनाईयों में गुजरा। परसाई जी का पूरा बचपन अपनी बुआ के पास रहकर बिता।

इनकी प्रारंभिक शिक्षा अपने गाँव में ही संपन्न हुई थी। हरिशंकर परसाई ने नागपुर विश्वविद्यालय से परास्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की। मैट्रिक की परीक्षा पास करने के बाद वे 18 वर्ष की आयु में वन विभाग में नौकरी काम करने लगे। किंतु 1942 ई. में इन्होंने यह सरकारी नौकरी छोड़ दी।

हरिशंकर परसाई ने कई सारे सरकारी और निजी विद्यालयों में अध्यापन का कार्य किया। यहीं से उनके लेखन कार्य की शुरुआत हुई। प्रारंभ में उन्होंने एक व्यंग लेखक के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त की। लेकिन आगे चलकर उन्होंने सामाजिक चेतना सम्बन्धी विषयों पर भी लिखना शुरू किया। 1982 ई. में इन्हें विकलांग श्रद्धा का दौर के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। हरिशंकर परसाई की मृत्यु 10 अगस्त 1995 ई. को हो गई।

परसाई जी की रचनाओं में व्यंग्य के अनुरूप भाषा का प्रयोग हुआ है। इनकी रचनाओं में बोलचाल के शब्दों, शब्दों तथा विदेशी भाषा के शब्दों का प्रयोग हुआ है। अर्थ की दृष्टि से इनका शब्द-चयन अत्यन्त सार्थक है। लक्षणा एवं व्यंजना का कुशल प्रयोग पाठकों को प्रभावित करता है। भाषा के प्रवाह के लिए इन्होंने यत्र-तत्र मुहावरों और कहावतों का भी प्रयोग किया है। परसाई जी सरल भाषा के पक्षपाती हैं। उनके वाक्य छोटे-छोटे एवं व्यंग्य प्रधान हैं। संस्कृत शब्दों के साथ-साथ उर्दू एवं अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी वे पर्याप्त मात्रा में करते हैं। उनकी व्यंग्य रचनाओं में हास्य व्यंग्य शैली के साथ-साथ प्रतीकात्मक शैली, वर्णनात्मक शैली, व्याख्यात्मक शैली, सूत्रशैली आदि का प्रयोग भी हुआ है। भाषा में लाक्षणिकता का प्रयोग भी वे करते हैं।

हरिशंकर परसाई जी एक ऐसे व्यंग्याकार हुए जिन्होंने समाज, राजनीति, धर्म के क्षेत्र में व्याप्त पाखण्ड पर करारी चोट की है। उनकी व्यंग्य रचनाएं हिन्दी जगत में आदर से पढ़ी जाती हैं। समाज में व्याप्त विसंगतियों पर उन्होंने करारा प्रहार कर चेतना को झकझोरने का स्तुत्य प्रयास किया है।

कहानी-संग्रह- हँसते हैं रोते हैं, जैसे उनके दिन फिरे।

उपन्यास- रानी नागफनी की कहानी तट की खोज।

निबन्ध-संग्रह- तब की बात और थी, भूत के पाँव पीछे, बेईमान की परत, पगडण्डियों का जमाना, सदाचार का ताबीज, शिकायत मुझे भी हे, और अन्त में, तिरछी रेखाएँ, ठिठुरता गणतन्त्र, विकलांग श्रद्धा का दौर, मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ। सम्पादन-वसुधा (पत्रिका)।

हरिशंकर परसाई की भाषा-शैलीः

परसाईजी एक सफल व्यंग्याकार हैं। वे व्यंग्य के अनुरूप ही भाषा लिखने में कुशल हैं। लक्षणा एवं व्यंजना के कुशल प्रयोग इनके व्यंग्य को पाठक के मन तक पहुँचाने में समर्थ रहे हैं। इनकी भाषा में यत्र-तत्र मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग हुआ है, जिससे भाषा में प्रवाह आ गया है। परसाईजी की रचनाओं मं व्यंग्यात्मक शैली, विवरणात्मक शैली तथा कथानक शैली के दर्शन होते हैं।

सम्मानः हरिशंकर परसाई जी को "विकलांग श्रद्धा का दौर" रचना के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

हिन्दी साहित्य में स्थानः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि हरिशंकर परसाई जी ने सामाजिक रूढ़ियों, राजनीतिक विडम्बनाओं तथा सामयिक समस्याओं पर व्यंग्य किया है और यथेष्ट कीर्ति पाई है। ये एक सफल व्यंग्यकार के रूप में स्मरणीय रहेंगे। उनकी व्यंग्य रचनाएँ हिन्दी जगत में बड़े आदर की वस्तु हैं तथा एक व्यंग्यकार के रूप में परसाई जी को हिन्दी साहित्य में पर्याप्त यश प्राप्त हुआ है।

नामवर सिंहः

(जन्मः 28 जुलाई 1926 वाराणसी (अब चन्दौली) उत्तर प्रदेश, निधनः 19 फरवरी 2019 नयी दिल्ली) नामवर सिंह का जन्म 28 जुलाई 1926ई० को बनारस (वर्तमान में चंदौली ज़िला) के एक गाँव जीयनपुर में हुआ था। उन्होंने हिन्दी साहित्य में एम.ए. व पी-एच.डी. करने के पश्चात बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्यापन किया, लेकिन 1959 में चकिया चन्दौली के लोकसभा चुनाव में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के उम्मीदवार रूप में चुनाव लड़ने तथा असफल होने के बाद उन्हें बी.एच.यू. छोड़ना पड़ा। इसके बाद उन्होंने क्रमशः सागर विश्वविद्यालय और जोधपुर विश्वविद्यालय में भी अध्यापन किया। बाद में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में उन्होंने काफी समय तक अध्यापन कार्य किया। अवकाश प्राप्त करने के बाद भी वे उसी विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केन्द्र में इमेरिट्स प्रोफेसर रहे। वे हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी, अपभ्रंश, भोजपुरी, उर्दू, बाङ्ला एवं संस्कृत भाषा भी जानते थे। 19 फरवरी 2019 में उनका निधन हो गया। उन्होंने हिन्दी आलोचना को नयी पहचान दिलायी। वे वास्तव में नामवर सच्चा आलोचक थे।

डॉ. नामवर सिंह हिन्दी के मूर्धन्य आलोचक, सम्पादक, वक्ता एवं विद्वान रहे हैं। छायावाद, कविता के नए प्रतिमान, दूसरी परम्परा की खोज, वाद विवाद संवाद इत्यादि उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं। नामवर सिंह शीर्षस्थ शोधकार-समालोचक, निबन्धकार तथा मूर्द्धन्य सांस्कृतिक-ऐतिहासिक उपन्यास लेखक हजारी प्रसाद द्विवेदी के प्रिय शिष्य रहे। अत्यधिक अध्ययन शील तथा विचारक प्रकृति के नामवर सिंह हिन्दी में अपभ्रंश साहित्य से आरम्भ कर निरन्तर समसामयिक साहित्य से जुड़े हुए आधुनिक अर्थ में विशुद्ध आलोचना के प्रतिष्ठापक तथा प्रगतिशील आलोचना के प्रमुख हस्ताक्षर थे।

अध्यापन एवं लेखन के अलावा उन्होंने 1965 से 1967 तक जनयुग (साप्ताहिक) और 1967 से 1990 तक आलोचना (त्रैमासिक) नामक दो हिन्दी पत्रिकाओं का सम्पादन भी किया।

कृतियाँः बक़लम ख़ुद, हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, पृथ्वीराज रासो की भाषा, आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ- 1954, छायावाद- 1955, इतिहास और आलोचना- 1957, **कहानीः** नयी कहानी- 1964, कविता के नये प्रतिमान- 1968, दूसरी परम्परा की खोज- 1982, वाद विवाद संवाद- 1989, आलोचक के मुख से- 2005, कविता की ज़मीन और ज़मीन की कविता- 2010, हिन्दी का गद्यपर्व- 2010, प्रेमचन्द और भारतीय समाज- 2010, ज़माने से दो दो हाथ- 2010, साहित्य की पहचान- 2012, आलोचना और विचारधारा- 2012, आलोचना और संवाद- 2018

आलोचनाः आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ- 1954, छायावाद- 1955, इतिहास और आलोचना- 1957, **कहानीः** नयी कहानी- 1964, कविता के नये प्रतिमान- 1968, दूसरी, परम्परा की खोज- 1982, वाद विवाद संवाद- 1989

सम्मानः साहित्य अकादमी पुरस्कार- 1971 'कविता के नये प्रतिमान' के लिए शलाका सम्मान हिन्दी अकादमी, दिल्ली की ओर से 'साहित्य भूषण सम्मान' उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान की ओर से शब्दसाधक शिखर सम्मान- 2010 ('पाखी' तथा इंडिपेंडेंट मीडिया इनिशिएटिव सोसायटी की ओर से), महावीरप्रसाद द्विवेदी सम्मान- 21 दिसम्बर 2010

बक़लम ख़ुदः 1951ई०(व्यक्तिव्यंजक निबन्धों का यह संग्रह लम्बे समय तक अनुपलब्ध रहने के बाद सन् 2013ई० में भारत यायावर के सम्पादन में राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली से प्रकाशित पुस्तक प्रारम्भिक रचनाएँ में नामवर जी की उपलब्ध

कविताओं तथा विविध विधाओं की गद्य रचनाओं के साथ संकलित होकर पुनः सुलभ हो गया है।)

Critical Overview / अवलोकन

आधुनिक युग को गद्य की प्रतिस्थापना का श्रेय जाता है। जिस विश्वास, भावना और आस्था पर हमारे युग की बुनियाद टिकी थी उसमें कहीं न कहीं अनास्था, तर्क और विचार ने अपनी सेंध लगाई। कदाचित् यह सेंध अपने युग की माँग थी जिसका मुख्य साधन गद्य बना। यही कारण है, कवियों ने गद्य साहित्य में भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया।

हिन्दी गद्य का आरम्भ भारतेंदु हरिश्चंद्र से माना जाता है। वह कविता के क्षेत्र में चाहे परम्परावादी थे पर गद्य के क्षेत्र में नवीन विचारधारा के पोषक थे। उनका व्यक्तित्व इतना समर्थ था कि उनके इर्द-गिर्द लेखकों का एक मण्डल ही बन गया था। यह वह मण्डल था जो हिन्दी गद्य के विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। हिन्दी गद्य के विकास में दशा और दिशा की आधारशिला रखने वालों में इस मण्डल का अपूर्व योगदान है। इन लेखकों ने अपनी बात कहने के लिए निबंध विधा को चुना। सामयिक निबंधों में नई चिंतन पद्धति और अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। अज्ञेय, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, निर्मल वर्मा, रमेशचंद्रशाह, शरद जोशी, जानकी वल्लभ शास्त्री, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', नेमिचंद्र जैन, विष्णु प्रभाकर, जगदीश चतुर्वेदी, डॉ. नामवर सिंह और विवेकी राय आदि ने हिन्दी गद्य की निबंध परंपरा को न केवल बढ़ाया है, बल्कि उसमें विशिष्ट प्रयोग किए हैं। समीक्षात्मक निबंधों में गजानन माधव मुक्तिबोध का नाम आता है। उनके निबंधों में बौद्धिकता है और वयस्क वैचारिकता तबोध के 'नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध' नए साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, 'समीक्षा की समस्याएँ' और 'एक साहित्यिक की डायरी' नामक निबंध विशेष उल्लेखनीय हैं। डॉ. रामविलास शर्मा के निबंध शैली में स्वच्छता, प्रखरता तथा वैचारिक संपन्नता है। हिन्दी निबंध में व्यंग्य को रवींद्र कालिया ने बढ़ाया है। नए निबंधकारों में रमेशचंद्र शाह का नाम तेजी से उभरा है।

Recap / पुनरावृत्ति

- डॉ. रामविलास शर्मा ने अपने उग्र और उत्तेजनापूर्ण निबन्धों से हिन्दी समीक्षा को एक गति प्रदान की है
- डॉ. रामविलास शर्मा के निबंध शैली में स्वच्छता, प्रखरता तथा वैचारिक संपन्नता है
- अज्ञेय के निबंधों में उनका समृद्ध व्यक्तित्व झलकता हुआ प्रतीत होता है
- अज्ञेय हिन्दी साहित्य में नए प्रयोगों का मार्ग प्रशस्त किया
- भाषा को लेकर जितना गहरा विश्लेषण अज्ञेय के निबंधों में मिलता है
- नामवर सिंह विशुद्ध आलोचना के प्रतिष्ठापक तथा प्रगतिशील आलोचना के प्रमुख हस्ताक्षर थे
- परसाईजी व्यंग्य के अनुरूप ही भाषा लिखने में कुशल हैं
- प्रगतिशील साहित्यकारों में अमृतराय महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. धार और किनारे किसका निबंध संग्रह हैं?
2. 'बक़लम ख़ुद' किस प्रकार के निबन्ध संग्रह है?
3. 'बक़लम ख़ुद' के रचनाकार कौन है?
4. हरिशंकर परसाई के साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित रचना कौन-सी है?
5. सदाचार का तावीज किसकी रचना है?
6. 'कलम का सिपाही' किस पर लिखी गयी जीवनी है?
7. तब की बात और थी किसका निबंध संग्रह है?

Answers/ उत्तर

1. अज्ञेय के महत्वपूर्ण निबंध संग्रह हैं- 'धार और किनारे'।
2. 'बक़लम ख़ुद' व्यक्तिव्यंजक निबन्धों का संग्रह है।
3. नामवर सिंह।
4. 'विकलांग श्रद्धा का दौर'
5. हरिशंकर परसाई
6. प्रेमचंद
7. हरिशंकर परसाई

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. अज्ञेय के निबंधों में उनके समृद्ध व्यक्तित्व झलकता हुआ प्रतीत होता है, व्यक्त कीजिए।
2. हिन्दी के प्रमुख निबंधकार पर पर्चा लिखिए।।
3. वर्तमान निबंध सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक समस्यायों को उठाते हुए बड़े ही जीवन्त रूप में प्रस्तुत किया है।
4. हिन्दी के प्रमुख निबंधकारों की परिचय दीजिए।
5. व्यक्त कीजि कि हिन्दी निबंध साहित्य में नामवर सिंह का महत्वपूर्ण योगदान है।
6. व्यंग्य निबंधकार के रूप में हरिशंकर परसाई का परिचय दीजिए।

इकाई 3

अन्य गद्य विधाओं का विकास (संस्मरण, रेखाचित्र, यात्रावृत्त, जीवनी, आत्मकथा, रिपोर्ताज)

Learning Outcomes / अध्ययन परिणाम

- हिन्दी के समकालीन संस्मरण से परिचय प्राप्त करता है
- हिन्दी साहित्य में रेखाचित्र के आरंभ और विकास समझ सकता है
- हिन्दी के महत्वपूर्ण यात्रा वृत्तांतकारों के बारे में समझ सकता है
- आत्मकथा की परिभाषा तथा विशेषता से परिचय प्राप्त करता है
- 1942 के बाद हिन्दी साहित्य में आत्मकथा के आरंभ और विकास के बारे में समझ सकता है

Prerequisites / पूर्वापेक्षा

हिन्दी में संस्मरण, रेखाचित्र, यात्रावृत्त, जीवनी और रिपोर्ताज जैसी साहित्य विधाओं का प्रचलन आधुनिक युग में पश्चिमी प्रभाव और उसके वातावरण में हुआ है। अतः कहा जा सकता है कि गद्य साहित्य की प्रकीर्ण अथवा गौण विधाओं में ये उपर्युक्त विधाएँ मुख्य माने जाते हैं। आधुनिक युग को जटिलताओं, विषमताओं प्रयोगधर्मिता एवं गतिशील दृष्टि के दबाव से इन गद्य विधाओं का जन्म हुआ है।

Keywords / मुख्य बिन्दु

संस्मरण, रेखाचित्र, यात्रावृत्त, जीवनी, आत्मकथा, रिपोर्ताज

Discussion / चर्चा

संस्मरण

संस्मरणकार भूतकाल एवं वर्तमान काल के बीच के पुल जैसे रहते हैं। अथवा लेखक वर्तमान काल में बैठकर भूतकाल के बारे में लिखते हैं। हम मनुष्य के ऐसे कुछ बीते क्षण, घंटे, दिन होते थे, जिसके अनुभव वर्तमान काल के जीवन में हमारे साथ जीवित हैं।

सन् 1954 में जैनेन्द्र कुमार रचित 'गांधी कुछ स्मृतियाँ', 1955 में रामवृक्ष बेनीपुरी कृत 'मुझे याद है', 1957 में लिखा 'जंजीरें और दीवारें' आदि आरंभ काल के विशिष्ट संस्मरण है।

गद्य के अन्य साहित्यिक विधाओं के समान संस्मरण भी आधुनिक साहित्य है। यह साहित्य रूप स्वतंत्रता से पहले शुरु होकर, धीरे-धीरे क्रमिक विकास पाकर, अब शक्तिशाली रूप धारण कर आगे बढ़ते हैं।

रेखाचित्रः

जैसे चित्रकार तूलिका द्वारा चित्र खींचते है वैसे लेखक अपने कलम से रेखाचित्र लिखते हैं। रेखाचित्र के आरंभिक काल की स्थिति अब भी नहीं बदला है। आधुनिक काल में रेखाचित्र की भाषा और शैली में कुछ परिवर्तन अवश्य दिखायी पड़ता हैं। विषय की विविधता वर्तमान रेखाचित्र का एक विशिष्ट गुण है।

रेखाचित्र जीवन से घनिष्ठ संबंध रखता है। रेखाचित्र मनोरंजक होने के समान चिंतापरक भी होता है। उदाहरणार्थ रामवृक्ष बेनीपुरी का लिखा हुआ 'रज़िया' नामक रेखाचित्र लीजिए। जिसमें हिन्दू-मुसलमान मैत्री भाव तथा उत्तम आत्मीयता का झलक परिलक्षित है। ऐसी रेखाचित्र मनोरंजन के साथ सामाजिक एकता का दायित्व भी निभा देता है।

महादेवी वर्मा 1941 में कृत 'अतीत के चलचित्र', 1947 में कृत 'स्मृति की रेखाएँ', रामवृक्ष बेनीपुरी 1946 में कृत 'माटी की मूरतें', 1950 में कृत 'गेहूँ और गुलाब के फूल', देवेंद्र सत्यार्थी 1949 में कृत 'रेखाएँ बोल उठी', बनारसीदास चतुर्वेदी 1952 में कृत 'रेखाचित्र', उपेंद्रनाथ अश्क 1955 में कृत 'रेखाएँ और चित्र', सेठ गोविंददास 1959 में कृत 'स्मृति कण', जगदीश चन्द्र माथुर 1963 में कृत 'दस तस्वीरें', शिवपूजन सहाय 1965 में कृत 'वे दिन वे लोग', विष्णु प्रभाकर 1965 में कृत 'कुछ शब्द-कुछ रेखाएँ', कृष्णा सोबती 1977 में कृत 'हम हशमत', रामविलास शर्मा 1985 में कृत 'विराम चिह्न' आदि उल्लेखनीय रेखाचित्र है।

यात्रावृत्तः

यात्रा वृत्तांत समकालीन साहित्य की नवीन विधा है। यात्रावृत्त या वृत्तांत को अंग्रेजी में Travelogue कहते हैं। इसका आरम्भ आधुनिक काल में हुआ है। किसी यात्रा के पश्चात लेखक आकर्षक भाषा और शैली में लिखे जाने वाली प्रामाणिक रचना को यात्रावृत्त कहते हैं। यात्रा करना मानव की मूल प्रवृत्ति हैं। मनुष्य निरंतर घूम फिरकर रहना चाहते हैं। यात्रावृत्त में यायावर अपने अनुभवों, सौंदर्यबोध का प्रकाशन करता है।

राहुल सांकृत्यायन हिन्दी के सबसे प्रसिद्ध यायावर (यात्री) है। उन्होंने कई यात्रा वृत लिखे हैं, जिसमें 1948 में लिखा 'घुम्मकड़ शास्त्र' सबसे उल्लेखनीय ग्रंथ है।

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय जाने-माने वाले यात्रियों में एक है। उनका 1953 में लिखा 'अरे यायावर रहेगा याद' और 1960 में लिखा 'एक बूँद सहसा उछली' आदि महत्वपूर्ण यात्रा वृत्त है। सन् 1952 में रामवृक्ष बेनीपुरी कृत 'पैरों में पंख बाँधकर' विचारणीय यात्रा वृत्तांत के रूप में गिना जाता है।

यशपाल 1953 में लिखा 'लोहे की दीवार के दोनों ओर', मोहन राकेश 1953 में लिखा 'आखिरी चट्टान तक', 1964 में प्रभाकर माचवे लिखा 'गोरी नज़रों में हम' आदि महत्वपूर्ण यात्रा वृत्तांत हैं।

बालकृष्ण भट्ट, श्रीमती हरदेवी, भगवानदास वर्मा, स्वामी मंगलानन्द, श्रीधर पाठक, उमा नेहरु, लोचन प्रसाद पाण्डेय, देवीप्रसाद खत्री, गोपालराम गहमरी, गदाधर सिंह, स्वामी सत्यदेव, राहुल सांकृत्यायन, धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, रामधारीसिंह दिनकर, अज्ञेय, देवेन्द्र सत्यार्थी, नगेन्द्र, यशपाल, विनय मोहन शर्मा आदि हिन्दी के प्रमुख यात्रा वृत्तांतकार है। अज्ञेय की एक बूँद सहसा उछली, निर्मल वर्मा कृत चीड़ों पर चाँदनी जैसे उच्च कोटि के यात्रा वृत्तांत हिन्दी में उपलब्ध है।

समकालीन साहित्य में यात्रा वृत्तांत की भाषा-शैली में समयानुसार परिवर्तन अवश्य हुए हैं। यात्रा वृत्तांत का आकर्षण बढ़ाने के लिए आजकल उसे वीडियो-ओडियो द्वारा रंगीन बना देता है। इससे हमें अपरिचित स्थान, जाति, वर्ग, धर्म, भाषा, संस्कृति, सभ्यता, वातावरण, आर्थिक स्थिति आदि सभी की जानकारी आसानी से प्राप्त होती है।

जीवनीः

जीवनी में व्यक्ति के संपूर्ण जीवन का वर्णन होता है। जीवनी में व्यक्ति, इतिहास और साहित्य-प्रभाव पूर्ण समन्वय होता है। जीवनी लेखक जिस व्यक्ति के जीवन चरित लिखते है, उस व्यक्ति से जुड़ी संपूर्ण जानकारी होना आवश्यक है। जिस तथ्य या घटना जीवनी में अनिवार्य है, उसकी जानकारी कभी भी छूट न जाये।

साहित्यिक चरित्रों पर आधारित जीवनी में प्रेमचन्द के पुत्र अमृतराय, प्रेमचन्द के बारे में लिखी गयी 'कलम का सिपाही' का विशेष महत्व है। विष्णु प्रभाकर बंगला लेखक शरद चन्द्र चटर्जी के बारे में लिखी गयी आवारा मसीहा, विख्यात लेखक कमलेश्वर के बारे में उनकी पत्नी गायत्री कमलेश्वर सन् 2005 में लिखी गयी मेरे हम सफर आदि विशेष उल्लेखनीय जीवनियाँ है।

रामविलास शर्मा कृत-निराला की साहित्य साधना, पृथ्वी सिंह कृत लेनिन, कार्ल मार्क्स, राहुल सांस्कृत्यायन कृत नए भारत के नए लोग, विष्णु प्रभाकर कृत आवारा मसीहा आदि हिन्दी की महत्वपूर्ण जीवनी हैं।

जीवनी अन्य गद्य विधाओं के समान आधुनिक साहित्य विधा है। हिन्दी में पुराने समय में हमारे महात्माओं के बारे में अनेक उत्तम जीवनी लिखी थी। उदाहरणार्थ गाँधीजी के जीवन

से संबंधित सैकड़ों जीवनियाँ लिखा है, जिसमें कुछ बड़ी ख्याति भी पायी है। लेकिन आजकल पहले के जैसे महत्वपूर्ण जीवनी की रचना नहीं हो रही हैं ।

आत्मकथाः

आत्मकथा हिन्दी के नव विकसित साहित्य विधा है। हिन्दी की आत्मकथा को अंग्रेज़ी में Autobiography कहती हैं। आत्मकथा वास्तविक जीवन पर आधारित साहित्य है। आत्मकथा का सबसे बड़ा गुण ईमानदारी है। सत्यता उसका मूलाधार है। आत्मकथाकार का मुख्य उद्देश्य अपने मन-मस्तिष्क पर संचित अपनी विशेष बातों को समाज को परिचय कराना होता है। पहले कह चुका है कि आत्मकथा व्यक्ति अपने आप लिखने वाला साहित्य विधा है। एक आदमी आत्मकथा लिखते समय वह बीती हुई जीवन में दोबारा जीता है।

हिन्दी में वर्तमान काल में आत्मकथा कम लिखी जाती हैं। इसका मुख्य कारण तकनीकी का विकास है। आजकल महात्माओं की आत्मकथा उचित समय, यथा-तथा टेलीविज़न, इंटरनेट, फ़ेसबुक, टीट्वर, इन्स्टाग्राम जैसी नव माध्यमों द्वारा प्रचारित-प्रसारित की जाती है। वर्तमान समय में अखबार पढ़ने की आदत कम होती आ रही है। आत्मकथा, इतिहास, जीवनी जैसे पुस्तक पढ़ने की तात्पर्य नौजवानों कम हो गया है।

हरिभाऊ उपाध्याय सन् 1946 में कृत साधना के पथ पर, राहुल सांकृत्यायन सन् 1946 में कृत मेरी जीवन यात्रा, राजेन्द्र प्रसाद सन् 1947 में कृत आत्मकथा, यशपाल सन् 1951 में कृत सिंहावलोकन, चतुर्सेन शास्त्री सन् 1956 में कृत यादों की परछाइयाँ, उग्र सन् 1960 में कृत अपनी खबर, सुमित्रानंदन पंत सन् 1963 में कृत साठ वर्ष एक रेखांकन, हरिवंश राय बच्चन सन् 1969 में कृत क्या भूलूँ क्या याद करूँ, रामविलास शर्मा सन् 1983 में कृत घर की बात, नगेन्द्र सन् 1988 में कृत अर्ध कथा, कमलेश्वर सन् 1992 में कृत जो मैंने जिया, रवीन्द्र कालिया सन् 2000 में कृत गालिब छुटी शराब, भीष्म साहनी सन् 2003 में कृत आज के अतीत, नरेन्द्र मोहन सन् 2013 में कृत करबद्ध निरंतर आदि हिन्दी की उल्लेखनीय आत्मकथाएँ हैं। आज हिन्दी की आत्मकथा विधा अजस्र प्रवहमान है।

हिन्दी साहित्य कोश में आत्मकथा की परिभाषा इस प्रकार दिया है- 'आत्मकथा लेखक के अपने जीवन का संबंध वर्णन है।' इसमें लेखक के जीवन के महत्वपूर्ण संदर्भों का चित्रण होता है। आत्मकथा विशिष्ट प्रकार का आत्मावलोकन है।

आत्मकथा में लेखक अपने गुण लिखने के समान अवगुण भी लिखते होता हैं। आत्मकथा व्यक्ति स्वयं अपने जीवन के बारे में रचते हैं। आत्माकथा के रूप में लेखक अपनी कथा लिखकर आत्मा परिष्करण करता हैं। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की आत्मकथा - मेरी जीवन गाथा - अनेक विशेषताएँ रखने वाली उच्च श्रेणी की आत्मकथ्य हैं।

रिपोर्ताजः

रिपोर्ताज शब्द का अर्थ होता है सरस और भावात्मक अंकन। रिपोर्ताज को अंग्रेज़ी में Report कहते हैं। किसी परिपाटी, घटना, संस्था आदि की कलात्मक रीति में तैयार करने वाले विवरण को रिपोर्ताज कहते हैं। रिपोर्ताज गद्य की आधुनिक विधा है। हिन्दी में कई महान रिपोर्ताजकार है। धर्मवीर भारती, प्रकाशचन्द्र गुप्त, उपेन्द्रनाथ अश्क, रामनारायण उपाध्याय, विष्णुकान्त शास्त्री, उदयन शर्मा, लक्ष्मीकान्त वर्मा, अमृतराय, निर्मल वर्मा, जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी, विष्णु प्रभाकर, कुबेरनाथ राय, प्रभाकर माचवे, कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, अमृतराय, रांगेय राघव, प्रकाश चन्द्र गुप्त आदि रिपोर्ताजकार के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

Critical Overview / अवलोकन

गद्य हमारी स्वाभाविक अभिव्यक्ति का माध्यम है। गद्य के माध्यम से ही हम अपने दैनिक जीवन के सभी कार्यों को संपन्न करते हैं। आज के हिन्दी गद्य साहित्य के अंतर्गत अन्य अनेक विधाओं में प्रचुर मात्रा में रचनाएँ हो रही है। इनमें संस्मरण, रेखाचित्र, जीवनी, यात्रावृत्त और रिपोर्ताज आदि लेखन का माध्यम गद्य ही होता है। गद्य का क्रमिक विकास हिन्दी के आधुनिक काल के आरंभ से हुआ।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Recap / पुनरावृत्ति

- डॉ. नामवर सिंह के बारे में डॉ.विश्वनाथ त्रिपाठी लिखा गया -हक अदा न हुआ- वर्तमान काल के श्रेष्ठ संस्मरणों में एक हैं
- स्मृति की रेखाएँ - महादेवी वर्मा रचित प्रौढ़-गंभीर संस्मरण है
- राहुल सांकृत्यायन ने 1948 में कृत 'घुम्मकड़ शास्त्र' उल्लेखनीय यात्रा वृत्तांत है
- अज्ञेय 1953 में लिखा 'अरे यायावर रहेगा याद' महत्वपूर्ण यात्रा वृत्त है
- सन् 1952 में रामवृक्ष बेनीपुरी ने 'पैरों में पंख बाँधकर' यात्रा वृत्त लिखा है
- मोहन राकेश 1953 में लिखा 'आखिरी चट्टान तक' गौरवपूर्ण यात्रा वृत्त है
- अज्ञेय कृत 'एक बूँद सहसा उछली' सुप्रसिद्ध यात्रा वृत्त है

Objective questions/ वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. अज्ञेय कृत भारतीय यात्राओं पर आधारित यात्रावृत्तांत का नाम बताइए।
2. 'पैरों में पंख बाँधकर' किसका यात्रा वृत्तांत है?
3. 'एक बूँद सहसा उछली' किसकी लिखी यात्रा वृत्तांत है?
4. निर्मल वर्मा के प्रसिद्ध यात्रा वृत्तांत की नाम बताइए।
5. 'आखिरी चट्टान तक' किसका यात्रा वृत्तांत है?
6. तरुण के स्वप्न नामक आत्मकथा के लेखक कौन है?
7. सिंहावलोकन किसकी आत्मकथा है?
8. 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' शीर्षक आत्मकथा के लेखक कौन है?

Answers/ उत्तर

1. अरे यायावर रहेगा याद
2. बेनीपुरी
3. अज्ञेय
4. धुंध से उठती धुन और चीड़ों पर चांदनी
5. मोहन राकेश
6. सुभाषचंद्र बोस
7. यशपाल
8. हरिवंश राय बच्चन

Assignments/ प्रदत्त कार्य

1. आपको सबसे अधिक आकर्षित रेखाचित्र की विशेषताएँ उल्लेखित कीजिए।
2. हिन्दी में यात्रा वृत्तांत का उद्‌भव और विकास पर एक लेख लिखिए।
3. हिन्दी के प्रसिद्ध आत्मकथाओं का परिचय दीजिए।
4. आपको प्रभावित आत्मकथा के बारे में एक टिप्पणी लिखिए।
5. रेखाचित्र और संस्मरण में कौन-सी समानताएँ हैं?
6. यात्रा विवरण किन-किन नामों में जानी जाती है?
7. महात्माओं की जीवनियाँ मार्गदर्शक है- कैसे?
8. जीवनी और आत्मकथा के अंतर समझाइए।

Reference/ सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
2. प्रवासी की डायरी - हरिवंश राय बच्चन।
3. मेरी जेल डायरी - यशपाल।
4. आखिरी चट्टान तक - मोहन राकेश।

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

സർവ്വകലാശാലാഗീതം

വിദ്യയാൽ സ്വതന്ത്രരാകണം
വിശ്വപൗരരായി മാറണം
ഗ്രഹപ്രസാദമായ് വിളങ്ങണം
ഗുരുപ്രകാശമേ നയിക്കണേ

കൂരിരുട്ടിൽ നിന്നു ഞങ്ങളെ
സൂര്യവീഥിയിൽ തെളിക്കണം
സ്നേഹദീപ്തിയായ് വിളങ്ങണം
നീതിവൈജയന്തി പാറണം

ശാസ്ത്രവ്യാപ്തിയെന്നുമേകണം
ജാതിഭേദമാകെ മാറണം
ബോധരശ്മിയിൽ തിളങ്ങുവാൻ
ജ്ഞാനകേന്ദ്രമേ ജ്വലിക്കണേ

കുരീപ്പുഴ ശ്രീകുമാർ

SREENARAYANAGURU OPEN UNIVERSITY

Regional Centres

Kozhikode
Govt. Arts and Science College
Meenchantha, Kozhikode,
Kerala, Pin: 673002
Ph: 04952920228
email: rckdirector@sgou.ac.in

Thalassery
Govt. Brennen College
Dharmadam, Thalassery,
Kannur, Pin: 670106
Ph: 04902990494
email: rctdirector@sgou.ac.in

Tripunithura
Govt. College
Tripunithura, Ernakulam,
Kerala, Pin: 682301
Ph: 04842927436
email: rcedirector@sgou.ac.in

Pattambi
Sree Neelakanta Govt. Sanskrit College
Pattambi, Palakkad,
Kerala, Pin: 679303
Ph: 04662912009
email: rcpdirector@sgou.ac.in

हिन्दी साहित्य का इतिहास 1942 के बाद

COURSE CODE: B21HD03DC

YouTube

Sreenarayanaguru Open University
Kollam, Kerala Pin- 691601, email: info@sgou.ac.in, www.sgou.ac.in Ph: +91 474 2966841